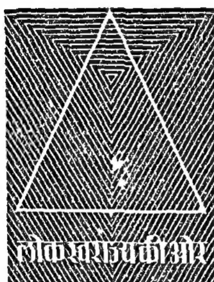
लोक स्वराज्य की ओर

• सर्वेक्षण • मूल्यांकन • भावी योजनायें



प्रकाशक

राजस्थान पंचायत राज संघ

जयपुर

• प्रकाशक
प्रधान मन्त्री
राजस्थान पंचायत राज संघ
पार स्कीम रोड जयपुर

• प्रकाशन तिथि
२५ अगस्त, १९६६

• अखिल भारतीय पंचायत राज परिषद् द्वारा दिनांक २५ २६ अगस्त को जयपुर में आयोजित क्षेत्रीय संगोष्ठी के अवसर पर प्रकाशित

• मूल्य
दस रुपये

• मुद्रक
नवल प्रिंटिंग प्रेस, जयपुर
मातृभूमि प्रेस जयपुर



- राष्ट्रपति
- उपराष्ट्रपति
- प्रधानमंत्री
- राजस्थान के राज्यपाल
- पंजाब के राज्यपाल

राष्ट्रपति

राष्ट्रपतिजी को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि अखिल भारतीय पंचायत परिषद्, नई दिल्ली के तत्वावधान में राजस्थान पंचायत राज संघ, जयपुर द्वारा क्षत्रीय संगोष्ठी एवं सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है।

इस अवसर पर राष्ट्रपतिजी अपनी शुभ कामनायें भेजते हैं।

ह० रा० रामसुब्रह्मण्यम
अवर सचिव

उपराष्ट्रपति

यह खुशी की बात है कि आप अखिल भारतीय पंचायत परिषद् नई दिल्ली के तत्वावधान में आगामी २५-२६ अगस्त १९६६ को राजस्थान पंचायत राज संघ जयपुर द्वारा एक क्षेत्रीय गोष्ठी एवं सम्मेलन का आयोजन करने जा रहे हैं। इस अवसर पर गोष्ठी के विचारणीय विषयों से सम्बन्धित स्मारिका भी प्रकाशित होगी।

मैं आपके सम्मेलन तथा स्मारिका की सफलता के लिए हार्दिक शुभ कामनायें भेजता हूं।

आपका
जाकिरहुसैन

प्रधानमंत्री

प्रधानमंत्रीजी आपको धन्यवाद देती हैं और पंचायती राज के विभिन्न पहलुओं पर विचार विमर्श करने के लिए जयपुर में आप जिस क्षेत्रीय संगोष्ठी का आयोजन कर रहे हैं, उसकी सफलता के लिए अपनी शुभ कामनायें भेजती हैं।

ह० एच० वाई० शारदाप्रसाद
(प्रधानमंत्रीजी के उप सूचना सलाहकार)

राजस्थान के राज्यपाल

खेद है कि अस्वस्थ होने के कारण मैं कुछ अधिक नहीं लिख सकता। आशा करता हूं कि गोष्ठी सम्पन्न होगी और राजस्थान में जो पंचायती राज के विषय में सारे देश में अग्रगण्य रहा है इस काम को आगे बढ़ाने की नयी दिशायें खुलेंगी। निश्चय ही आपको अपने अध्यक्ष श्री जयप्रकाशनारायण से बहुत उपयोगी परामर्श मिलेंगे।

भवदीय
सम्पूर्णानन्द

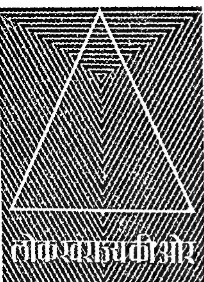
पंजाब के राज्यपाल

यह बड़े हर्ष का विषय है कि भारतीय पंचायत राज परिषद् देश में पंचायत राज के विभिन्न पक्षों पर विचार विमर्श करने के लिए एक क्षेत्रीय संगोष्ठी का आयोजन कर रही है। भारत में पंचायत राज व्यवस्था पुरातनकाल से चली आई है। यद्यपि विदेशी शासनकाल में इनको निर्जीव बना दिया गया था परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त पंचायतों को लोकतंत्र की सुदृढ़ आधारशिला के रूप में स्थापित कर इन्हें बुनियादी गणतंत्र का रूप प्रदान किया गया।

पंचायतों ने राष्ट्र विकास कार्यक्रमों में प्रशंसनीय योग दिया है। वर्तमान समय की मांग है कि देश से मुनाफाखोरी, अनुचित भंडार और मिलावट आदि अभिशापों को समाप्त करने की दिशा में पंचायतें दलबन्दी से ऊपर उठकर सरकार का हाथ बटायें।

इस क्षेत्रीय संगोष्ठी की सफलता के लिए मेरी शुभ कामनायें आपके साथ हैं।

धर्मवीर
राज्यपाल, पंजाब



उलटा पिरामिड
सीधा पिरामिड

हमारा लोकतन्त्र बहुत सकुचित आधार पर टिका हुआ है। यह एक ऐसे उलट पिरामिड की तरह है जो सिर के बल खड़ा है। प्रत्यक्षत हमारा काम है चित्र को ठीक करना और पिरामिड को फिर सही आधार पर खड़ा करना। केवल यह तथ्य कि हर बालिग भारतीय को वोट देने का हक है, शासन पद्धति के पिरामिड को व्यापक आधार नहीं देता।

× × × ×

समाज के राजनीतिक ढाचे का ही सादृश्य उलटे पिरामिड से नहीं है, आर्थिक ढाचे की भी तस्वीर वैसी ही बेतुकी है।

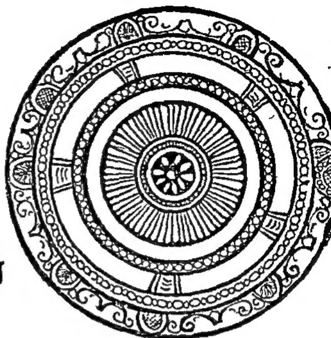
× × × ×

इसलिए ऐसा हर व्यक्ति, जो इस सवाल पर जरा भी गम्भीरता से सोचने को तैयार है, स्वीकार करेगा कि सिर के बल खड़े राजनीतिक पिरामिड को उलट कर तब तक सीधा नहीं किया जा सकता, जब तक आर्थिक पिरामिड को भी इसी प्रकार सही हालत में न किया जाय। दूसरे शब्दों में, बिना आर्थिक विकेन्द्रीकरण के राजनीतिक विकेन्द्रीकरण कारगर नहीं हो सकता।

—जयप्रकाशनारायण

अनुक्रम

खंड–१



पंचायती राज की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

लोकसत्तापरक आर्थिक, राजनीतिक संस्थाओं के उद्भव, विकास और ह्रास की प्रक्रियाएं

—श्री पृथ्वीसिंह मेहता

पूर्णतः स्वशासित लोकसत्तापरक आर्थिक, राजनैतिक संस्थाओं का अस्तित्व और उनकी परम्परा शायद विश्व में सबसे प्राचीन स्वस्थ और परिपुष्ट रूप में भारत में ही कार्य करती रही प्रतीत होती है, अतः लोकसत्तात्मक आनुशासनिक संस्थाओं को उद्भव और विकास एवं ह्रास की प्रक्रियाओं को टटोलने के लिए भारत में उसके आरम्भिक काल से लेकर अब तक बदलते हुए रूपों का एक विश्लेषण यहां प्रस्तुत करना कदाचित अप्रासङ्गिक न होगा।

भारतीय दृष्टि का वास्तविक प्रारम्भ भारत में जनमूलक संघटन वाले आर्यों के विभिन्न समूहों के आकर इस देश की विभिन्न प्राकृतिक प्रादेशिक इकाईयों में अपना-वास ग्रहण करने के बाद उन्हें पूर्णतः अपने २ जन का स्थाई निवास अपना जनपद स्वीकार कर लेने के बाद एकजनपद भावना से प्रेरित राष्ट्रीय दृष्टि का विकास करने की प्रक्रिया से होता है। यह प्रक्रिया उत्तर वैदिक काल में सम्पन्न हुई। आर्य लोग तब तक अपने आरम्भिक जनमूलक स्वरूप को प्रायः भुला चुके थे और एक प्रादेशिक भावनापरक दृष्टि का विकास करने लगे थे।

किन्तु उस दृष्टि के मूल बीज क्योंकि आर्यों के जनमूलक विश जनता के सामाजिक राजनीतिक संघटन में थे, अतः उसके स्वरूप को समझ लेना पहले आवश्यक है।

आर्यों का समाज आर्थिक उत्पादन की दृष्टि से भारत में आकर बसने से पहले ही अपनी आखेटक अवस्था को लांघ पशु पालक और कृषक अवस्था तक पहुँच चुका था। आखेटक जीवन की स्मृति उसमें बची थी, तो बहुत ही धुंधली। सामाजिक सम्बन्धों की दृष्टि से वह समाज सम्मिश्रण (Promiscuity) की दशाओं को पूरी तरह पार कर पारिवारिक रचना की स्थिति तक पहुँच चुका था। यह स्थिति समाज की पितृमूलकता का आरम्भ हो चुकना बताती है उससे पहले समाज मातृमूलक था, जन-समाज में स्त्री

पुरुष सम्बन्ध सभी स्थिर नहीं होते और एक आखेटक या पशुपालक समूहों के स्त्री पुरुष आपस में सब भाई-बहिन समझे जाने से स्त्री पुरुष सम्बन्धों के लिए उन्हें दूसरे समूहों से मैत्री या बान्धव सम्बन्ध स्थापित करने पड़ते। स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के लिए ऐसे मित्र जनों के बिना इस कार्य के लिए निश्चित सकेत स्थलों पर होने वाले उत्सवों मेलों आदि में ग्रामवार एकत्रित होने और इस प्रकार एक समूह की स्त्रियों की सारी सन्तान उस समूह के पुरुषों के भानजे या दौहित्र होते और अपने मातगोत्रों के नाम से ही समाज में पहिचाने जाते थे। वस्तुतः आर्यों का समाज पूरी तरह पितृमूलक पारिवारिक इकाईयों में सघटित हो चुका था तो भी स्त्री की स्थिति अभी उसमें चेरी या दासी होने की उपेक्षा बराबरी की सहकारिणी की सहचरी की, थी। समाज में और सम्पत्ति में उसका अधिकार पुरुष के समकक्ष और बराबरी का ही माना जाता था। इसके लिए उसे किसी न किसी पुरुष का आश्रयवर्ती होना अनिवार्य नहीं था। वह चाहती तब तक किसी पुरुष की आश्रिता या आर्थिक रूप से परमुखापेक्षिणी हुए बिना समाज में सम्मानपूर्वक स्वतन्त्र जीवन बिता सकती थी।

वैदिक समूह का सघटन

आर्यों के ये प्रारम्भिक समूह जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है जन कहलाते जो परिवार के समूल पर बन, किसी बड़े पूर्वज या विद्यमान पुरुष के नाम पर प्रसिद्ध हो जाते। जन फिर कई ग्रामों या टुकड़ियों में बट होते जो ग्राम कहलाती। ग्राम शब्द का मूल अर्थ जत्था या समुदाय था और ग्राम जहां बस गए वह जमीन भी पीछे ग्राम कहलाने लगी। ग्राम का एक चुना हुआ या वंशानुगत नेता ग्रामणी था। जनों के सम्पात प्रायः युद्धों आदि के अवसरों पर जब होते तो उनकी सेना ग्रामवार अर्थात् जत्थेवार जमा होती जिससे पीछे युद्ध ही सग्राम कहा जाने लगा।

ग्राम की तरह समूचे जन का भी नेता होता जो राजा कहलाता। वह जन या विश का राजा था भूमि का स्वामी नहीं। राज्य जनमूलक होने से जनराज्य कहलाता अर्थात् उसमें जन से बाहर के दूसरे किसी व्यक्ति को कोई अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता था, जब तक वह अपने मूल जन (अभिजन) का प्रत्याख्यान कर अपने निवास क्षेत्र के जन की सजातता ग्रहण न करले? विभिन्न जनों को मिलाकर आर्यों की समूची आबादी पंचजना अर्थात् सब जातियां कही जाती।

वैदिक राज्य सस्था

राजनीतिक सघटन राष्ट्र कहलाता जिसका अपना एक दण्ड होता। और राजा उस राष्ट्र का मुखिया। राजा का वरण विश करती और यदि वह पिछले राजा का बेटा हो तो उसे पसन्द कर राजा बनाने की स्वीकृति देती। वरण होने पर अभिषेक होता उसमें राजा विश के साथ कभी द्रोह न करने की प्रतिज्ञा करता तब राष्ट्र की थाती सौंपी जाती और किरीट पहिनाया जाता एव पुरोहित यह कहकर कि यह राज्य तुम्हें कृषि के लिए क्षेम के लिए, समृद्धि के लिए पुष्टि के लिए सौंपा गया, तुम इसके यन्ता यमन और ध्रुव धारण करता हो, उसके अभिषेक की आवित् अर्थात् घोषणा करता, जिसे निभाने के लिए उसे प्रजा से बलि या भाग लेने का अधिकार दिया जाता।

इस प्रकार से वरण राजा की आयु भर के लिए होता पर यदि वह सच्चा न निकले अर्थात्

अभिषेक के समय की हुई प्रतिज्ञा को पूरा न करे तो विश उसे पदच्युत और निर्वासित भी कर देती। निर्वासित राजा का कभी कभी वे फिर वरण भी कर देती।

राजा समिति की सहायता से राज्य करता, जो समूची विश की संस्था थी। राज्य की बाग डोर समिति के ही हाथ में रहती। समिति के सदस्य कौन कौन होते और कैसे चुने जाते थे इसका ठीक पता नहीं है, पर ग्रामणी, सूत रथकार और-कर्म्मार अर्थात् प्रत्येक गाव के ग्रामीण और शिल्पी उसमें अवश्य सम्मिलित होते थे। ये ग्राम समिति के आधार थे। समिति का एक पति या ईशान होता। राजा भी समिति में आता। राजा का वरण निर्वासन पुनर्वरण समिति द्वारा ही होता। राज्य का मन्त्र अर्थात् नीति निर्धारित करना भी समिति का ही काम होता। उसकी बैठकों में वाद-विवाद पूरी स्वतन्त्रता और शान्ति से होते वक्ता लोग युक्तियों और वक्तृत्व कला से सदस्यों को अपने पक्ष में करने का यत्न करते।

समिति के अतिरिक्त सभा नाम की एक संस्था भी राष्ट्र में होती जो समिति से छोटी होती। राष्ट्र के मुख्य न्यायालय का काम वही करती। प्रत्येक ग्राम में अपनी सभा होती जिसमें न केवल वृद्ध प्रत्युत जवान लोग भी भाग लेते। आवश्यक कार्यों के बाद ग्रामों की सभाओं में विनोद की बातें भी होतीं और तब वे सभाएं गोष्ठी का काम देतीं। गौओं की चर्चा गोष्ठियों में सबसे अधिक होती इसीसे उनका नाम गोष्ठी पड़ा।

समिति के सदस्य "राजानो राजकृत" अर्थात राजा बनाने वाले राजा कहलाते थे। किसी किसी राष्ट्र में राजा न होता और वे ही मिलकर राज्य करते। उस राष्ट्रों को संघ कहा जाता क्योंकि उनमें एक पुरुष के बजाय संघ का राज्य होता। उसका एक प्रसिद्ध उदाहरण अनुश्रुति में है। महाभारत युद्ध से ठीक पहले मथुरा प्रदेश में यादवों की दो जातियां—अन्धक और वृष्णि—रहती थीं। अन्धकों का राजा कंस मगध के राजा जरासन्ध का दामाद था। जरासन्ध ने मध्यप्रदेश पर साम्राज्य स्थापित कर लिया था कंस ने उसके सहारे से अपनी प्रजा को पीड़ित किया। अन्धकों ने तब अपने पड़ोसी वृष्णि यादवों से सहायता मांगी, और वृष्णियों के नेता वासुदेव कृष्ण ने कंस को मार डाला। तब जरासन्ध का कोप अन्धकों और वृष्णियों पर उमड़ा। वे लोग जरासन्ध का सामना न कर सके और मथुरा छोड़ द्वारका चले गये। वहां अन्धक वृष्णि-संघ स्थापित हुआ जिसके दो संघ मुख्य एक साथ चुने जाते। उग्रसेन एक संघ मुख्य था और वासुदेव कृष्ण दूसरा।

उत्तर वैदिक काल

किन्तु जैसा कि कहा जा चुका है खास भारतीय राष्ट्रीय संस्कृति का स्वरूप वैदिक काल के बाद उत्तर वैदिक काल में स्थिर हुआ और तभी भारतीय संस्कृति का व्यक्तित्व उभरना शुरू हुआ।

आर्यों की राज्यसंस्था में इस युग तक भीतर भीतर बड़ा परिवर्तन हो जाता है। जनों के बसने के स्थान जनपद कहलाते और राज्य अब जन के बजाय धीरे धीरे जनपद का माना जाने लगता है। जनपदों के नाम जनों के नामों से ही पड़े थे, जैसे जैसे कुरु पञ्चाल, चेदि वत्स, मगध शूरसेन अवन्ति यौधेय, मद्र शिबि, मालव, कैकय, गन्धार आदि। किन्तु नाम वही रहते हुए भी भीतर से उनकी राज्यसंस्था में धुरके-धुरके परिवर्तन हो गया। जानराज्य के बजाय अब वे जानपदराज्य बन गये। यद्यपि अब भी उन-उन

नामों के जनपदो म उन्हीं उन्हीं मूल जनो के वशज मुख्यत बसे हुए थे, तो भी लोगों ने अब सजातता की परवा करना छोड दिया। जो कोई भी व्यक्ति उन राष्ट्रों में से किसी में बस जाय और उनमें भक्ति रखे वह सजात हो या न हो अब उनकी प्रजा बन सकता था। जनपद में भक्ति का विचार उत्तर वैदिक काल के अन्त म पहले-पहल सुनाई देता है। धार्मिक अर्थ में उसी भक्ति शब्द का प्रयोग और पीछे होता है।

ऐतरेय ब्राह्मण में एक सन्दर्भ (८ १४) से यह पता मिलता है कि भारत के विभिन्न भागों में विभिन्न प्रकार की राज्यसस्थाएँ स्थापित हो गई थी। उस सन्दर्भ का सार यह है कि पूर्व के अर्थात् मगध आदि जनपदों के राजा अपने अपने को सम्राट कहते वहाँ साम्राज्य बनने की प्रवृत्ति थी। मध्यदेश के राजा राजा कहलाते, वहाँ साधारण राज्य थे। पजाब से सुराष्ट्र और विदर्भ तक अधिकतर सघराज्य थे। यह बड़े महत्व की सूचना है। हम देखेंगे कि लगभग ८०० ई० पू० से यह जो प्रवृत्ति प्रकट हुई सो प्राचीन काल के अन्त-लगभग ५४० ई० तक अर्थात् लगातार डेढ हजार बरस तक बनी रही।

जैन और बौद्ध धर्मों का उदय उन्ही सघ राज्यों के वातावरण में हुआ और उनके श्रमण सघ दर्नो का ढाँचा भी उन्हीं के शासन विधान के नमून पर बनाया गया।

दर्शन शास्त्र मे एकेश्वरवाद की कल्पना एकराजिक समाज के राजनीतिक ढाँचे के आधार पर ही उठना है। सघ राज्यों मे किसी एक स्थायी नियामक राजा की आवश्यकता नहीं थी। अत विश्व के भी किसी एक स्वयभू नियता की अनिवार्यता का प्रश्न नही उठ सकता था। भारतीय दर्शनशास्त्र म साख्य जैन और बौद्ध-दर्शनों की स्वतन्त्र चिन्तना वृत्ति इस प्रकार इन सघ राज्यों की ही देन थी।

महाजनपद युग

जनपदों के बाद म बहुत से छोटे जन-पदों के अपनी आर्थिक राजनीतिक समस्याओं के हल के लिए स्वेच्छा से मिलजाने या एक जन द्वारा प्रबल होकर आस पास के ऐसे जनो को जीत कर अपने साथ मिला लेने से बड़े बड़े जन पदों की रचना हुई।

बुद्ध से प्राय एक शताब्दी पहले ऐसे सोलह महाजन पदो की आठ जोडियों की गिनती प्रसिद्ध हुई—

आर्थिक सघटन और राज्यसस्था

जानपद राज्य में राज्य भूमि पर निर्भर हो गया था तो भी भूमि राज्य की नहीं कृषको की सम्पत्ति थी। राजा खेतों की उपज पर वार्षिक भाग या बलि ले सकता जगल और परती भूमि का निपटारा कर सकता और अस्वामिक सम्पत्ति पर अधिकार कर सकता था। इस राजभोग का वह निजी कार्यो के लिए भी उपयोग कर सकता। राजकीय भाग को ग्रामभोजक (गांव के मुखिया) या राजकीय महामात्य वसूलते। भूमि वैयक्तिक सम्पत्ति थी। उसका दाय विभाग दान और विक्रय हो सकता था। पर गांव का कोई व्यक्ति गांव के बाहर के किसी व्यक्ति को जमीन दे या बेच सकता था कि नहीं सो स्पष्ट नही है।

जमीदारियां नहीं थी कृषक ही भूस्वामी थे। ग्राम उन्हीं के समूह थे। प्रत्येक ग्राम में अनेक

कुल अर्थात् संयुक्त परिवार रहते । ३० से १००० कुलों तक के ग्रामों का उल्लेख है । कृषि ऊँचा पेशा गिना जाता था । भृतको अर्थात् भाड़े के श्रमिकों से भी खेती कराई जाती थी । एक व्यक्ति की जमीन पर ५ ५ सौ तक सलवाहों के मजदूरी करने का उल्लेख है । उन भृतकों का जीवन काफी कठिनाई का था । उन्हें रहने की जगह और अनाज अथवा मुद्रा के रूप में भृति मिलती । कृषि में श्रम विभाग भी हो चला था । उदाहरण के लिए बहुत लोगों का पेशा हल वाहन का ही था ।

ग्राम के लोग सामूहिक रूप से सिंचाई और अन्य सामूहिक कार्यों का प्रबन्ध करते । ग्रामभोजक रोज-सभा में ग्राम का प्रतिनिधि तथा ग्राम के सामूहिक जीवन का नेता होता, पर वह मनमानी नहीं कर सकता था । ग्राम के सभी लोग मिलकर सामूहिक कार्यों पर विचार और निर्णय करते । ग्राम सभाएँ सभा भवन और पान्थशालाएँ बनवातीं, बगीचे लगवातीं, सड़कों की मरम्मत करवातीं, तालाब खुदवातीं और उनके बाँध बंधवातीं । उनके निश्चय के अनुसार ग्राम के युवक बारी बारी मुफ्त मजदूरी करते । ग्रामों की उन सभाओं और उनके कार्यों में स्त्रियां भी खुल कर भाग लेतीं ।

शिल्प व्यवसायों की यथेष्ट उन्नति और श्रमविभाग हो गया था । प्रत्येक शिल्प या व्यवसाय में लगे लोगों का अपना संगठन था जिसे श्रेणि कहते । श्रेणि शब्द पहले-पहल उत्तर वैदिक वाङ्मय में मिलता और फिर प्राचीन काल के अन्त तक बराबर इसी-अर्थात् शिल्पियों के संगठित समूह के—अर्थ में बर्ता जाता है । महाजनपद युग के वाङ्मय में 'वड्ढकि कम्मार चम्मकार चित्रकार आदि अठारह श्रेणियां' प्रचलित मुहावरा ही था । एक-एक श्रेणी में हजार तक शिल्पी होते । प्रत्येक श्रेणी का एक प्रमुख या ज्येष्ठक चुना जाता । प्रत्येक शिल्प का संचालन और नियन्त्रण श्रेणि के हाथ में रहता । कच्चे माल की खरीद, तैयार की बिक्री, उपज और श्रमकाल का निर्धारण, मिलावट को रोकना, शिल्प सीखने वाले अन्तेवासिकों की शिक्षा के नियम, अन्तेवासिकों और भृतकों की भृति नियत करना आदि सब श्रेणि के हाथ में रहता । ये श्रेणियां जातें न थीं । श्रमविभाग के बढ़ने और व्यवसायों के स्थान विशेषों में केन्द्रित होने से यह प्रवृत्ति स्वाभाविक थी कि बेटा बाप के धन्धे में जाय, तो भी सदा वैसा न होता । श्रेणि के लोगों के अपने बेटों के अतिरिक्त दूसरे नवयुवकों के अन्तेवासिक बनने के बहुत दृष्टान्त इस युग के वाङ्मय में हैं ।

शिल्प और व्यापार के बढ़ने से अनेक नगरियां खड़ी हो गई थीं । नगरियों में व्यापारियों के संघ बन गए थे जो निगम कहलाते । उनके मुखिया श्रेष्ठी कहलाते जो प्रायः जीवन भर के लिए चुने जाते ।

निगम और श्रेणियां अपने सदस्यों की आर्थिक चर्या का संचालन तो करती ही, वे ग्रामों के साथ-साथ राज्यसंस्था की सबसे निचली इकाइयां भी थीं । वे अपने सदस्यों के लिए स्वयं नियम बनातीं, उन नियमों को चलातीं और न्यायालय का भी काम करतीं । ग्रामों की संस्था तो वैदिक काल से चली आती थी । वैदिक काल के ग्राम 'जन' की टुकड़ियां थे, अब वे भीतरी परिवर्तन द्वारा कृषकों के समूह बन गये । श्रेणी और निगम-संस्था भी ग्राम संस्था के नमूने पर ही बनीं ।

यों महाजनपद युग में भारत की प्रत्येक बस्ती की प्रजा अपने धन्धे के अनुसार विभिन्न समूहों में बटी हुई थी । प्रत्येक छोटा समूह अपनी भीतरी शासन में पूरी तरह स्वतन्त्र था । ये समूह-ग्राम श्रेणी और निगम—शासन की सबसे छोटी स्वतन्त्र इकाइयां थे ।

प्रत्येक नगर म ग्रनक श्र णिया होती । नगरों का विकास इसी युग म हुआ था इसलिए उनका प्रबन्ध और शासन इस युग का नई समस्या थी । इस युग में नगर सस्था का नाम भी निगम ही था-अगले युग मे जा कर उसका एक और नाम पूग ब्याज लिया गया ।

वदिक काल की राजसंस्था मे केन्द्रीय शासन में ग्रामणियों का जो पद था वह इस युग मे ग्रामणियो के साथ-साथ श्रेणीमुख्यों और निगम श्रेष्ठियो का भी था । प्रत्येक महत्व के कार्य म इस युग मे राजा नगमजानपदा की सलाह लता जो बाद म पौरजानपदा कहलान लगे । ऐसा प्रतीत होता है कि नैगमजानपदा या पौरजानपदा वदिक काल की समिति का नया रूप था—यह केन्द्रीय शासन म राजा का हाथ बटाने वाली सस्था थी ।

पूर्व नन्द युग की आर्थिक राजनीतिक सस्थाएँ

उत्तर वदिक और महाजनपद युगा में श्रेणी निगम आदि जो सस्थाए बनी हुई थीं उनके लिये इस युग के वाङमय में जातिवाचक सज्ञाए थी —निकाय समूह या वर्ग । निकाय का अर्थ था शृ खलाबद्ध समूह । अव्यवस्थित जमघट क अर्थ मे निचय कहा जाता था । निकाय और निचय दोनो समान गुण के नाम थे । श्रेणी और निगम दोना आर्थिक निकाय थे, उनमें विभिन्न कुला के परन्तु एक वृत्ति या जीविका वाले लोग होत थ । नगरा के सघ इस युग म पूग कहलाने लगे और उनकी यह परिभाषा थी कि विभिन्न कुलों तथा विभिन्न वृत्तियों वाल सघ पूग होत है (अष्टाध्यायी ५ ३ ११२ पर काशिका वृत्ति) । अर्थात् पूग प्रादेशिक सघ थे ये जिनम ग्रनक श्रेणियां और निगमो के प्रतिनिधि होते थे ।

गौतम धर्मसूत्र (११ २१) से पता चलता है कि कारुओं अर्थात् कारीगरों के अतिरिक्त कृषकों, वणिजों पशुपालकों और कुसीदिन (रुपया उधार देने वालो) की भी श्रेणियाँ थीं । एक जगह रहने वाले कारुओं की श्रेणियाँ बनना सरल था पर बिखर कर रहने वाले कृषकों की भी श्रेणियाँ होना उत्कृष्ट सामूहिक जीवन का सूचक था ।

पिछले युग के समान ग्राम श्रेणि निगम पूग आदि निकाय अपना भीतरी शासन स्वय चलाते अपने भीतर के विवाद निपटाने के लिए न्यायालय का काम करते, पर सबसे बढ़कर वे आपस म मिल कर जो समय या संविद् अर्थात् ठहराव करें वह समयधर्म यदि देश के मूल धर्म और व्यवहार कानून के विरुद्ध न हो तो उसे परिपालन करना राजा का कर्तव्य होता । कोई वर्गी अपने वर्ग के समय को तोड़ तो दण्ड पाता था । समय (सम् अय) का अर्थ था मिलकर किया हुआ ठहराव । या इन निकायो के ठहराव कानून थे । इन सभो म निश्चित विधियां थे प्रस्ताव रखने (कर्म वचन=कार्य का कहना) उस पर प्रकट या गुप्त रूप से मत लेन और बहुमत से निश्चय करने की पद्धति थी । ग्राम, श्रेणि निगम पूग आदि निकाय जो समयधर्म अर्थात् आपसी निश्चय द्वारा कानून बनाते वह भी ठीक पद्धति से विचार करके बनाया जाता यह यों ही चल जान वाला रिवाज नही था ।

राजकीय विनिश्चयस्थानों (न्यायालयों) में विनिश्चायक (न्यायाधीश) के साथ उद्वाहिका (जूरी) बैठती थी, और उसम प्रत्येक वर्गी के अपन ही वर्ग के अर्थात् प्रत्येक अभियुक्त के अपन निकाय के लोगो के बठने का नियम था ।

यों इन निकायों का जहा पूरे स्व शासन के अधिकार थे वहाँ जनपद के केन्द्राय शासन की भी य हो बुनियाद थ । वदिक काल की समिति की तरह इस युग में भी परिषद् या पौरजानपद नाम का निकाय समूचे जनपद के शासन को चलाने के लिए था । उसमे ग्रामणियों के अतिरिक्त श्रेणिमुख्य और निगम श्रेष्ठी आदि होते तथा राजा को उसके परामर्श के अनुसार चलना पडता । रामायण म राम को युवराज बनाने के लिए जुटाई गई राजा दशरथ की सभा का जो चित्र है उसम श्रेणिमुख्यों और निगम श्रेष्ठियों का विशिष्ट स्थान है ।

सामाजिक जीवन

सामाजिक ऊँच-नीच का चित्र यह था—"जातियाँ दो हैं, हीन जाति और उत्कृष्ट जाति । हीन जाति कौन सी ? चण्डाल जाति वेण जाति निषाद जाति 'पुक्कस जाति । उत्कृष्ट जाति कौनसी ? क्षत्रिय जाति ब्राह्मण जाति "। शिल्प दो हैं हीन शिल्प और उत्कृष्ट शिल्प । हीन शिल्प जसे नलकार शिल्प कुम्हार का शिल्प हरकारे का शिल्प चमार का शिल्प नाई का शिल्प और जो उन उन जनपदों म " अवज्ञात परिभूत हों । उत्कृष्ट शिल्प, जसे मुद्रागणना लेख अथवा उन उन जनपदों में कर्म दो हैं हीन कर्म जसे कोठा बनाने का काम (सूखे) फूल बटोरने का काम । उत्कृष्ट कम जसे कृषि वाणिज्य गोरक्षा' (विनय पिटक) ।

इससे स्पष्ट है कि कषक, बनिया, ग्वाला, हरकारा, सराफ, नाई आदि विभिन्न जनपदों की दशा के अनुसार ऊँचे नीचे काम और शिल्प थे, जातें नहीं । चण्डाल, वेण निषाद आदि वस्तुत अनार्य जातियाँ अर्थात नस्लें थीं । पर क्षत्रिय और ब्राह्मण कल्पित जातियाँ थीं । क्षत्रियों म अपने कुलों की उच्चता का भाव इतना परिपक्व हो चुका था कि वे अपने को जाति कहने लग थे और ब्राह्मण भी अपने को जाति गिनना चाहते थे, यद्यपि उनके जाति होने की बात विवादग्रस्त थी—बहुत से ब्राह्मण स्पष्ट कहते थ कि ब्राह्मण पन का जन्म स कोई सम्बन्ध नहीं वत और शील से है (सुत्तनिपात वासेट्ठसुत्त ३५ वत्थुगाथा तथा ६५०) । जो भी हो, क्षत्रिय और ब्राह्मण आर्य कृषकों शिल्पियों और वणिजों से भिन्न जाति के न थे ।

मौर्य राज्यसस्था तथा कौटल्य के राष्ट्रीय आदर्श

मौर्यो का समूचा साम्राज्यक्षेत्र या विजित् चार या पाच खण्डों में बटा था । जिन्हें चक्र भी कहा जाता है चक्र पै-मध्यदेश, प्राची दक्षिणापथ पश्चिमदेश और उत्तरापथ । एक-एक चक्र के अन्तगत अनेक जनपद थे । जनपदों के भीतर शासन की छोटी इकाईयाँ आहार (जिले) और कोट्टविषय (गढ़ो से शासित प्रदेश) थे । पुराने बसे हुए जनपद आहारों प बटे थ, कोट्टविषय प्राय अटवी(जगलो)प्रदेशों म थ ।

राज्य का अनुशासन राजा सुस्थापित कानूनों (धर्म) के अनुसार ही चलाता । कौटिल्य ने अपने अर्थ-शास्त्र के धर्मस्थीय म लिखा है कि

--विवादों (मुकदमों) के विषय के चार आधार होते है--धर्म, व्यवहार, चरित्र और राज शासन । इनमें से पिछला पहले का बाधक होता है। धर्म अर्थात् पुराने स्थापित सदाचार-सम्बन्धी प्राय-

द्वितीय नियमो से व्यवहार अर्थात् पुराने स्थापित दीवानी फौजदारी कानून का महत्व अधिक था। चरित्र इन दोनों को हटा कर इनका स्थान न सकता था। चरित्र का अर्थ किया गया है पुरुषों के संग्रह अर्थात् समूहों का स्वयं उनका बनाया हुआ विधान। अगले युग के अभिलेखों में चरित्र शब्द स्पष्ट रूप से समूहों या निकायों के बनाये विधानों के अर्थ में बर्ता गया है।

चरित्र बनाने वाले प्रजा के छोटे बड़े समूह या निकाय थे—ग्राम, श्रेणि नगम और जनपद। अर्थशास्त्र में अन्यत्र (२ ७) यह कहा गया है कि राजा अपने मुख्य दफ्तर में देश ग्राम जाति और कुलों के संघातों (समूहों, निकायों) के धर्म व्यवहार और चरित्र संस्थान को निबन्ध पुस्तक में दर्ज करावे। यह निबन्ध पुस्तक राजकीय रजिस्टर था जिसमें सब जनपदों, ग्रामों आदि के बनाये चरित्र दर्ज किये जाते थे।

अर्थशास्त्र में राज्यसंस्था का जो चित्र हम पाते हैं उससे यह स्पष्ट प्रकट होता है कि मौर्य साम्राज्य भारत के विभिन्न जनपदों और उनके अन्तर्गत ग्रामों श्रेणियों नगरों के स्तम्भों पर खड़ी रचना थी जो उनकी प्रजा के स्वेच्छाप्रदत्त सहयोग से चलती थी। उन जनपदों में उग्र स्वाधीन भावना होने से उन्हें कठिनाई से एक विजित में लाया जाता पर एक बार सम्मिलित हो जाने के बाद उनके प्रशमन की नीति बर्ती जाती।

सातवाहन युग की आर्थिक राजनीतिक संस्थाएँ

महाजनपद नन्द और मौर्य युगों में हम भारतीय समाज का जो आर्थिक राजनीतिक ढाँचा देखने आये हैं इस युग में उसी का विकसित रूप पाते हैं।

कृषि की भूमि कृषकों की सम्पत्ति थी। मनु ने कहा है राजा भूमि का अधिपति है (८ ३६)। पर उसके अन्य सन्दर्भों पर ध्यान देने से स्पष्ट होता है कि वहाँ अधिपति का अर्थ अध्यक्ष या पालक ही है।

मानवधर्म सम्भूयसमुत्थान की विवेचना लाभ के लिए समवाय में काम करने वाले वाणिजों के उल्लेख से आरम्भ करता है पर अन्त में कहता है कि कृषकों और कर्मियों की भी यही विधि है। इसका यह अर्थ हुआ कि सामुदायिक खेती और मजदूरों के संघ नन्द मौर्य युगों की तरह इस युग में भी थे।

आज हमारे देश में कारीगर प्रायः सर्वत्र महाजनों के कर्जदार हैं। वे अगाऊ कर्ज लेकर उसे भुगतान को हो सकते रहते हैं। यह दशा कम से कम मुगल युग से चल रही है। पश्चिम-युरोपी व्यापारी जब यहाँ आये तब हमारे राज्यों न उन विदेशियों को भी भारतीय कारीगरों का इस प्रकार विदोहन करने दिया। ईस्ट इंडिया कम्पनी के भारतीय जुलाहों पर जिन जुल्मों को याद हम आज तक करते हैं वे इसी दशा के कारण सम्भव [illegible]। इस दशा के मुकाबले में जब हम देखते हैं कि सातवाहन युग के जुलाहों और तेलियों की श्रेणियाँ अपना धन्धा करने के साथ-साथ राजाओं के लिए बैंकों का काम भी करती थीं तब स्वर्ग नरक का अन्तर हुआ दिखाई देता है।

महाभारत में कौटलीय अर्थशास्त्र की तरह श्रेणिबल अर्थात् श्रेणियों की सेना का उल्लेख है।

परराष्ट्र-पीडन अर्थात शत्रु को सताने के उपायो मे श्रेणिमुख्योपजाप अर्थात् श्रेणियो के मुखिया का फोडना भी बताया है। गन्धर्वो से हारने के बाद दुर्योधन कहता है कि म श्रेणिमुख्या को कैसे मुह दिखाउ गा।

श्रेणिया और जनपदो के धर्मों तथा ग्रामा और जनपदो के समयो' वा सविदो का पहले की तरह महत्व चला आता था। 'मनु कहता है— 'धर्मवेत्ता (धमस्थ) जाति जानपद धर्मों, श्रेणी धर्मों और कुल धर्मों को देख कर अपने धम का प्रतिपादन करे (८ ४६)।

व्यवहारदर्शन —"यवहारो को देखने अर्थात न्याय के अनुशासन-के लिए 'याज्ञवल्क्य (२ ३०) के अनुसार सबसे नीचे कुला के न्यायालय थ फिर श्रेणियों के पूगा (ग्रामो नगरों) के और सब से ऊपर राजा द्वारा नियुक्त अधिकारी। पूगा अथवा नगर सभाओ का इसक अतिरिक्त एक और बडा काम था लेखा का निबन्धन (रजिस्टरी)। उपवदात अपन गिरनार क अभिलेख के अत में कहता है— यह सब निगम सभा म सुनाया गया और फलकवार म चरित्र के अनुसार निबद्ध किया गया। फलक याने अलमारी, फलकवार=लेखा दफ्तर। या राजकीय दानों की रजिस्टरी भी नगर-सभाओ के लेखा दफ्तरा मे उनके चरित्र अर्थात् सभाओं म पारित किये नियमा के अनुसार होती थी।

इन राजविप्लवो के बीच अनक गणराज्य भी फिर उठे थे। अलक्षमन्दर अफगानिस्तान-पजाब के छोटे छोटे राज्यों और गणराज्यो को दबाता व्यासा तक चला आया था। सेलेउकस् के उसी प्रकार अनेकों राज विप्लव और बाहरी आक्रमण इस युग म भारत पर हुए फिर भी इन सस्थाओ के आन्तरिक काय सवहन मे उनका कोई हस्तक्षप नहीं हो सका।

मध्य युग

गुप्त साम्राज्य का ह्रास ५१० ई० के लगभग हूणा के मध्यएशिया के हमलो के बाद प्रारम्भ हो गया। उनके आक्रमणा से भारतीय प्रजा की रक्षा गुप्त लोग न कर सके तब यशोधर्मा नामक सम्भवत एक राजस्थानी सरदार ने, जो जनता का नेता था किसी राजवश का अन्वयी नहीं उठकर हूणो को देश से निकाला। ५४० ई० के लगभग उसके देहान्त के बाद भारतीय इतिहास के प्राचीन युग का अत होकर मध्यकाल का आरम्भ होता है।

जनता के राजनीतिक चैतन्य का ह्रास

मध्यकाल के राजनीतिक इतिहास के दस खाने म बढन ह्रम की कहानी है। ५४० से ६२० ई० तक ह्रास थोडा है उसके बाद एकाएक अधिक।

इस ह्रास के एक पहलु पर उक्त इतिहास ही प्रकाश डालता है। जिसम हिन्दुआ के अन्ध विश्वास और धर्मान्धता ने विदेशियो के हाथा उन्हे पराजित कर दिया।

एक तरफ धम-कर्म में अन्ध विश्वास का बढना प्रकट है तो दूसरी तरफ राजनीतिक चैतन्य का क्षीण होना। सिन्ध के जाटा ने जो मनोवृत्ति दिखलाई वह शासन का अन्याय बहुत बढ़ जान और

द्वित्तीय नियमों से व्यवहार अर्थात् पुरान स्थापित दीवानी फौजदारी कानून का महत्व अधिक था। चरित्र इन दोनों को हटा कर इनका स्थान ले सकता था। चरित्र का अर्थ किया गया है पुरुषों के संग्रह अर्थात् समूहों का वाय उनका बनाया हुआ विधान। अगले युग के अभिलेखों मे चरित्र शब्द स्पष्ट रूप से समूहों या निकायों के बनाये विधानों के अर्थ म वर्ता गया है।

चरित्र बनाने वाले प्रजा के छोटे-बड़े समूह या निकाय थे—ग्राम, श्रेणि, नगम और जनपद। अर्थशास्त्र म अध्याय (२ ७) यह कहा गया है कि राजा अपने मुख्य दफ्तर में देश ग्राम जाति और कुलो के संघातो (समूहो निकायो) के धर्म व्यवहार और चरित्र-सस्थान को निबन्ध पुस्तक म दर्ज करावे। यह निबन्ध पुस्तक राजकीय रजिस्टर था जिसमें सब जनपदो, ग्रामो आदि के बनाये चरित्र दर्ज किये जाते थ।

अर्थशास्त्र म राज्यसस्था का जो चित्र हम पाते हैं उससे यह स्पष्ट प्रकट होता है कि मौर्य साम्राज्य भारत के विभिन्न जनपदो और उनके अन्तर्गत ग्रामो, श्रेणियो नगरो के स्तम्भो पर खडी रचना थी जो उनकी प्रजा के स्वेच्छाप्रदत्त सहयोग से चलती थी। उन जनपदो मे उग्र स्वाधीन भावना होने से उन्हें कठिनाई से एक विजित म लाया जाता, पर एक बार सम्मिलित हो जाने के बाद उनके प्रशमन की नीति वर्ती जाती।

सातवाहन युग की आर्थिक राजनीतिक संस्थाएँ

महाजनपद नन्द और मौर्य युगो मे हम भारतीय समाज का जो आर्थिक राजनीतिक ढाँचा देखते आये हैं इस युग म उसी का विकसित रूप पाते हैं।

कृषि की भूमि कृषको की सम्पत्ति थी। मनु ने कहा है, राजा भूमि का अधिपति है (८ ३६)। पर उसके अन्य सन्दर्भों पर ध्यान देने से स्पष्ट होता है कि वहाँ अधिपति का अर्थ अध्यक्ष या पालक ही है।

याज्ञवल्क्य सम्भूयसमुत्थान की विवेचना 'लाभ के लिए समवाय से काम करने वाले वणिजो के उल्लेख से आरम्भ करता है पर अन्त में कहता है कि कृषकों और कर्मियो की भी यही विधि है। इसका यह अर्थ हुआ कि सामुदायिक खेती और मजदूरो के संघ नन्द मौर्य युगो की तरह इस युग मे भी थे।

आज हमारे देश म कारीगर प्रायः सबन महाजनों के कर्जदार हैं। वे अगाऊ कर्ज लेकर उसे चुकाने को हो खटते रहते हैं। यह दशा कम से कम मुगल युग से चल रही है। पच्छिम-युरोपी व्यापारी जब यहाँ आये तब हमारे राज्यो ने उन विदेशियों को भी भारतीय कारीगरो का इस प्रकार विदोहन करने दिया। ईस्ट इंडिया कम्पनी के भारतीय जुलाहों पर जिन जुल्मो की याद हम आज तक करते हैं वे इसी दशा के कारण सम्भव [illegible]। इस दशा के मुकाबले म जब हम देखते हैं कि सातवाहन युग के जुलाहो और तेलियों की श्रेणियाँ अपना धंधा करने के साथ-साथ राजाओ के लिए बैंको का काम भी करती था तब स्वर्ग नरक का अन्तर हुआ दिखाई देता है।

महाभारत मे कौटलीय अर्थशास्त्र की तरह श्रेणिबल अर्थात् श्रेणियों की सेना का उल्लेख है।

परराष्ट्र-पीडन अर्थात् शत्रु को सताने के उपायो मे श्रेणिमुख्योपजाप अर्थात् श्रेणियो के मुखिया को फोडना भी बताया है। गन्धर्वो से हारने के बाद दुर्योधन कहता है कि मै श्रेणिमुख्यो को कैसे मुह दिखाऊ गा।

श्रेणियो और जनपदो के 'धर्मों' तथा ग्रामो और जनपदो के 'समयो' वा संविदों का पहले की तरह महत्त्व चला आता था। 'मनु कहता है— 'धर्मवेत्ता (धर्मस्थ) जाति, जानपद, धर्मों, श्रेणी धर्मों और कुल धर्मों को देख कर अपने धर्म का प्रतिपादन करे (८ ४६)।

व्यवहारदर्शन —'व्यवहारो को देखना' अर्थात् न्याय के अनुशासन-के लिए याज्ञवल्क्य (२ ३०) के अनुसार सबसे नीचे कुला के न्यायालय थे फिर श्रेणियों के पूगा (ग्रामा नगरो) के और सब से ऊपर राजा द्वारा नियुक्त अधिकारी। पूगा अर्थात् नगर सभाओ का इसके अतिरिक्त एक और बडा काम था लेखो का निबन्धापन (रजिस्टरी)। उषवदात अपने गिरनार के अभिलेख के अन्त में कहता है— "यह सब निगम सभा मे सुनाया गया और फलकवार में चरित्र के अनुसार निबद्ध किया गया।' 'फलक' यान धनमारी, फलकवार=लेखा दफ्तर। या राजकीय दानो की रजिस्टरी भी नगर-सभाओ के लेखा दफ्तरो म उनके चरित्र अर्थात् सभाओं मे पारित किये नियमो के अनुसार होती थी।

इन राजविप्लवो के बाद अनेक गणराज्य भी फिर उठे थे। अलक्सान्दर अफगानिस्तान पजाब के छोटे छोटे राज्यो और गणराज्यो को दबाता व्यासा तक चला आया था। सेलउकस् के उसी प्रकार अनेको राज विप्लव और बाहरी आक्रमण इस युग से आरम्भ पर हुए फिर भी इन सस्थाओ के आन्तरिक शाप सबहन मे उनका कोई हस्तक्षेप नही हो सका।

मध्य युग

गुप्त साम्राज्य का ह्रास ४१० ई० मे लगभग हुआ व मध्यएशिया के हूमलो के बाद आरम्भ हो गया। उनके आक्रमणों से भारतीय प्रजा की रक्षा गुप्त लोग न कर सके तब यशोधर्मा नामक सम्भवत एक राजस्थानी सरदार ने जो जनता का नेता था किसी राजवश का अन्वयी नही उठकर हूणो का देश से निकाला। ५४० ई० के लगभग उसके देहान्त के बाद भारतीय इतिहास के प्राचीन युग का अन्त होकर मध्यकाल का आरम्भ होता है।

जनता के राजनीतिक चैतन्य का ह्रास

मध्यकाल के राजनीतिक इतिहास के इस खाके म बढते ह्रास की कहानी है। ५५० से ६२० ई० तक ह्रास थोडा है, उसके बाद एकाएक अधिक।

इस ह्रास के एक पहलू पर उक्त इतिहास ही प्रकाश डालता है। जिसम हिन्दुओ के अन्ध विश्वास और धर्मान्धता न विदेशियो के हाथो उन्हे पराजित कर दिया।

एक तरफ धर्म-कर्म म अन्ध विश्वास का बढना प्रकट है तो दूसरी तरफ राजनीतिक चैतन्य का क्षीण होना। सिन्ध के जाटा न जो मनोवृत्ति दिखलाई वह शासन का पर्याय बहुत बढ़ जाने और

शासकों और शासितों के बीच वर्ग विद्वेष उत्पन्न हो जाने से ही हो सकती थी। यह दशा भारत के दूसरे प्रान्तों में तब तक न थी। तो भी जनता की शासन के प्रति उपेक्षा क्रमशः बढ़ रही थी। उस दशा में जनता के पुराने निकायों—ग्राम, श्रेणी, निगम, जनपद संघ आदि—का क्या हुआ? मध्यकाल में हम एक भी गणराज्य का पता नहीं पाते। जैसा कि जायसवाल ने लिखा था— ६५० ई० से हिन्दू इतिहास पिघल कर उज्ज्वल चरित मात्र रह जाते हैं—राष्ट्रीय या सामूहिक जीवन की डोर में न पिरोये हुए अकेले अकेले रत्न। हम बड़े धर्मात्मा और बड़े पापी मिलते हैं "पर वे साधारण सतह से इतने ऊंचे हैं कि अलग हाथ बनकर उनकी प्रशंसा या पवित्र मानकर पूजा की जाती है। जनसमूह स्वतन्त्रता की साँस लेना छोड़ देता है।

प्राचीनकाल में स्थानीय शासन जनता के निकायों के हाथ में था तथा राज्य और साम्राज्य उसी नींव पर खड़े होते थे। मध्यकाल में निकायों की दशा में क्रम-परिवर्तन कैसे हुआ इसकी खोज बाकी है। तमिलनाड में ग्रामों की सभाएं राजराज और राजेन्द्र चोल के युग तक भी सुसंघटित रहीं। पर जनता का सामूहिक जीवन जब क्षीण होने लगता है और वह अन्याय सहने को तैयार हो जाती है तभी राजा द्वारा नियुक्त स्थानीय शासक जागीरदार उच्छृंखल हो उठते हैं। कश्मीर का इस काल का इतिहास पूरा मिलता है और उससे हम जानते हैं कि दसवीं शताब्दी से डामर अर्थात् जागीरदार सिर उठाने लगते हैं और धीरे धीरे राज्य की सब शक्ति उनके हाथों बँटकर छिन्न भिन्न हो जाती है। ऐतिहासिक कल्हण उन्हें तस्कर (चोर) और दस्यु (डाकू) कहकर याद करता है। राजा संग्रामदेव (१२३६–५२) को डामरों के उपद्रवों के कारण देश छोड़ जाना पड़ता है। दूसरी राजतरंगिणी के लेखक जोनराज ने उस अवसर का वर्णन करते हुए लिखा। (श्लोक १००)—

> तस्मिन् दण्डधरे दूरं याते डामरकैरव ।
> प्रजाप्राणानपि भिनात्मादुर नप रक्तपायिभिः ॥

—उस दण्डधर के दूर चले जाने पर खून पीने वाले डामर सियार प्रजाओं की प्राणें भी पूरी पूरी खा गये। प्रजा का सब कुछ सहने को तैयार होना इस दुरवस्था की जड़ में था।

नौवीं शताब्दी के अन्त में कश्मीर के राजा शंकर वर्मा ने युद्ध के अवसर पर रुद्रभाराणि अर्थात् प्रजा के लिए भार ढोने की बेगार चलाई। यह भी उसी दशा की सूचक है। जनता की इस उपेक्षा की दशा में एक और बात जो इस काल में चली वह थी राज्यों में भाड़े के सेना का उपयोग। उसे हम कम से कम नौवीं शताब्दी के आरम्भ से अभिलेखों में पाते हैं। बंगाल तक के राज्यों में तुर्क भाड़े के सैनिक आते थे जिन्हें यहां के लोगों में तुरुष्क कहा है। तुर्कों ने बाद में भारतीय राज्यों की अधीनता में क्या लाभ लिया इस पर इससे प्रकाश पड़ता है।

१३ वीं शताब्दी में तुर्क विजेता विजयान प्रजा के ऊपर जागीरदार बन कर बैठ गये।

बीच बीच में अनेक भक्त सम्प्रदायों ने भक्ति मार्ग से और विद्वान विचारकों ने शास्त्रीय विवेचनाओं द्वारा लोगों को जगाकर जनता की इन प्रवृत्तियों से बचाने का प्रयत्न किया। तमिल देश में बहुत से वैष्णव और शैव भक्त हुए जो क्रमशः आलवार और नायन्मार कहलाते थे।

पन्द्रहवीं शताब्दी का पुनरुत्थान

तुर्कों की सत्ता भारत से १४ वीं शताब्दी का अन्त होते होते देश से लुप्त हो गई। उसके स्थान पर विभिन्न जनपदों में जो नये प्रादेशिक राज्य उठे व सब प्राय या तो हिन्दुओं के थे या हिन्दी मुसलमानों के और उन सभी ने प्राय सुशासन स्थापित करने के लिए अपने अपने प्रान्त म वहां की पुरानी शासन संस्थाओं को फिर जिलाने का प्रयत्न किया। मेवाड म महाराणा हमीर लाखा, मोकल और कुम्भा के समय अपने उजड़े इलाकों को फिर से बसाने के लिए किसानों को भूमि सबंधी बहुत से स्वत्व जो तुर्क शासन के समय उनसे छिन गये थे वापस दिए और स्वायत्त संस्थाओं, पंचायतों आदि को पुनरुज्जीवित करने के जो यत्न किए गए थे व इतने आधुनिक प्रतीत होते थे कि १९२३-२५ में मेवाड़ का माल और बन्दोबस्त अधिकारी उन पुराने पट्टे, परवानों को देखकर दंग रह गया था।

कश्मीर म इसी प्रकार इस समय जैनुल आबदीन के किये सुधारों के कारण पूरा रामराज्य स्थापित हो गया था।

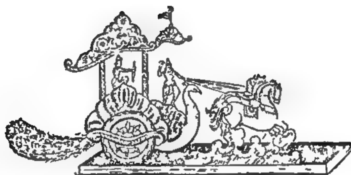
बाबर के नेतृत्व म तुर्कों की जो तीसरी धारा भारत म आई पठान अन्त तक उससे लड़ते रहे। पठान पुनरुत्थान का चरम उत्कर्ष शेरशाह के प्रशासन में प्रकट हुआ। उसके रामराज्य की कहानी सुविदित है। उत्तर भारत की प्रजा ने मिहिरभोज के जमाने के बाद वैसा सुशासन न देखा था। शेरशाह का सबसे महत्व का काम जागीरदारी को उखाड़ कर पुरानी राज्यसंस्था को फिर खड़ा करना था। उसने गावों की पंचायतों को फिर जगाया और उन्हें परिगणक या परगना नामक माल गुजारी-वसूली की पुरानी इकाइयों म संघटित किया। सत्रहवीं शताब्दी म शिवाजी ने नये पुनरुत्थान का आरम्भ करते हुए शेरशाह की नीति का अनुसरण किया। पर शिवाजी के मराठों ने उन्नीसवीं सदी म जब अंग्रेजों की गुलामी स्वीकार कर ली तब भी पठानों ने अपने को स्वतन्त्र रखा इससे प्रकट है कि पन्द्रवीं शताब्दी का पठान पुनरुत्थान और गहरा था।

किन्तु जागीरदारी प्रथा अर्थात् शासित और शासन के बीच एक तीसरे बिचवा या ठेकेदार वर्ग की प्रथा को हटाने की शेरशाह की नीति को उसके बाद उसके वंशज और अकबर भी जारी न रख सके। वह काम १७ वीं सदी के उत्तरार्ध म आकर महाराष्ट्र म शिवाजी ने फिर जारी करना चाहा किन्तु मुगल साम्राज्य के विरुद्ध जीवन मरण के संघर्ष म पड़कर उसके अनुयायी उस पर बाद में दृढ़ न रह सके। मुगलों के विरुद्ध अपने प्रजाजनों को उभाड़ने के लिए उन्हें फिर से लोगों को जागीरों का प्रलोभन देना पड़ा। इससे शिवाजी के किए कराए पर पानी फिर गया और १७ वीं सदी म योरप की तरह यहां भी दृढ़ केन्द्र ग्रथित राज्य संस्था खड़ी न हो सकी। १८ वीं सदी म आकर यहां के वे ढीले-ढाले राज्य अंग्रेजों की सुग्रथित राष्ट्रीय शक्ति के सामने न टिक सके।

सिंहावलोकन

वैदिक से गुप्तकाल तक भारतीय राज्यसंस्था का विकास कैसे हुआ सो हमने देखा है। उसके बाद उसके ह्रास की भी झलक पाई है। वैदिक काल म भारतीय समाज का संघटन जनमूलक या साजात्य

मूलक था। उससे मिलता-जुलता संघटन आर्य नृवंश की दूसरी शाखाओं का भी था। उत्तर वैदिक वाङ्मय में श्रेणि शब्द पहले पहल आता है। फिर महाजनपद युग में भारतीय राज्यसंस्था का विशिष्ट रूप प्रस्फुटित हो जाता है और उसी रूप का विकास गुप्त युग तक होता चलता है। उसके मुख्य लक्षण हैं (१) प्रत्येक जनपद और नगर में जनता का धंधों के अनुसार संघटित होना तथा (२) प्रत्येक ग्राम, धंधे के निकाय अथवा श्रेणि, नगर और जनपद का स्थानीय स्वशासन और उस पर निर्भर राज्य।



खंड–२

पंचायती राज का अभिप्राय और दर्शन





लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के अग्रदूत
स्व० श्री बलवन्तराय मेहता

पंचायती राज का दर्शन

श्री बलवन्तराय मेहता

पंचायती राज के सम्बन्ध में महात्मा गांधी के जो विचार थे उनको प्रकट करते हुए उन्होंने एक बार लिखा था —

भारत में सात लाख गांव हैं। हर गांव में नागरिकों की इच्छानुसार यानी सब के मत से संगठन कायम होगा। उसके बाद सात लाख मत होंगे। दूसरे शब्दों में प्रत्येक गांव का एक मत होगा। गांव के लोग जिला प्रशासन को चुनेंगे, जिलों के शासन प्रान्तों के शासन को चुनेंगे और वे ही बाद में अध्यक्ष को चुनेंगे जो कार्यपालिका का अध्यक्ष होगा।

इससे पता चलता है कि गांधीजी क्या सोच रहे थे। वे सोचते थे कि गांव के लोग जिला प्रशासन को चुनेंगे और जिला प्रशासन राज्य सरकार का आधार होगा। उन्होंने अपने लिखा है—

मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मैं संविधान सभा की कार्यवाही को नहीं समझ पाया हूं। ग्राम पंचायतों का जिक्र या निर्देश या विकेन्द्रीकरण भावी विधान में नहीं है निश्चित रूप से यह भूल है। यदि हमारी आजादी में जनता की आवाज गूंजती है तो इस ओर ध्यान देना चाहिए। पंचायतों को जितनी अधिक शक्ति दी जाएगी, जनता के लिए उतनी अधिक अच्छी बात होगी।

उन्होंने आगे कहा—

शक्ति का केन्द्र नई दिल्ली में है या कलकत्ता या बम्बई में—यानी बड़े शहरों में। मैं चाहूंगा कि उसे सात लाख गांवों में बांट दिया जाए।'

फिर इच्छा से सहयोग होगा—नाजी तरीका से नहीं। स्वेच्छित सहयोग से सच्ची आजादी पैदा होगी। एक नई व्यवस्था बनेगी जो सोवियत रूस की व्यवस्था से बहुत अच्छी होगी।

गांधीजी ने एक बार लिखा—

'ग्राम स्वराज्य का मेरा रूप है कि वह पूर्ण गणतन्त्र हो—अपनी जरूरता के लिए वह पड़ोसी गांव पर निर्भर न रहे लेकिन जहां निर्भरता आवश्यक हो जाए वहां गांव एक दूसरे पर निर्भर भी रहें। इसलिए गांव का पहला काम होगा कि वह अपना अनाज स्वयं पैदा करे—कपड़े के लिए रुई पैदा करे। पशुओं के चारागाह हों—बच्चों के खेलने-कूदने के लिए मैदान हों। अगर जमीन बचे तो बिक्री वाली फसल पैदा करें लेकिन गांजा, तम्बाकू व अफीम नहीं। गांव में एक नाटकघर, स्कूल व परिषद हाल हो।

जनघर अपना हो जहां से सब को शुद्ध जल मिल। बल्कि कोम के अंतिम दर्जे तक शिक्षा अनिवार्य हो। सभी काम सहकारी आधार पर हो। छूआ छूत के आधार पर कोई जातियां न हो।

ग्राम रक्षा के लिए अनिवार्य सेवा हो। उन्हे बारी-बारी से चुना जाए। गांव का शासन पांच पंचों की पंचायत करे जिसे हर साल गांव के बालिग लोग चुनें।

आधार भूत विचार

ये आधारभूत विचार हैं जो समय समय पर राष्ट्रपिता ने प्रगट किए थे। हम इन विचारों के साथ ही चलना चाहिए। हम देखें कि हम जिस पंचायती राज को बनाने जा रहे हैं वह किस प्रकार का होगा। पंचायती राज का विचार कोई नया विचार नहीं है। शुरू से ही ग्रामों में गणतन्त्र चल आ रहे हैं देश में भले ही किसी का राज रहा हो। इतिहास हमें बताता है कि इस पुराने देश में सदा पंचायतें हमारे जीवन का आधार रही हैं। इसके अतिरिक्त गांधी ने जो स्वतन्त्रता का आन्दोलन लड़ा था उसका आधार शहर नहीं थे। गांव थे शहरी लोग नहीं बल्कि गांव के लोग। इतना ही नहीं, गोलमेज परिषद् में उन्होंने अपने स्वराज्य की व्याख्या करते हुए कहा कि वह ग्राम गणतन्त्रों पर आधारित होगा। प्रान्तीय स्वतन्त्रता के दिनों में और बाद में भी कुछ प्रान्तों ने पंचायतों के लिए कानून पास किए जो इस मशीनरी का विकास करना चाहते थे। उनके दिमाग में बुनियादी विचार यही था कि गांवों को स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में काम करना चाहिए। वह हमारे संविधान बनाने वाले सारे ढांचे को ग्राम पंचायतों पर आधारित नहीं कर पाए, फिर भी भले ही बाद में सोचा हो उन्होंने उस विचार को निर्देशक सिद्धान्तों में जोड़ दिया। हमारा लोकतन्त्र गांवों की इकाईयों पर आधारित होगा इस विचार से संविधान का विकास काफी हद तक हुआ है।

आज कहा जाता है कि पंचायतें भविष्य का निर्माण करेंगी लेकिन क्या ये पंचायतें पंचायत समितियां, जिला परिषदें जिन्हें मिला कर हम पंचायती राज कहते हैं भविष्य के निर्माता की भांति काम कर सकती हैं? इसके बजाय देश का भविष्य उनके हाथों में सौंप दिया गया है जिन्हें जनता कम जानती है। यदि हमारे भविष्य के आधार-स्तम्भ गांव, ब्लाक व जिला पंचायतें बन पातीं तो उन लोगों के लिए स्वराज्य का कुछ अर्थ हो पाता। उनकी आवश्यकताएं व महत्वाकांक्षाएं सारे ढांचे में कुछ अर्थ रखतीं।

जनता की योजनाएं नीचे से बनें

पिछले १२ या १३ साल में योजनाएं जिन्हे नीचे से बन के आना था ऊपर से बनाई गई हैं। इसलिए जनता के लिए योजनाओं को नीचे से ही बनाना चाहिए। गांव वाले बताएं कि वे कैसा जीवन बिताना चाहते हैं उनकी क्या आवश्यकताएं हैं? उनकी क्या महत्वाकांक्षाएं हैं? ग्राम स्तर से ऊपर स्वायत्त शासन की इकाइयों के बारे में भी यही बात है। इस प्रकार यदि नीचे से योजना बनेगी तो अधिकांश लोगों को लाभ होगा। लेकिन जब तक नीचे स्वायत्त शासन की इकाइयां नहीं बनती हैं तब तक ऐसी योजना नहीं बन सकती है। यदि एक स्वशासित पंचायत है तो वह अपने गांव की आवश्यकता

के बारे में बता सकता है, और यह भी बता सकती है कि वे कैसे पूरी होंगी। उसके लिए कैसी योजना की आवश्यकता है। इस प्रकार ग्राम पंचायत प्रक्रिया में भाग लेगा तो हमारे देश का भविष्य बनायेगी। इस संदर्भ में पंचायतें सरकार की केवल अंग या एजेंट मात्र नहीं रह सकती हैं जिनका काम केवल ऊपर के अधिकारियों का हुक्म बजाना हो। पंचायतें गांधीजी के शब्दों के अनुसार ग्राम-गणतन्त्र बनें। उनका संगठन स्वायत्त शासन की इकाई का हो। इसका एक मुख्य कारण यह है कि यदि गांवों को सत्ता नहीं सौंपी जाती है तो जनता यह अनुभव नहीं कर सकती है कि यह उनका लोकतन्त्र है उनका स्वराज्य है।

जनता का विश्वास आवश्यक

देश की स्वतन्त्रता में जनता का विश्वास होना अत्यन्त आवश्यक है। उसके अन्दर यह विश्वास तब तक नहीं आ सकता जब तक कि वे लोकतन्त्र या स्वराज्य में भाग नहीं लेते हैं। हमने उन्हें भागीदार बनाने की नहीं सोची है। अब उस दिशा में हमने बढ़ना शुरू कर दिया है, लेकिन यदि लोगों में यह विश्वास पैदा नहीं होता है कि वे लोकतान्त्रिक ढांचे के अंग हैं—तो हमारे प्रयत्न सफल नहीं होंगे। इसके लिए हम उनके अन्दर यह भावना भरनी है। यदि उनके अन्दर यह भावना नहीं होगी तो आप उनसे यह उम्मीद कर सकते हैं कि लोकतन्त्र या देश की रक्षा के लिए अपना सब कुछ बलिदान कर देंगे। हम इस निर्माण कार्य में इसलिए भी उन्हें भागीदार बनाना चाहिए कि यदि वे भागीदार नहीं बनते हैं तो फिर स्वराज्य का गांव वालों के लिए क्या अर्थ रह जाता है। जब तक लोकतन्त्र ऊपर पार्लियामेंट या विधान सभाओं में रहता है और गांवों में नहीं आता है—गांव के लोगों को यह विश्वास नहीं हो सकता कि यह उनका प्रजातन्त्र है या उनके लाभ के लिए है। इस उद्देश्य के लिए आवश्यक होगा कि हम उनके अन्दर स्वामित्व की भावना भागीदार की भावना, हितों की एकरूपता की भावना, पैदा करें। इसलिए आवश्यक है कि पंचायती राज के स्वरूप का अर्थ हो—ग्राम, ब्लाक व जिला स्तर पर स्वायत्त शासन की इकाइयां।

लोकतन्त्र को कायम रखना होगा—उसकी रक्षा करनी होगी। स्वतन्त्रता प्राप्त करना और लोकतान्त्रिक ढांचा बना देना ही काफी नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि जनता के अन्दर लोकतन्त्र के वास्ते उत्साह पैदा करना, जीवन की लोकतान्त्रिक प्रणाली में विश्वास करता है। हम उन्हें तयार करें ताकि वे लोकतान्त्रिक ढांचे को कायम रखने के लिए संघर्ष कर सकें। यह तभी हो सकता है जब उन्हें लोकतान्त्रिक ढांचे का अंग बनाया जाए। अन्यथा जैसा हुआ वे अपना काम किया करते रहेंगे चाहे लोकतान्त्रिक संस्थाओं को कोई खतरा पैदा हो जाए। पहले जमाने में कुछ भी हुआ उन्होंने परवाह नहीं की। बादशाहतें खत्म हो गईं बाहर के लोगों ने कब्जा कर लिया या भीतर का कोई बादशाह बन बैठा लोग खामोशी से सब देखते रहे। अब इस भावना को समूल नष्ट करना है और आत्मीयता की भावना पैदा करनी है। इस उद्देश्य के लिए ही ग्राम को स्वायत्त शासन की इकाई बनानी पड़ेगी। जिला व ब्लाक स्तर पर भी स्वायत्त शासन की इकाई होगी।

कुछ लोग अजीब ढंग से बात करते हैं। वे सोचते हैं कि यह एक परीक्षण है जो कामयाब भी हो सकता है व असफल भी हो सकता है। यह परीक्षण नहीं है। जनता स्वामी है। वह प्रभुसत्तासम्पन्न है जिससे हम सत्ता हासिल करते हैं। जो गांव नहीं कर सकता उसे ब्लाक करेंगे और जो ब्लाक नहीं कर सकते उसे जिले करेंगे और जो जिले नहीं कर सकेंगे वह राज्य करेंगे और जो राज्य नहीं कर सकेंगे उसे केन्द्र करेगा। जो आज का तरीका है वह इससे उल्टा है तो आज के तरीके को पलटना पड़ेगा। इनका

प्राचीन भारत में गांव पंचायत मुख्य रूप से न्याय पालिका का काम करती थी। इसमें गांव के बड़े-बूढ़े और बुद्धिमान लोग होते थे। विनोबा जी ने पंचायत का चित्रण इन शब्दों में किया है—पंच बोले परमेश्वर। सम्भवतया प्राचीन काल में भी पंचायतों का यही रूप था। परम्परा से ही भारत में जब कभी व्यक्तियों या हितों में संघर्ष होता तो पंच फैसले को मान्यता दी जाती रही पंच निर्णय देने की और इस तरह न्याय कराने की क्षमता परम्परा में ही समाई हुई है। पंचायत के लिए एक सुविधा यह भी थी कि वह गांव के सब आदमियों और मामलों से भली भांति परिचित होती थी।

प्राचीन पंचायत से बुनियादी तौर से भिन्न

आज की पंचायत प्राचीन पंचायत से बुनियादी तौर से भिन्न है। प्राचीन भारत की स्थानीय संस्थाएं जान-बूझ कर विकेन्द्रित आधार पर नहीं बनाई गई थीं। न ही उनमें सत्ता निहित थी। किन्तु आज की समन्वित शासन प्रणाली में पंचायत एक तत्व है। राष्ट्रीय सत्ता के संघीय ढांचे में यह भी एक प्रशासनिक इकाई है। अब यह जरूरी नहीं कि पंचायत में गांव के बड़े-बूढ़े और बुद्धिमान शामिल हों। यह ठीक है कि न्याय पंचायतें पंचायती राज का ही एक अंग है, किन्तु उनका कार्यक्षेत्र सीमित है। अपने वर्तमान रूप में पंचायत प्रशासन की एक पूर्ण इकाई है जिसके हाथ में अपने इलाके में रहने वाले लोगों के कल्याण सम्बन्धी सभी काम आन हैं। पुरानी यूनियनों लोकल बोर्डों और जिला बोर्डों से इसके काम कहीं ज्यादा हैं। इनका उद्देश्य तो जनता के ऐसे समान हित वाले वर्ग तैयार करना है जो उत्साही हों प्रगतिशील हों उत्पादक हों आत्मनिर्भर हों और समुदाय के पूर्ण विकास के लिए काम करें।

सत्ता का मोह

क्या हमें इसमें सफलता मिलेगी? आम तौर पर तो जब एक सिद्धान्त से सभी लोग सहमत हों तब सफलता मिल जाती है यह कहा जा सकता है कि हम सब भी संसद से लेकर पंचायत तक लोकतन्त्री पद्धति अपनाने के हामी हैं। परन्तु कुछ लोग दिलों में कुछ बातें रखे हुए हैं। यद्यपि सभी राज्यों में आवश्यक कानून पास किए जा चुके हैं किन्तु उन्हें लागू करने में सभी राज्य एक-सा उत्साह नहीं दिखा रहे। सत्ता के विकेन्द्रीकरण में एक रूपता दिखाई नहीं देती। सभी का हमारी जनता की समझदारी में, उसकी योग्यता में, जिम्मेदारी उठाने की उसकी भावना में एक सा विश्वास नहीं है। सत्ता से एक मोह पैदा हो जाता है और उससे छुटकारा पाना सचमुच ही एक कठिन काम होता है। तीन या चार राज्यों के अतिरिक्त अन्य राज्यों में अधिक ऊंचे पदों पर बैठे सत्ताधारी व्यक्ति पंचायती राज के प्रति ज्यादा उत्साह नहीं दिखाते। यह सब स्वाभाविक ही है परन्तु यदि लोगों को सत्ता सौंपनी ही है तो इसका मोह छोड़ना ही पड़ेगा।

यह लक्ष्य तभी प्राप्त किया जा सकता है कि जब प्रशासन की बुनियादी इकाई छोटी हो। तब यदि सत्ता का सदुपयोग किया जाए तो वांछित परिणाम स्पष्ट दीख पड़ेंगे। तभी समुदाय अपने प्रयासों का मीठा फल चख सकेगा। तभी सामूहिक जागरूकता पैदा होगी। एक छोटे से इलाके में रहने वाले लोगों में जो स्वाभाविक घनिष्ठता पैदा हो जाती है उससे फलस्वरूप यह और अधिक वास्तविक बन जाएगी।

ग्राम संस्थायें सजीव संस्थायें बनें

किन्तु इसे सार्थक तभी बनाया जा सकता है जब समुदाय अपने कामों की योजना भी बनाए। तभी आयोजन और कार्यान्वयन में घनिष्ट सम्पर्क स्थापित हो सकेगा। केवल उसी दशा में लोग आयोजन और कार्यान्वयन का काम थोड़े से निर्वाचित लोगों के हाथों में सौंप कर निश्चिन्त नहीं हो जाएंगे बल्कि स्वयं भी काम करेंगे। पंचायती राज की सफलता के लिए आवश्यक है कि ये संस्थाएं सजीव संस्थाएं बनें और इनकी सुदृढ़ नींव समूचे समुदाय पर आधारित हो। अभी तक गांवों में लोगों को इस बात के लिए प्रेरित नहीं किया गया कि अपने कल्याण कार्यक्रमों की योजना वे स्वयं बनाए, और इसीलिए इन परियोजनाओं के प्रति उन्हें कोई लगाव नहीं होता।

जिले में विकास खण्ड प्रशासन की नई इकाइयां हैं। पंचायतों से मिल कर विकास खण्ड बनता है। वे ऐसे समान हित के काम करते हैं जिनके लिए संयुक्त प्रयास की आवश्यकता होती है। परन्तु यह बात सभी अच्छी तरह नहीं समझी जाती कि खण्ड में पंचायतों वाली बुनियादी विशेषता होनी चाहिए। इससे स्पष्ट है कि हमने सामुदायिक विकास की भावना को नहीं समझा है और लोकतन्त्र के लिए जन-सहयोग के महत्व को भी पूरी तरह अनुभव नहीं किया। इसी मनोवृत्ति के कारण विकास खण्ड कई जगह जिला प्रशासन के एजेंट बन कर रह गए हैं।

जब तक यह स्थिति बनी रहेगी तब तक गांव वालों को अर्थात् ग्राम सभा को पंचायत के कामों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करने का कोई लाभ नहीं होगा। गांधीजी के विचार में प्रशासन एक ही केन्द्र से खींचे गए वृत्तों की भांति था न कि पिरामिड की भांति। इसी तरह समुदाय के विकास के लिए बनाई गई योजनाएं भी एक ही केन्द्र से खींचे गए वृत्तों की भांति होनी चाहिए जो पंचायत योजना से शुरू होकर बराबर फैलती हुई राष्ट्रीय योजना तक पहुँचे।

एक धारणा बहुत व्यापक रूप में फैली हुई है कि सत्ता चलाने में गांव वालों का सहयोग जल्दबाजी में लिया जा रहा है। यह विचार उन दिनों के प्रचलित विचार से मेल खाता है। जब यह कहा जाता था कि हम योग्य होने से पहले ही आजादी मिल गई है। कुछ लोग तो गांववालों के लिए फैसले करना अपना पवित्र कर्तव्य समझ बैठते हैं। बाकी लोगों की राय यह है कि अनपढ़ गांववाले आयोजन कर ही नहीं सकते। परन्तु लोकतन्त्र में हर नागरिक को यह अधिकार है कि उससे सलाह ली जाय, उससे परामर्श किया जाए शासन में उसका भी हिस्सा हो। इन मूलभूत अधिकारों के अन्तर्गत उसे अपना अस्तित्व प्रकट करना ही चाहिए। किसी व्यक्ति के अनपढ़ होने का यह मतलब नहीं कि वह बुद्धिमान भी नहीं। हर ग्रामीण यह समझता है कि उसके और समुदाय के लिए भला बुरा क्या है। उन्हें अपने विचार प्रगट करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए उनके दिमाग पर किसी दूसरे का अधिकार नहीं होना चाहिए। कई देशों के अनुभव प्राप्त एक अधिकारी व्यक्ति का भारत के बारे में कहना है कि गांववालों की सभा बुद्धि का भण्डार होती है। इसके अन्तर्निहित मूल्य के लिए और खास कर जनता में आत्म-सहायता की भावना पैदा करने के लिए इसका पूरा पूरा उपयोग किया जाना चाहिए।

गुटबन्दी से निराश न हों

आलोचकों का कहना है कि पंचायती राज का प्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ कि गुटबन्दी व झगड़े बढ़ गए हैं। परन्तु मानवीय सम्बन्धों में गुटबन्दी को दूर नहीं किया जा सकता। जरूरत तो इस बात

की है कि सामाजिक हितों के गुट या ग्रुप बनाए जाएं जैसे युवकों के, महिलाओं के संगीत व नाटक के संरक्षकों के आदि आदि। समाज में सामाजिक विभिन्नता से तो बचा नहीं जा सकता। वांछित भिन्नता धीमे धीमे और कठिनाई से आती है। इस बीच यदि गुटबंदी बढ़ जाए तो हम उससे निराश नहीं होना चाहिये। जब लोग देखेंगे कि गुटबंदी के शासन से सब लोगों का भला नहीं होता, तो वे उसे देर तक सहन नहीं करेंगे।

इस प्रवृत्ति को बढ़ावा देने के लिए जरूरी है कि लोगों को अधिकाधिक अधिकार सौंपे जाएं और इस बात की चिंता न की जाए इसके परिणाम क्या निकलेंगे। पंचायती राज ने यही किया है। हम तो केवल इसका आधार और अधिक व्यापक बनाना चाहते हैं ताकि सत्ता कुछ ही लोगों के हाथों में केन्द्रित न रहे। हर सुविज्ञ व्यक्ति का यही कथन है कि हमारे लोग बहुत बुद्धिमान हैं। यही बात जरूरी होती है। गलती किससे नहीं होती? किन्तु लोकतन्त्र की छोटी-सी इकाई में (जिसमें हर व्यक्ति एक दूसरे को जानता है) इन गलतियों के परिणामों को नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता है। इस तरह सत्ता के केन्द्रित होने से स्वाभाविक रूप से बचा जा सकेगा।

पर्याप्त धन की व्यवस्था आवश्यक

किन्तु केवल सत्ता और उत्तरदायित्व से ही काम नहीं चलता। प्रारम्भिक सोपानों में पर्याप्त मात्रा में धनराशि की व्यवस्था भी करनी चाहिए ताकि ऐसे लाभकारी कार्यक्रम का लक्ष्य पूरा हो सके जिसका लाभ सारी जनता अनुभव करेगी। कुछ समय बाद स्थानीय साधन विकसित हो जाएंगे। यह आशा करना कि शुरू में ही लोग भारी बोझ उठाने को तैयार हो जाएंगे मानव प्रकृति के भी विरुद्ध है और उनकी वर्तमान आर्थिक दशा के भी। इसलिए यह जरूरी है कि गांवों का आर्थिक विकास भी राजनीतिक विकास के साथ साथ हो बल्कि उससे भी तेजी से हो।

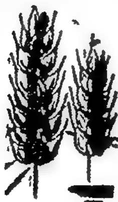
यदि सामुदायिक विकास का उद्देश्य राजनीतिक आर्थिक और सामाजिक प्रगति करना है, तब पंचायती राज लक्ष्य प्राप्ति का साधन है। परन्तु लोगों को समाज शिक्षा देना पंचायती राज से अवश्य सम्बद्ध किया जाना चाहिये। दुर्भाग्यवश समाज शिक्षा की उपेक्षा की जा रही है। यह एक पीछे ले जाने वाला कदम है। शिक्षा और प्रशिक्षण किसी भी क्षेत्र में मूलभूत वस्तु होती है। श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि यदि कभी सामुदायिक विकास आन्दोलन अपने उद्देश्य प्राप्त करने में असफल रहा तो इसका कारण धन की कमी कभी नहीं होगी बल्कि यह होगा प्रशिक्षण की कमी।

क्या पंचायती राज की स्थापना से समुदाय के विकास का काम पिछड़ गया है? कई प्रेक्षकों का यही कहना है। इस बात से खतरे की बू आती है। प्रशासन और उसके साथ मिली सत्ता तो तेज शराब की तरह होते हैं। जिले में सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग निर्माण विभाग शिक्षा विभाग आदि के लिए भारी संख्या में कर्मचारियों की व्यवस्था करना एक बड़ा अच्छा काम लगता है। इस प्रक्रिया में सामाजिक और आर्थिक जीवन के विकास के लिये सामुदायिक विकास पर, और कुल प्रगति के साधन के रूप में इस पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा रहा। पंचायती राज की प्रगति के लिए आवश्यक है कि यह प्रवृत्ति रोकी जाय। यदि समुदाय का विकास नहीं होता और उसे प्रगति के रास्ते पर नहीं बढ़ाया जाता है तो पंचायती राज डगमगाने लगेगा।

कार्यकर्त्ताओं की भूमिका

सामुदायिक विकास के कार्यकर्त्ताओं की भूमिका बड़ी कठिन है। इसमें उन्हें प्रोत्साहित व निरुत्साहित कर के लोगों का मार्गदर्शन करना होता है। उनका रोबदाब से नहीं, बल्कि मित्र व गुरु की तरह मार्गदर्शन करना होता है। प्रशासन में सभी व्यक्ति योग्य मार्गदर्शक नहीं होते। इसलिए पुरानी भूमिका को झटपट छोड़ कर बिलकुल नई भूमिका अदा करने के लिए जिस मानसिक सन्तुलन की आवश्यकता होती है उसे प्राप्त करना आसान नहीं। सफलता प्राप्ति के मार्ग में सब से बड़ी बाधाओं में से यह एक है। यह तो स्पष्ट है कि अयोग्य व्यक्तियों को हटा देना चाहिये। फिर इस क्षेत्र में अब तक उत्तरदायित्वों का स्पष्ट निर्धारण भी नहीं हुआ। विभागीय प्रतिद्वन्द्विता को भी हटाना होगा। हम समूचे समुदाय का एक साथ विकास करना है, उसके जीवन के किसी एक खास पहलू का नहीं। इस सम्बन्ध में केन्द्रीय व राज्य सरकारों की भूमिका भी दोनों को ही अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए।

पंचायती राज तो अब प्रतिष्ठापित हो गया है। कुछ सुविज्ञ पर्यवेक्षकों का कथन है कि यह समय से पूर्व ही नहीं आया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से सरकार में केन्द्रीकरण की जो प्रवृत्ति देखी जा रही थी, उसे रोकना आवश्यक था। इसके अतिरिक्त, एक प्रश्न यह भी है कि पंचायती राज के अन्तर्गत व्यापक आधार पर सौंपे जाने वाली सत्ता और जिम्मेदारियों के बिना सच्चा नेतृत्व कैसे सामने आएगा और बराबर आता रहेगा ? शायद आलोचकों की निगाह इस ओर गई ही नहीं।



PANCHAYATI RAJ

—S K Dey

PHILOSOPHY AND OBJECTIVES

Panchayati Raj is a culmination of the recognition given by our Constitution to the role of Panchayats One of its Directive Principles enjoins that the "State shall take steps to organise village panchayats and endow them with such powers and authority as may be necessary to enable them to function as units of self governments The devolution of powers is an implementation of a Directive

Panchayati Raj aims as making democracy real by bringing the millions into the functioning of democracy It is a system of grassroots democracy which seeks to link the individual family in the remotest village with the Central Government

The basic unit of self government is the family The family has been guaranteed certain fundamental rights which cannot be interfered with by the State But there are certain spheres of activity which can only be executed by several families collectively These activities will obviously have to be left to an organisation called the village panchayat It is essential to build up the Panchayat as a dynamic organisation which can look after all the facets of life of the village community It has to draw its strength and sanction from the village people as a whole simultaneously working in close co operation with self governing bodies at higher levels in an organic set up

The Panchayat must constitute a strong base for a three tier structure of self governing institutions located at block and district levels Responsibilities and activities which fall beyond its scope will be surrendered by the panchayat to the next higher body which is called the panchayat Samiti While the Samiti will look after these activities it will also try to use the panchayat as its agent for some of its numerous tasks

The Panchayat Samiti will be linked to the next higher body at the district level known as Zila Parishad The latter will guide the former in technical and administrative matters and engage in activities which only a district organisation

can discharge effectively. This process of assuming responsibilities with the requisite authority within its own sphere and surrendering those which involve interunit co operation are the main features of the Panchayati Raj system In other words as one steps down them these three tiers the coordination and policy making functions decrease correspondingly to the executive responsibilities which increase till at the village level, the panchayat becomes mostly an executive body

It will be seen that by this pattern Panchayati Raj will bring about a complete link up of the millions in this country from the Gram Sabha to the Lok Sabha It seeks to bring to the individual family the highest guidance available from the Parliament downwards People will be free to handle matters within specified spheres without interference from others This freedom to think, plan and work will draw out the latent initiative and ability in every individual for the growth and welfare of the family and the community Panchayati Raj is thus a way of life and involves a new approach to government

The Balwant Rai Mehta Committee had recommended democratic decentralisation by the association of peoples representatives through the three tier system The new Panchayati Raj legislation has been enacted in Andhra Rajasthan Madras Assam Mysore and Punjab Andhra and Rajasthan were the first to implement their legislation and they have completed one year of operation under this system Assam Madras Mysore and Punjab have also started setting up such institutions In Madhya Pradesh, Bihar and Uttar Pradesh legislation is shortly expected to be introduced while Gujrat and Maharashtra have set up high level committees to recommend the type of institutions which will suit local conditions

The growing concept of Panchayati Raj will bring in its wake a number of problems the most important of which will be rural industrialisation The needs of the millions of families artisans traders and small industrialists will have to be complied with As a result a rapidly growing cooperative sector is envisaged, specially in agriculture, small industries trade and spheres of social services This sector helps build up Sahakari Samaj in the economic field as a complementary counterpart of the three tier democratic system of Panchayati Raj

---

पंचायती राज के स्वरूप की कल्पना

—डा० इकबाल नारायण
रीडर, राजनीति शास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय

पंचायती राज का दो प्रकार से अध्ययन किया जा सकता है। इसके आदर्शों की कल्पना के आधार पर और व्यवहार से जो वास्तविकताएं सामने आई हैं उनके आधार पर। आदर्श और यथार्थ के अध्ययन का एक परिणाम यह हो सकता है कि यथार्थवादी, पंचायत राज के स्वरूप में परिवर्तन के लिए दबाव डालें। फिर पंचायती राज से जिन आदर्शों की पूर्ति की आशा की गई है उनमें फेर बदल करने की बात करें। जिस स्थिति की कल्पना यहां की गई है वह अभी सुदूर भविष्य के गर्भ में है।

आदर्श में पंचायती राज की कल्पना भी अभी स्वरूप ले रही है। इस स्वरूप को उभारने में आदर्श और यथार्थ—दोनों प्रकार की विचारधाराओं को महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी है। इन दोनों विचारधाराओं का लाभ इनके एकांगी रहने में नहीं है बल्कि उनके आपसी सहयोग और साझेदारी की भावना पर है। इससे पंचायती राज के स्वरूप में निखार आने के साथ ही इस क्षेत्र में काम करने वालों को भी बार बार यह चेतावनी मिलती रहेगी कि आदर्श से वे कितने पीछे हैं। इसलिए इन दोनों विचार धाराओं का समन्वय आवश्यक है।

आदर्शवादी और यथार्थ विचार

आदर्शवादी विचारधाराओं में भी बहुत भिन्नता है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित दृष्टिकोण उल्लेखनीय हैं।

एक विचारधारा सर्वोदय वादियों की है जिसे अधिक स्पष्ट भाषा में श्री जयप्रकाश नारायण का दृष्टिकोण भी कहा जा सकता है। इस विचारधारा का उदय गांधीवादी विचारों से हुआ है और विनोबा इसके पक्षपाती हैं। श्री जयप्रकाश नारायण ने इस दृष्टिकोण को क्रम बद्धता प्रदान की है। इस सम्बन्ध में कुछ बातें ध्यान देने योग्य हैं पहली बात यह है कि यह विचारधारा संसदीय लोकतंत्र की समर्थक नहीं है। श्री जयप्रकाश नारायण के अनुसार संसदीय लोकतंत्र भारत की परिस्थितियों के अनुकूल नहीं है इसके अलावा इस विचारधारा के तहत भारतीय नीति से पुनरुद्धार की बात कही जाती है।

तीसरी बात यह है कि वर्तमान संसदीय लोकतंत्र के स्थान पर इस विचारधारा के समर्थक सामुदायिक लोकतंत्र की बात करते हैं और उसे संसदीय लोकतन्त्र से श्रेष्ठ मानते हैं। पंचायत को वे इसका आधार मानते हैं और केवल इसी के प्रत्यक्ष निर्वाचन में विश्वास करते हैं। इसके अलावा पंचायत को वे ग्राम सभा के प्रति उत्तरदायी मानते हैं। सामुदायिक लोकतन्त्र जिसकी वे कल्पना करते हैं निर्दलीय होना चाहिए और उसमें सर्व सम्मति का तत्व मुख्य रूप से रहना चाहिए।

श्री जयप्रकाश नारायण की यह कल्पना अनेक सवाल खड़े कर देती है जो पंचायती राज की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न यह हैं।

पंचायती राज और उच्च स्तरीय चुनाव में और राज्यीय तथा राष्ट्रीय स्तर के चुनावों के बीच तालमेल की क्या व्यवस्था होनी चाहिए? पंचायती राज योजना में ग्राम सभा का क्या स्थान होना चाहिए? क्या पंचायत को पंचायती राज के ढांचे की मूल भूत इकाई मानकर चला जा सकता है? क्या पंचायती राज का गठन निर्दलीय आधार पर किया जा सकता है? इन प्रश्नों पर गम्भीरता पूर्वक विचार आवश्यक है।

स्वायत्त शासनात्मक कल्पना

एक विचारधारा स्वायत्त शासन व्यवस्था की है जो पंचायती राज की कल्पना ग्रामीण स्वायत्त शासन के रूप में करती है। इस दृष्टिकोण के प्रतिपादकों का मत यह है कि ग्राम स्तर पर सभी प्रकार की प्रशासनिक व्यवस्था करने की जिम्मेदारी ग्रामवासियों की होनी चाहिए। इसका अर्थ यह है कि ग्रामवासियों में स्वयं किसी भी काम में पहल करने की शक्ति होनी चाहिए। प्रशासन में उन्हें स्वायत्तता प्राप्त होनी चाहिए। उन्हें अपने अधिकारों का प्रयोग करने की न्यूनतम उच्चस्तरीय सरकारी हस्तक्षेप के अंतर्गत छूट होनी चाहिए। इस विचारधारा के कुछ समर्थकों का यह भी कहना है कि पंचायतों को राजस्व प्रशासन भी सौंप देना चाहिए और धीरे धीरे कानून और व्यवस्था कायम रखने का दायित्व भी उन पर डाला जाना चाहिए। यह दृष्टिकोण सादिक अली कमेटी के अधिकांश गैर सरकारी सदस्यों ने व्यक्त किया है।

नौकरशाही और पंचायत राज

इसके विपरीत एक विचारधारा नौकरशाही की भी है। इस दृष्टिकोण से अधिकारी वर्ग अधिक प्रभावित हैं और पंचायती राज सम्बन्धी नियमों उपनियमों में यह विचारधारा यत्र-तत्र अभिव्यक्त होती रहती है। इस विचारधारा के पीछे अशिक्षित ग्राम वासियों के प्रति अविश्वास की यह भावना काम करती है, कि वे अपने आप अपनी व्यवस्था नहीं कर सकते। इसलिए इस दृष्टिकोण में पंचायती राज संस्थाओं को प्रशासनिक व्यवस्था सौंपने पर बहुत कम जोर दिया गया है। इस विचारधारा के समर्थकों में भी दो प्रकार के व्यक्ति हैं। एक वे जो यह कहते हैं कि पंचायती राज संस्थाओं को केवल सरकार की एजेन्सी के रूप में काम करना चाहिए। दूसरे वे जो पंचायती राज संस्थाओं को सतर्कता पूर्वक कुछ अधिकार प्रदान करने के समर्थक हैं।

विकासवादी सिद्धान्त

एक विकासवादी सिद्धान्त है। इस सम्बन्ध में बलवन्तराय मेहता समिति की रिपोर्ट में कुछ विचार व्यक्त किए गए हैं। इनका मानना यह है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम जनता में आत्म विश्वास उत्पन्न करने और उत्साह तथा स्वेच्छा से जनता को ग्राम विकास के कार्यों में नियोजित करने में असफल रहा है। इस कमी को, सम्भवतः सामुदायिक प्रशासन और खासतौर से ग्राम विकास की योजनाएं जनता की चुनी हुई संस्थाओं को सौंप कर पूरा किया जा सकता है। यह एक व्यापक दृष्टिकोण है जिसके तहत बलवन्त राय मेहता समिति की रिपोर्ट में पंचायत राज की कल्पना ग्राम विकास के संदर्भ में की गई है। इस दृष्टिकोण को यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो पता चलता कि उद्देश्य और कार्यक्रम दोनों ही दृष्टियों से पंचायती राज सामुदायिक विकास कार्यक्रम का विस्तार मात्र है। और पंचायती राज संस्थाओं को विकास की मशीन के पुर्जे के रूप में काम करना है, उसको प्राप्त होने वाली शक्ति के रूप में नहीं। पंचायती राज की परिकल्पना के सम्बन्ध में संक्षेप में विभिन्न आदर्शवादी दृष्टिकोण यही है।

यथार्थवादी दृष्टिकोण

अब हम पंचायती राज के स्वरूप पर यथार्थवादी दृष्टिकोण से विचार करना चाहिए। यथार्थवादी दृष्टिकोण से पंचायती राज के स्वरूप पर विचार करने में कुछ कठिनाइयां हैं। इस सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी और आंकड़ों का अभाव है। क्योंकि पंचायती राज के विकसित होने हुए स्वरूप पर बहुत कम अनुसंधान कार्य हुआ है। दूसरी समस्या पंचायती राज संस्थाओं की अल्पकालिक अवस्था का है। तीसरी बात यह है कि पंचायत राज संस्थाओं के संस्थागत स्वरूप में बहुत भिन्नता है।

कुल मिला कर पंचायती राज की कार्य पद्धति के अनुसार विकसित स्वरूप के बारे में कल्पना करना भी खतरनाक होगा। इन सीमाओं के बावजूद पंचायती राज संस्थाओं के स्वरूप की कल्पना उनकी कार्य प्रणाली के आधार पर की जा सकती है।

तीन प्रकार के स्वरूप

पंचायती राज के तीन प्रकार के स्वरूप विकसित हुए है—राजनीतिक, सार्वजनिक और कानूनी। राजनीतिक स्वरूप वह है जो आमतौर पर हमारे जिम्मेदार नेताओं के भाषणों वक्तव्यों और लेखों के माध्यम से अभिव्यक्त होता रहता है। उनकी कल्पना यह है कि ग्रामीण प्रशासन की व्यवस्था स्वयं ग्राम वासियों द्वारा हो। इस कल्पना का पंचायती राज निश्चित रूप से ग्रामीण स्वायत्त शासन का स्वरूप लेगा। पंचायती राज का सार्वजनिक स्वरूप यह है कि ग्राम जनता उससे यह आशा करती है कि इस व्यवस्था से उसकी पुरानी समस्याओं का समाधान होगा। खास तौर से वह प्रशासन और राजस्व सम्बन्धी समस्याओं के समाधान के लिए विकास से भी अधिक उत्सुक है। इसलिए पंचायती राज का सामुदायिक विकास योजना से भी कोई सम्बन्ध है इस बात की उन्हें बहुत कम जानकारी है। जब पंचायती राज को केवल विकास की मशीनरी बनाया जाता है तो इससे ग्रामीण जनता अधिक प्रोत्साहित नहीं होती। पंचायती राज का कानूनी स्वरूप सरकारी अधिकारियों के दृष्टिकोण से बनता है। इसमें

तीन विशेषताएं हैं। यह पंचायती राज संस्थाओं के विकास में काम करने के पक्ष पर ही अधिक जोर देता है। यह पंचायती राज संस्थाओं को सरकारी एजेंसी के रूप में मान्यता देता है और उन्हें जो अधिकार दिए गए हैं उनका दुरुपयोग न हो, इसलिए सतर्कता बरतने की बात करता है। इस दृष्टिकोण में पंचायती राज संस्थाओं की सत्ता की अपेक्षा उनके सेवा कार्य पर अधिक जोर दिया गया है। उनके कर्तव्यों पर अधिकारों की अपेक्षा अधिक बल है। उन्हें अधिक उत्तरदायित्व सौंपने के स्थान पर सौंपे गए उत्तरदायित्वों के दुरुपयोग के प्रति सतर्क रहने की दिशा में विशेष जोर दिया गया है।

इस प्रकार एक गम्भीर समस्या यह है कि पंचायती राज की कार्य प्रणाली से उभरते हुए उनके इन यथार्थ स्वरूपों की विभिन्न कल्पनाओं के बीच उत्पन्न खाई को कैसे पाटा जाय। इसके लिए कुछ अन्य तथ्यों पर विचार आवश्यक है।

पंचायती राज की भूमिका

पंचायती राज संस्थाएं वास्तव में अब तक लगभग सरकारी एजेंसी की भूमिका ही निभा रही हैं इसलिए ग्रामीण स्तर पर वे विचार प्रक्रिया का केन्द्र नहीं बन पाई हैं और ग्रामीणों में पहल करने की शक्ति जागृत नहीं कर सकी हैं। केन्द्रीयभूत राष्ट्रीय नियोजन की प्रणाली में काफी हद तक ऐसा होना अनिवार्य भी है। यदि विकेन्द्रित लोकतन्त्र का कोई अर्थ है और यदि पंचायती राज को भी सामुदायिक विकास कार्यक्रम की भांति असफल नहीं हो जाना है तो नियोजन की दिशा में पंचायती राज संस्थाओं को धनराशि स्वीकृत करने और योजना क्रियान्वित करने की दिशा में कुछ स्वतन्त्रता देने की आवश्यकता को महसूस करना होगा।

पंचायती राज संस्थाओं का सत्तात्मक स्वरूप उनके विकासात्मक स्वरूप से अधिक विकसित हुआ है। इस बात की मान्यता देनी होगी कि विकेन्द्रीकृत लोकतन्त्र के रूप में पंचायत राज संस्थाओं को सत्तात्मक स्वरूप देना होगा।

पंचायत राज से ग्रामीण गुटबन्दी ज्यादा बढ़ी है और सर्व सम्मत चुनावों की प्रवृत्ति कम है। सत्ता के आधार पर चलने वाली गुटबन्दी के कारण पंचायतें भी अनेक गुटों में बंट गई। इसका नतीजा यह हुआ है कि पंचायतों को मिलने वाले लाभ में भी पक्षपात का तत्व आ गया है। इससे योजना के लक्ष्यों की पूर्ति में भी प्रभाव पड़ा है। यह प्रवृत्ति लोकतन्त्र के भी प्रतिकूल है। इससे गांव की सामाजिक एकता पर भी प्रभाव पड़ता है।

पंचायती राज और नियोजन प्रक्रिया

यह नहीं कहा जा सकता कि पंचायती राज संस्थाएं वास्तव में नीचे के स्तर पर नियोजन की प्रक्रिया से सम्बन्धित हैं। और इससे उनके स्वरूप की कल्पना करने में अनेक प्रकार के प्रश्न खड़े होते हैं। क्या हमारे केन्द्रीयभूत नियोजन की प्रणाली में निचले स्तर पर नियोजन की व्यवस्था के साथ तालमेल बैठ सकता है तथा भारत जैसे विकासशील देश में निचले स्तर पर नियोजन की क्या सीमाएं होनी चाहिए? किस स्तर पर पंचायत राज संस्थाओं को योजना के क्रियान्वियन में नियोजित किया जाय? उनके नियोजन का कोई न्यूनतम क्षेत्र निर्धारित कर दिया जाय?

एक प्रश्न यह भी है कि क्या पंचायत राज संस्थाओं को केवल योजना में सहयोग देने की भूमिका ही अदा करनी है या उन्हें लोकतन्त्र की वास्तविक इकाई बनाना है और इस दिशा में शिक्षा की क्या भूमिका अदा करनी है।

एक समस्या सरकारी और गैर सरकारी व्यक्तियों के आपसी सम्बन्ध की भी है। इससे पंचायती राज संस्थाओं की कार्य प्रणाली पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। यह सही है कि यह केवल मनोवैज्ञानिक तालमेल की समस्या है जो कुछ समय बाद उपलब्ध हो जायगा। फिर भी यह विचार करना आवश्यक है कि इस प्रश्न पर विचार किया जाय कि दोनों पक्षों के बीच समन्वय स्थापित करने की दिशा में क्या प्रयास किए जाय ? प्रत्येक इकाई की शक्ति की दृष्टि से भी पंचायती राज का अध्ययन करना उचित होगा। 'राजस्थान के सन्दर्भ में निम्नलिखित बातें विचारणीय हैं।

ग्राम सभा विकसित नहीं

ग्राम सभा अभी तक स्वरूप नहीं ले सकी है। इससे अनेक महत्वपूर्ण प्रश्न पैदा होते हैं। क्या पंचायत को मजबूत बनाने से ग्राम सभा मजबूत होगी या मजबूत ग्राम सभा बनाकर सुदृढ पंचायत की स्थापना की जा सकती है ? क्या ग्राम सभाएं बहुत दुर्बल हैं क्योंकि इन्हें वास्तविक अधिकार प्राप्त नहीं। एक प्रश्न यह है कि पंचायत राज के वर्तमान विकासात्मक ढांचे में ग्राम सभा का स्तर और भूमिका क्या हो ? गांवों की वर्तमान स्थिति को देखते हुए ग्राम सभा के स्वरूप और वास्तविक आन्तरिक स्वरूप की सहज ही कल्पना की जा सकती है। पंचायती राज की त्रिमुखी प्रणाली में ग्राम सभा का क्या स्थान हो और ग्राम ब्लाक तथा जिले में से कौनसी इकाई को ज्यादा मजबूत बनाया जाय ?

पंचायतें और केन्द्रीय नियोजन

एक समस्या यह है कि पंचायत राज और राज्यस्तरीय या केन्द्रीय स्तरीय संसदीय लोकतन्त्र में समन्वय कैसे स्थापित किया जाय। यह समन्वय स्थापित करने का कोई प्रयत्न किया जाय या अपने आप प्राकृतिक रूप से तालमेल बैठने दिया जाय। क्या राजनीति दलों को पंचायत चुनावों से अलग रखा जाय ? विधायकों की पंचायत राज के सम्बन्ध में क्या भूमिका हो।

इस तथ्य से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि पंचायत राज से एक समस्या जनक गतिशीलता उत्पन्न हुई है जिसके कारण पंचायती राज संस्थाओं को स्थानीय संस्थाओं का स्वरूप देने के लिए नीचे से ऊपर की ओर दबाव पड़ रहा है। पंचायती राज के विकसित होने [illegible] स्वरूप की कल्पना करते समय इस तथ्य को भी नजरन्दाज नहीं किया जा सकता।

स्वरूप उद्देश्य नहीं साधन

ऐसी स्थिति में पंचायत राज संस्थाओं को क्या स्वरूप दिया जाय यह एक समस्या है। क्या देश भर में एक ही स्वरूप लागू कर दिया जाय या विभिन्न राज्यों में अलग अलग प्रयोग चलने दिए जाय जिससे जो प्रयोग सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध हो उसे बाद में अंगीकार कर लिया जाय। इस दृष्टि से पंचायत

राज के लिए बनाए गए नियमो, उपनियमो और पचायत राज के उद्देश्या के बीच तालमेल होना चाहिए। पचायती राज का स्वरूप निर्धारित करना निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति का साधन है, अपने आप म कोई लक्ष्य नहीं हैं। खतरा यह है कि पचायत राज का स्वरूप क्या हो इसी बात को मूल लक्ष्य न समझ लिया जाय। इस दिशा म सतकता जरूरी है। पचायत राज के उद्देश्या पर अलग विचार न करके, पचायत राज सस्थाओ का स्वरूप निर्धारित करते समय उद्देश्या पर एक साथ विचार किया जाना चाहिए।



CONCEPT OF PANCHAYATI RAJ

SOME BROADER ASPECTS

By Shri Jayapral ash Narayan

I should like to deal with broader aspects of the concept of Panchayati Raj We have looked at from the limited point of view whether they are units of self governments or agencies of state Governments We say both, but primarily salf government I think it would be taking a very limited view or if we understood Panchayati Raj only in that sense I have spoken about this problem and written about it In my booklet ' Swarajya for the People I have dealt with it briefly There has been further development in my thinking since then Some day I hope I will be able to write them However there are three ideas to put before you in connection with the concept of Panchayati Raj It is really one single idea but with different parts which when put together, make it a whole I think that the concept that has been accepted is the concept of Panchayati Raj as a new kind of society and social order We can find indication of this society in Gandhi ji s writings and western authors who have written on community By and large there are two concepts of social organisation today One is the concept prevalent in the western societies Western societies are what has been called Mass Societies though there is no society which is hundred percent mass society If you take European part of the world you also have rural and urban communities, professional communities, commui ties of artists, doctors etc There are local commnities also sense in which we use the word Even in the U S A, which is an example of mass society per excellence There are communities as a result of pressures of space problems of detail, like parking etc People are going out to work 25 to 50 to 100 miles away I think this is in response to cultural needs of the people of big cities that have grown, which derives them in search of countryside which has smaller habitations They are thus, deliberately establishing more of shared life There is thus no society which is 100 percent mass society There are populations extensive or less extensive, which can be described as mass societies because of their predominantly mass character

THE MASS V/S THE COMMUNITY

In Communist idealogy the word community has a comprehensive meaning It is a society made of communities that is village soviets, soviets in factories, etc To what extent is would be possible to develop communist societies and the]societies based on communities together is very difficult to say The path followed by the communist societies both economically and politically, shows that there will be more of organic principle in them than that in the mass society Let us take the example a heap of sand near a sea shore You have in-organic mass separate from each other It is 100 percent mass society In human society it is not possible to have such a society since there is family Because human society will not exist without the basic unit-the family The problems of children have to be taken up by parents as their problems If you have a perfect mass society it will be like a heap of sand On the other hand, the community is like a body made of living selves They are all Inter--realated However, there is no mass society in which there is no inter-relation that is matter of degree

THE ESSENTIAL CHARACTERISTIC OF A COMMUNITY

What are the characteristics of a community The first thing a community should have a sense of indentification with it by the members In the village, there is self indentification but in a city there is no identification of the same degree The village has an identity

Community should have also wholeness about it and a body of people living their life together, working performing marriages, playing together, living together dining together When we say that community has a sense wholeness we mean that most activities of human life are carried on together In a highly industrialised society it may not be possible that the whole working population finds employment in that community alone The concept of wholeness, therefore, does not apply for example on the community of artists, doctors, etc It is a partial community because there the sense of belonging or participation exists only for a particular activity In a community you have this sense spread over all the important activities of life

The third characteristics community is a sense of mutuality and belonging There is a sense of belonging to each other In the mass society, it almost disappears In a community that sense is highly developed and covers a very wide field of human life This

sense of mutuality results in sharing in cooperation, sharing joys and sorrows of life, cooperating with each other This leads to development of a sense of responsibility in members of the community You don't feel in Delhi that degree of sense of responsibility as you feel in a village Here the concern is felt only in an impersonal way This is not an individual commitment but it is a social and mass commitment The whole society feels an obligation towards the invalid, the handi capped, children persons of old age, etc Community is an organic society in which one is inter-ralated with another in the manner I have stated

COMMUNITY-THE BASIS OF PANCHAYATI RAJ

If the underlying concept of social organisation which I have mentioned is not there, Pancnayati Raj will be merely in instrument for the people to take in some political decision at their leval and no more They can think only in terms of powers and resposibilities given to them They will not be bodies having wider vision I personally think that it has not been accepted or discussed at Udaipur We should go beyond the partical concept of Prnchayati Raj because this concept cannot fully discharge its obligations if it was not associated with a society which is modelled in this fashion If this is the underlying social content behind Panchayati Raj, the question would be how do we extend the concept of the community to whole of the society- society made up of communities as I have described It will have to be geographical also There has to be an optimum or a minimum population there is no sense in thinking that community will remain as villages are to-day Just we conceive three tiers of political self government bodies, we should also conceive community- of communities at block level A block may have a population of 65 thousand out of 40 thousand may be voters, therefore, political responsibility is discharged individually The communiterian concept is that a block area is made of 30 villages eacn with a population of 2 to 4 thousands There 30 villages are 30 communities from a larger community Panchayat Samiti is a community of these communities and member represents communities At the block level if the communitarian concept is maintained, Panchayat Samiti represents 30 primary communities It is a secondary community and likewise up wards It will be utopian to think that there will be a 100 percent a communitarian society It can be possible, of course through the institution of Panchayati Raj to convert local communities into secondary communities etc It will also be possible to create new Urban communities which will be communitarian to a very large extent May be even in a large community you do not have engineers, teachers, etc and they come

from somewhere else outside Switzerland is a good example of communitarian society to a very large extent Israel is another example where you have cooperative villages I do not know if you have read about communities at work in France It is very interesting development though it does not seem to be making much progress It is being swamped by the mass society In the book called "All Things Common a French lady has explained the functioning of the community Take a 'shoe makers cooperative society' or weavers coperative society They are not communities but for economic purposes, some persons have come together while the rest of life is lived independently In the communities at work, they have taken the several steps beyond the persons life It is not only a cooperative society, for production sale or distribution but also for living the rest of life on a community basis Decision for each individual member is taken jointly This principle could be applicable to a few urban communities as well

Communitarian society in a technical age will be an agro industrial society It has got to be so if it has to follow a pattern of life as a whole and mutually inter dependent development carrying out agriculture and industries on a regional basis-- the region being larger or smaller depending on many factors like raw material, power, etc





पंचायती-राज

—डा० मूलचन्द

यह बहुत स्पष्ट है कि भारत में वैदिक काल से पंचायतों का अस्तित्व रहा है। किन्तु आज से पहले कभी भी स्थानीय शासन का अंग नहीं रही। प्राचीन काल में पंचायतें अदालती मामले निपटाया करती थीं आपसी और आन्तरिक विवाद के मामले सुलझाती थीं और राज्य की ओर से कर वसूली का काम करती थीं। पंचायत एक ग्रामीण संगठन के रूप में गांव के सामाजिक जीवन का केन्द्र बन गई थी और यह लगभग राजकीय प्रभाव से पूर्णत मुक्त होकर कार्य करती थीं। सरकार उस समय तक कोई हस्तक्षेप नहीं करती थी जब तक उसे भू राजस्व ठीक ढंग से मिलता रहे। इसलिए सरचार्ल्स मेटकाफे ने पंचायतों को ऐसे लघु गणतन्त्रों की संज्ञा दी है जिन्हें वे सभी वस्तुएं उपलब्ध थीं जो वे अपने भीतर चाहते थे और उस स्थिति में भी उनका अस्तित्व बना हुआ था जहां किसी व्यवस्था का अस्तित्व बना रहना कठिन होता है।

प्राचीन और अर्वाचीन स्वरूप

यह समझना भूल होगी कि प्राचीन काल में पंचायत गांव के स्थानीय शासन का अंग थी। वर्तमान लोकतान्त्रिक शासन में स्वायत्त शासन संस्थाओं का स्वरूप इतना नया है कि हमारे देश के प्राचीन इतिहास में राजनीय सत्ता का प्रतिनिधित्व करने वाली लोकतान्त्रिक स्वायत्तशासन संस्थाओं को खोज करना मृग मरीचिका होगी। हमारे गांवों का जीवन ऐसी राजकीय सत्ता द्वारा संचालित था जो उसमें कम-से-कम हस्तक्षेप के सिद्धान्त में विश्वास करती थी। ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के केन्द्रीय शासन के अन्तर्गत पंचायतों का अस्तित्व समाप्त हो गया।

देहातों से आबादी का शहरों की ओर निष्क्रमण, प्रचार, साधनों का विकास, व्यक्तिवाद की भावना की प्रबलता आदि कुछ ऐसे कारण थे जो इस संस्था (पंचायत) के पतन में सहायक हुए। १९ वीं शताब्दि के अंत तक जब मेटकाफे, माल्कम, एलफिंस्टन और मुनरो ने उत्तर, पश्चिम और दक्षिणी भारत के जीवन के बारे में अपने ग्रन्थ लिखे, प्राचीन ग्राम परिषदें व्यवहार रूप में अन्यय हो चुकी थीं।

स्थानीय समितियों का निर्माण

बाद में अंग्रेजों के शासन काल में देहाती क्षेत्रों में स्थानीय संस्थाओं का नए शासन के अंग के रूप में निर्माण किया गया। ये संस्थाएं वित्तीय प्रशासन के विकेन्द्रीकरण के फलस्वरूप पैदा हुई थीं। क्योंकि केन्द्रीय सरकार का कार्य भार बहुत बढ़ गया था। लार्ड मेयर ने १८७१ में एक स्थानीय विधि-अधिनियम पास किया। इस अधिनियम के तहत स्थानीय समितियों को प्रशासनिक कार्य सौंपे गए जिनमें सड़कों, अस्पतालों स्कूलों बाजारों आदि की देख रेख तथा सफाई और रोग निरोध के प्रयत्न शामिल थे। बाद में लार्ड रिपन ने सन् १८८२ में स्थानीय संस्थाओं का एक जाल बिछाने का सुझाव दिया। ऐसी संस्थाएं जो शहरी और देहाती दोनों क्षेत्रों में काम करें और जनता को स्वशासन का अनुभव प्रदान कर सकें।

संविधान की व्यवस्था

इन स्थानीय संस्थाओं ने हमारे देश की जनता को स्थानीय स्वशासन के मार्ग में किस हद तक प्रशिक्षित किया यह एक दूसरा विषय है, किन्तु यह बात अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि हमने संविधान की धारा ४० के तहत अपने देश में जो पंचायती राज लागू किया है वह पूर्णतः एक नई पद्धति है। यह पद्धति हमारे देश की प्राचीन पंचायतों और ब्रिटिश सरकार द्वारा स्थापित समितियों की पद्धति-दोनों से भिन्न है। इस सत्य को हम जितना अधिक समझ लेंगे उतना ही यह हमारी पंचायती राज की संस्थाओं के सही ढंग से संचालन के लिए उपयुक्त होगा। संविधान की ४० वीं धारा में ग्राम पंचायतों के संगठन के लिए कदम उठाएंगी और उन्हें ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान करेगी जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में काम करने योग्य बना सकें। संविधान में पंचायतों को पुनर्जीवित या पुनर्गठित करने की व्यवस्था नहीं है, जैसा कि आसानी से किया जा सकता था, यदि संविधान सभा की मंशा पुरानी पद्धति को पुनर्जीवित करने की होती। संविधान सभा की मंशा ब्रिटिश पद्धति पर पंचायतों के विकास की भी नहीं थी।

सफलता का आधार

ग्राम पंचायतों को संगठित करके उन्हें आवश्यक सत्ता और अधिकार देना हमारे संविधान निर्माताओं ने आवश्यक समझा, क्योंकि उन्होंने यह अनुभव कर लिया था कि संसदीय लोकतन्त्र के आधार पर बनी सरकार में इस तरह की संस्थाओं के निर्माण को टाला नहीं जा सकता। ऐसी लोकतांत्रिक सरकार, जो केन्द्रीयस्तर पर भी लोकतान्त्रिक हो उस समय तक संतोषजनक ढंग से काम नहीं कर सकती जब तक उसे लोकतांत्रिक आधार पर गठित स्वायत्त शासन संस्थाओं का समर्थन प्राप्त न हो।

यद्यपि संविधान निर्माताओं ने ग्रामीण स्वायत्त शासन के लिए गाव को आधार भूत इकाई माना है देहाती स्वायत्त शासन की सबसे छोटी इकाई के आधार का निर्धारण आदि सम्बन्धी प्रश्न उन्होंने राज्य सरकार पर छोड दिए।

विभिन्न प्रदेशों के अधिनियम

करीब करीब देश के सभी राज्यो म ग्राम पचायतो की स्थापना हो चुकी है। उत्तर प्रदेश पचायत राज अधिनियम १९४७ म यह व्यवस्था है कि गाव के सभी बालिग निवासी मिल कर गाव सभा बनायेंगे और एक कायसमिति का चुनाव करेंगे जो ग्राम पचायत कहलायेगी। उडीसा ग्राम पचायत अधिनियम १९४८ और आसाम देहाती पचायत अधिनियम सन् १९४८ म भी यही व्यवस्था है। बम्बई ग्राम पचायत अधिनियम १९३३ (सन् १९४९ में सशोधित) मद्रास ग्राम पचायत अधिनियम १९५०, पजाब ग्राम पचायत अधिनियम १९५२ और मध्यप्रदेश पचायत अधिनियम १९४६ मे ग्राम सभा का उल्लेख नहीं है। इन अधिनियमो म बालिग मताधिकार द्वारा पचो के निर्वाचन की व्यवस्था है। निर्धारित सख्या म निर्वाचित पच मिलकर पचायत का सगठन करते हैं। विभिन्न प्रदेशो द्वारा बनाए गए कानूनों म निम्नलिखित मूलभूत दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं—

१ पचायत सस्थाओ की व्यापक रूप से प्रतिष्ठा की जानी चाहिए। गावो मे सिद्धान्तत निर्धारित न्यूनतम आबादी पर पृथक पचायतें बनी हैं। निकटतम छोटे छोटे गावों को जहा आबादी निर्धारित न्यूनतम सख्या से भी कम है आपस मे मिलाकर पचायत बनादी गई है। यदि किसी गाव की आबादी बहुत बडी हो तो उसके लिए अनेक राज्यो म दो या दो से अधिक पचायतें बनाने का प्रावधान किया गया है। खास तौर से बिहार में इस सिद्धान्त के पीछे यही मूल धारणा है कि पचायत का गठन हजार या दो हजार की आबादी पर होना चाहिए।

२ पचायत का गठन पूर्णत लोकतान्त्रिक आधार पर होना चाहिए। किसी किसी राज्य मे सरपच का चुनाव पचायत क्षेत्र के सभी बालिग व्यक्ति करते हैं और किसी किसी राज्य म पच स्वय अपने म से सरपच का चुनाव करते हैं। पचो का चुनाव गाव को विभिन्न वार्डों म विभक्त करके किया जाता है। महिलाओं और हरिजनों का प्रतिनिधित्व भी सरकार ने वाछनीय माना है। पचायत म किसी भी सदस्य का मनोनयन सरकार द्वारा नहीं होता।

३ पचायतो के काय दो भागो म विभाजित होने चाहिए। अनिवाय और ऐच्छिक। अनिवार्य कामो में सफाई और रोग-निरोधक काय शामिल किए जाने चाहिए और ऐच्छिक-कार्यो मे अनेक काम शामिल किए जा सकते हैं। उदाहरणाथ गरीबो को राहत पहुचाना, कृषि विकास सहकारी खेती, वाचनालयो और पुस्तकालयो की व्यवस्था, खेल-कूद तथा व्यायामशालाओ की व्यवस्था लघु उद्योगो का विकास आदि तथा अन्य काय जो पचायत आवश्यक धन और प्रशासकीय कुशलता उपलब्ध होने पर हाथ में लेना चाहे।

जनपद सभा या जिला बोर्ड को पचायतो को अपने क्षेत्रीय सत्ता के रूप म प्रयोग करने का अधिकार रहना चाहिए और उसके लिए राज्य सरकार की अनुमति प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं रहनी चाहिए।

अदालती अधिकार

सभी राज्यों में न्याय करने के लिए बनी पंचायतों को कुछ अदालती अधिकार भी दिए गए हैं। अनुभव से इस कदम के पीछे निहित विवेकशीलता सिद्ध हो चुकी है। न्याय पंचायतें हमारे प्राचीन इतिहास की परम्पराओं के अनुकूल हैं। व्यवहारिक दृष्टि से भी पंचायतों को एक सीमित क्षेत्र में अदालती अधिकार प्रदान करना लाभप्रद सिद्ध हुआ है। वकीलों को न्याय पंचायत में पैरवी करने की अनुमति नहीं दी जाती। इससे गांव वासियों पर मुकदमे बाजी के खर्च का जो भार पड़ता था उससे वे बच गए हैं। इसके अलावा छोटे छोटे मामलों के लिए जिले की अदालतों में जाने से जो परेशानी होती थी उससे भी उन्हें राहत मिल गई है। इसके अलावा स्थानीय व्यक्ति जो आम तौर से मुकदमे के तथ्यों से परिचित होते हैं और झूठे गवाह सामने के मामले लगभग समाप्त हो गए हैं।

कुछ नई बातें

इस तरह की ग्राम पंचायतों सम्बन्धित कानून में खास बातें नवीन हैं—(१) पंचों और सरपंचों के चुनाव की पद्धति कुछ पेचीदा है। हमारे देश की देहाती जनता चुनाव लड़ने के तौर तरीकों की औपचारिकताओं से पूर्णत: अनभिज्ञ है। हमारे सम्पूर्ण इतिहास में चुनाव केवल बड़ी संस्थाओं के गठन के लिए ही उपयुक्त माना गया है। चुनाव गांवों में छोटी-छोटी पंचायतों के निर्माण के लिए अत्यधिक अनुपयुक्त समझा गया है। (२) दूसरी नई बात यह है कि पंचायतों को प्रशासनिक काम भी सौंपे गए हैं। अभी तक इन प्रशासनिक और नागरिक कार्यों के सफल संचालन के देश में बहुत कम उदाहरण देखने को मिले हैं।

प्राचीन धारणाएँ और चुनाव

समस्त विश्व भर के देहातों में—किन्तु खास तौर से हमारे देश के देहातों में उन लोगों का सम्मान होता है जो चरित्रवान हों। लोगों को सलाह मशविरा देकर उनकी मदद करते हों और गाढ़े समय में काम आ सकते हों। जब पंचायत का ऐसे लोगों का नेतृत्व प्राप्त हो जाता है तो जनता में उसके प्रति विश्वास पैदा होता है। लेकिन ऐसे लोग सदैव चुनाव लड़ने को तैयार नहीं होते। क्योंकि चुनाव से आम तौर पर जातिवाद और गुटबाजी को बढ़ावा मिलता है। जैसा कि भारत में हुआ भी है। इसलिए पंचायतों में चुनाव की लोकतान्त्रिक पद्धति अपनाने का परिणाम यह हुआ है कि अनेक कठिनाइयां उत्पन्न होने के साथ ही समन्वय और उच्च चरित्र की धारणाओं को आघात लगा है जो "चार्ल्स मटकाफ" के अनुसार हमारे लघु गणतन्त्रों में युगों से विद्यमान थी।

नेताओं का दायित्व

हमारे नेताओं को चाहिए था कि वे इन प्रश्नों पर विचार करते और स्थिति की परिकल्पना करके पंचायतों की चुनाव पद्धति में सुधार करते। हमारा दृष्टिकोण पूर्णत: सिद्धान्तवादी रहा और हमने अपने इतिहास का समुचित अध्ययन करके निश्चित परिणामों की कल्पना करने का अवसर खो दिया। हमने अपनी वास्तविक स्थिति और सुपरिचित तथ्यों को ध्यान में नहीं रखा। यह समझ से परे

की बात है कि पचायतों को इस हद तक अनिवाय और ऐच्छिक प्रशासनिक व नागरिक काम क्या सौंप गए हैं, जबकि उनके पास उन्हें सुचारू रूप से पूरा करने के लिए पर्याप्त धन नहीं है। उनकी क्षमता भी नगण्य है।

सीमित धनराशि का अधिकाश भाग सचिवो आदि की नियुक्ति पर व्यय करना पड़ता है। पचायत कानून के तहत इतनी अधिक बैठकें बुलानी पडती हैं कि बठको मे निपटाने के लिए काम बहुत कम रह जाता है। इसका नतीजा यह होता है कि पचायत की बठको में पचो की रुचि बहुत कम रह जाती है और केवल ऐसे एक दो व्यक्ति जो सत्ता का दुरुपयोग अपने स्वार्थो की सिद्धि के लिए करना चाहते हैं, पचायतो की बठको मे आते रहते हैं। इसलिए पचायतो का वातावरण सरकारी प्रभुत्व से पूर्ण और कृत्रिम हो गया है। इसका परिणाम आशा के विपरीत हुआ है।

द्विमुखी पद्धति

इसके अतिरिक्त त्रि मुखी पचायत प्रशासन के स्थान पर यदि द्वि-मुखी पद्धति अपनाई जाती तो अधिक बेहतर होता। कुछ गावो को मिलाकर पचायत बनायी जाती और उसके ऊपर जिला परिषद होती। पचायत का निर्माण कुछ गावो को मिलाकर १० या २० हजार की आबादी पर किया जाना चाहिए था। ऐसी पचायत के साधन भी अधिक होते और जातिवाद और गुट बाजी भी चुनाव के समय अधिक नहीं पनप पाती। वर्तमान विकास खण्ड का क्षत्र इस दृष्टि से बहुत बड़ा होता है कि उसमे किसी प्रकार की एक सूत्रता की कल्पना कीजाय तथा आर्थिक और तकनीकी विकास की इकाई मानकर उस विचार किया जाय इस दृष्टि से वह बहुत छोटा है। इस दृष्टि से जिला उपयुक्त इकाई है। इसलिए जिला स्तर पर निर्मित परिषद को प्रशासनिक व अन्य विकास के काय सुविधा पूवक सौंपे जा सकते हैं और उसके सफल सचालन की आशा की जा सकती है, जो खण्ड स्तर पर सम्भव नहीं है।



पचायती राज और उसका समाज दर्शन

—श्री कामेश्वरप्रसाद बहुगुणा

भारत म पचायतो राज की स्थापना भारतीय लोकतन्त्र की प्रौढता का लक्षण है। आज कल पचायती राज पर दो दृष्टियों से विचार किया जा रहा है। एक के अनुसार उसमे पचायतें शासन की प्रशासनिक अग हैं और दूसरे के अनुसार वे स्वशासन की स्वतन्त्र इकाइया ह। पचायता राज पर १९६४ म उदयपुर म हुई एक गोष्ठी म जिसम केन्द्रीय और सभी सरकारों के प्रतिनिधि शामिल थे यह दूसरा विचार मान लिया गया है। हमारे सविधान म भी पचायतो को स्वशासन की इकाइया माना गया है। सविधान में ४० वें परिच्छेद म कहा गया है कि "राज्य ग्राम पचायतो का सगठन करने के लिए अग्रसर होगा तथा उनको ऐसी शक्तिया और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्तशासन की इकाइयों के रूप मे काय करने के लिए योग्य बनाने के लिए आवश्यक हो।' अत पचायती राज केवल शासकी एक प्रणाली मात्र नहीं है वह तो एक नवीन समाज व्यवस्था या जसा गाधीजी ने कहा था—सच्चा प्रजातन्त्र कायम करने का एक वधानिक और रचनात्मक आन्दोलन भी है। यह प्राचीन भारत मे प्रचलित पचायत राज व्यवस्था से भी पृथक चीज है जिसे मनु की भाषा म गुल्म व्यवस्था और ग्राम-व्यवस्था कहा जाता था। किन्तु वे गुल्म या ग्राम भी सामान्य प्रशासन की एक सुविधाजनक प्रणाली मात्र थे। आज की भाति उनके पीछे समाज व्यवस्था का कोई विशिष्ट रूप देने, जो आज उस वक्त के मुकाबिले हमारे लिए अत्यन्त अनिवाय हो गया है, या समाज रचना की कोई वधानिक दृष्टि नहीं थी। वतमान पचायतीराज का इसी कारण वास्तविक अर्थों मे लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण भी कहा गया है। यह एकदम नवीन विचारधारा है जिस पर गाधीजी का स्पष्ट प्रभाव है और जो नितात नवीन समाज शास्त्रीय प्रयत्न भी है। अत हम पचायती राज क मूल म निहित सामाजिक दर्शन को खूब अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए।

'मनुष्य सामाजिक प्राणी है" यह कथन वज्ञानिक दृष्टि से सत्यमूलक नहीं है। डार्विन के 'जीवन सघष म योग्यतम का ही अस्तित्व' वाले सिद्धान्त की तरह इस सिद्धान्त ने भी बडी गडबड मचाई है और यह आवश्यक ही मानना चाहिये कि परस्पर विरोधी होते हुए भी पश्चिम मे ये दोनों परिधियां एक में मिल गई हैं। समाज वास्तव म समुदायों से मिलकर बनता है और समुदाय दो व्यक्तियों के पारस्परिक चेतन सम्बन्धों का फल है। किन्तु ये सम्बन्ध असीमित या अतिसीमित नहीं होते ये मध्यवर्ति

होत हैं। और हम वास्तव में व्यवहार मे सदा ही समाज से अपने समुदाय का ही श्रय लेत हैं। समुदाय से बाहर मनुष्य का अस्तित्व नहीं होता और समाज से मनुष्य का सम्बन्ध समुदाय के सन्दर्भ और उसके ही मारफत होता है। समाज प्रत्यक्ष और अस्पष्ट होता है किन्तु समुदाय प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट होता है समाज मनुष्य की पकड़ में नहीं होता समुदाय होता है। क्योंकि समाज म पारस्परिकता और प्रमियता नहीं हाती किन्तु समुदाय का तो वह स्वभाव ही है। समाज म स्वार्थों की एक रूपता तथा अभिन्नता की भावना या जिसे समाजशास्त्र म हम भावना कहा गया है, नहीं होनी पर समुदाय मे होनी है। समाज म समग्रता नहीं होती और जब होती है तब उसकी प्रतीति नहीं हो सकती किन्तु समुदाय तो समग्रता और उसकी प्रतीति पर ही टिकता है। मनुष्य न तो शेर की भांति एकाकी रहने वाला जगली जानवर है और न चींटी की तरह झुण्ड प्राणी ही है। वह अकेले म भी डरता है और उसे दूसरे से भी डर लगता है। समुदाय म उसकी ये दोना स्थितिया समायोजित होती हैं किन्तु समाज म ऐसा सम्भव नहीं। समाज वन्तानिका ने मनुष्य म जिस तत्त्व की चाह का जिक्र किया है वह समुदाय और उसकी इकाइया में ही पदा होती है। समुदाय ही मनुष्य की सामाजिकता का अधिष्ठान है। समाज को एक पिंड समूह कहा गया है किन्तु समुदाय तो सम्बन्धों की एक निश्चित और सार्थक व्यवस्था है। समाज म व्यक्ति खो जाता है किन्तु समुदाय म तो वह पनपता है। आज की नागरिक सभ्यता म भी बड़े बड़े नगरों म किये गये अध्ययनों से पता चलता है कि कलकत्ता न्यूयार्क आदि जसे नगरो म भी मनुष्य न छोटे छोटे समुदायों पर ही (यद्यपि व परिस्थिति की प्रतिकूलता के कारण अपूर्ण और पगु ह किन्तु फिर भी एक मात्र सहारा है) जीवन को खड़ा किया है। वास्तव म कोई भी समाज पिंड समाज नहीं हो सकता अत कहना चाहिये कि मनुष्य सामुदायिक प्राणी है। समुदाय मनुष्य का स्वभाव है और समाज प्रािन्त' है। पश्चिम म मनुष्य को समाजवादी बनाने का जो आन्दोलन चला वह असल म सामुदायिक व्यक्तियो के ह्रास होन के बाद ही चला जिसका कारण तथा कथित औद्योगिक क्रान्ति थी। सामुदायिक व्यक्ति को भारतीय भाषा म पुरुष कहा गया है। जब पुरुष पुरुष न रह कर व्यक्ति बन जाता है तब व्यक्तिवाद पनपता है। व्यक्ति पर उसके आवेग हावी रहते हैं किन्तु पुरुष अपने स्व से चालित होता है। वेदा म इसी कारण पुरुष को पुरी म सोन वाला कह कर परिभाषित किया गया है। व्यक्तिवाद मनुष्य की प्राकृतिक अवस्था है और पुरुषवाद उसकी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक उपलब्धि है। यही पुरुषवाद सामुदायिकता है। क्योंकि व्यक्ति का अस्तित्व तभी कायम रह सकता है जब वह दूसरे व्यक्ति का अस्तित्व भी स्वीकार करता है। यही कारण है कि मनुष्य केवल उसी काम म रुचि लेता है जो उसके तथा उसके हम या हमारा के हित में हो। उसकी पकड म हो और उसके लिए स्पष्ट हो। ऐसा समुदाय ही होता है। यह कोई सयोग मात्र ही नहीं है कि पूजीवादी प्रजातन्त्र और समाजवादी समाजवाद दोनों म ही व्यक्ति स्वतन्त्र्य को आधार माना गया है किन्तु दोनो ही जगह वास्तविक व्यक्ति गायब हो गया है और रह गया केवल तथाकथित समाज जो प्रतिस्पर्धा तानाशाही और गुलामो का पर्याय बन गया है। समाजशास्त्र म पुन जिसे हमने सिम्बोइयिक डेवेलेपमेन्ट नाम दिया है वही सामुदायिक विकास है। इसको प्रकृति न जानने के कारण ही ज्यो ज्या समाजवादी नारा बढता गया ह त्यों त्या व्यक्तिवादी प्रवृत्तियां भी बढ़ती गई हैं और सामाजिक तनावा म वृद्धि हुई है। किन्तु असल में लघु सामुदायवादी समाज ही मनुष्य के लिए स्वाभाविक समाज-व्यवस्था है। यहा भारत म श्री जयप्रकाश नारायण जसे समाज वन्तानिका ने इन समुदायवादी समाज कहा युरोप व अ य पाश्चात्य देशा में इसे हाऊजर जसे विद्वान न समुदायी समाज' और रावट रडफील्ड जसे मानवशास्त्री ने लोकसमाज नाम दिया है।

गांधीजी इसे सर्वोदय समाज या 'रामराज' कहा करते थे। यहाँ तक कि १४ चौदहवीं सदी में प्रख्यात अरब विद्वान इब्नखल्दून ने कहा था कि स्वाभाविक और सही समाज व्यवस्था तो 'तसब्बियत' पर निर्मित होती है जिसका अर्थ या भाईचारा या बंधुभावना। नाम चाहे जो भी दें किन्तु मार्के की बात यह है कि सामाजिक समूहों का निर्माण मानव की सीमाओं के संदर्भ में ही किया जा सकता है और उन समूहों समुदाय ही हो सकते हैं। यही मनुष्य की नैसर्गिक आवश्यकता है। समाजवादी और पूंजीवादी दोनों ही व्यवस्थाओं में अभी तक इस तथ्य की उपेक्षा की गई है और नतीजा यह है कि युद्ध तनाव और अशांति पैदा करने में दोनों ही समान रूप से जिम्मेदार रहे हैं।

फिर समाज में सत्ता का प्रश्न है। मनुष्य जिसमें रुचि रखता है उस पर अपनी सत्ता भी चाहता है। सत्ता के साथ जिम्मेदारी जुड़ी रहती है। वर्ग व्यवस्था का यही आधार था समाज में सत्ता के लिए जिम्मेदारी के बजाय आकर्षण होता है किन्तु समुदाय में मनुष्य को जिम्मेदारी का उसके अधिकारों का अधिष्ठान होती है। हमारा काम यह देखना है कि इस क्रम में व्यवधान पैदा न होने पावे। सत्ता जब तक दूर रहती है तब तक वह केवल आकर्षण ही रहती है जिम्मेदारी नहीं बन पाती यह उसका स्वभाव है। जिम्मेदारी स्वतः स्फूर्त होती है जैसे व्यक्ति के लिए आत्मानुशासन आवश्यक माना गया है वैसे ही समुदाय के लिए भी होना है। यानी अनुशासन तो आंतरिक ही होना चाहिये बाहर लोकसाही में। आत्मानुशासन जिम्मेदार बनाता है तो बाहरी अनुशासन (कानूनी या अन्य) उद्दंडता और तनाव पैदा करता है। गुलामी का कारण होता है। जिम्मेदारी में आत्मविश्वास है किन्तु बाहरी अनुशासन तो व्यक्ति के अविश्वास पर ही टिका होता है। समाज का काम व्यक्ति को जिम्मेदार बनाना है अनुशासित नहीं। यह तब ही हो सकता है जब समाज व्यक्ति की पकड़ में हो और व्यक्ति समाज के निकट। ऐसा पुनः समुदाय में ही हो सकता है व्यक्ति प्रतिष्ठा और सुरक्षा चाहता है और वह भी समुदाय दे सकता है जो कि व्यक्ति के लिए परिचित होता है। प्रतिष्ठा के लिए और सुरक्षा के लिए भी परिचय की आवश्यकता होती है व्यक्ति का सामाजीकरण (समुदायीकरण कहना अधिक ठीक होगा) समुदाय में ही होता है यह बात अब सामाजिक मनोविज्ञान विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान दोनों से मान्य हो गई है। हमारा काम मनुष्य को बदलना नहीं है (यह हम स्वयं मनुष्य होने के नाते कर नहीं सकते) हमारा काम उसे अवसर देना है और अवसर भी समुदाय में ही मिल सकता है।

इस सन्दर्भ में यह सवाल भी खड़ा होता है कि समाज व राज्य क्या पर्यायवाची है? व्यक्तिवादियों ने राज (राज्य ?)—शक्ति बनाई और उसका राजा का पर्यायवाची बन गया। इसी परम्परा के कारण शायद भिष्म पितामह जैसे मनीषी को कहना पड़ा कि राजा ही काल का कारण होता है। (राजो वा काल कारणम् महाभारत) समाजवादियों ने राज्य शक्ति चलाई किन्तु समाज के नाम पर। उनके ग्रंथों में संपत्ति के सामाजीकरण का अर्थ राज्य द्वारा उस पर कब्जा कर लेना ही होता है (यद्यपि अब वे इस धारणा में सुधार कर रहे हैं किन्तु कम्यूनिस्टों का तो अब भी यही विश्वास है)। उन्होंने समाज और राज्य को एक मान लिया। किन्तु वे एक नहीं हैं और न मार्क्स ने ही उन्हें एक माना है। असल में राज्य तो एक समुदाय है और वह दूसरे समुदायों का स्थान नहीं ले सकता। आज पश्चिमी देशों में राज्य ने जब से परिवार आदि समुदायों का काम अपने हाथ में लेना प्रारम्भ किया है (क्योंकि कल्याणकारी राज्य को ऐसा करना ही पड़ता है) तब से

वहा राज्य ही ग्नपा है और वर्गों के समुदाय नष्ट प्राय हो गये है और अब यह बात छिपी नहीं है कि व लोग इस अवस्था मे परेशान हैं। असल म राज्य का काम अनेक कामा म से एक काम है। यहा स्वभाविक विकासक्रम है और हमारा काम इसमे व्यवधान पदा करना नहीं वरन् उसे प्रगति देना है। मार्क्स न भी यही कल्पना की थी किन्तु अन्तर्विरोधो को खोजने की उसकी पिपासा न स्वय उसे ऐसे अन्तर्विरोधो म फसा दिया कि राज्य के मुर्झाने के बजाय समाज ही राज्य म विलीन हो गया है। गाधी न न केवल मार्क्स के उद्धार का माग खोल दिया है वरन् विकास क्रम को भी गति प्रदान की है। ससार म समस्त राजनतिक और सामाजिक चिंतकों का यह अन्तिम श्रेष्ठ स्वप्न रहा है कि एक ऐसा समाज-व्यवस्था कायम होगा जब राज्य अभाव का श्यकता ही नहीं रहेगी। इस मान्यता को तरफ बढने की दिशा मे ही गाधी को न थोरो की इस उक्ति को ही अपना राजनतिक आदर्श बनाया कि 'सर्वोत्तम राज्य न्यूनतम शासन' करता है। थोरो का यह कथन महत्वपूर्ण है किन्तु थोरो इसके अनरूप समाज का निर्माण नहीं कर सके थे गाधी कर सके हैं। अपनी इस आदर्श समाज व्यवस्था को ही गाधी रामराज्य या सर्वोदय कहा करते थे। हमारे स्वातन्त्र्य सग्राम को उन्होन इसी के आधार पर खडा किया था।

अपनी कल्पना के उस आदर्श समाज का चित्र उपस्थित करत हुय गाधी जी न कहा था यह उस जाति विहीन और वर्ग विहीन समाज का चित्र है जिसम न कोई ऊचा है न कोई नीचा है। सारे काम एक स हैं और सारे कामो का मजदूरी भी एक सी है। जिन लोगो के पास अधिक है वे अपने लाभ का उपयोग खुद के लिए नही करत, परन्तु उस पवित्र धरोहर मानकर उन लोगो की सेवा म उसका उपयोग करत हैं जिनके पास कम है।—प्रत्येक व्यक्ति अपने आस पास के वातावरण के लिए जिम्मेदार होता है और सारे व्यक्ति समाज के लिये जिम्मेवार होते है। उसम अधिकारा और कर्तव्यो का नियमन परस्परावलम्बन के सिद्धान्त व तथा परस्पर आदान प्रदान से होता है। ऐसे समाज म उसके अगभूत व्यक्तियो तथा सम्पूर्ण समाज क बीच कोई सघर्ष नही होता और न तो राष्ट्रवाद के सकुचित स्वार्थो या आक्रमक बनन का खतरा रहता न अन्तरराष्ट्रीयता वाद के लिए आत्म बल खान का खतरा रहता है। वे ऐसे समाज की स्थापना के लिये ही स्वराज्य की लडाई लड रहे थे और उन्होन सन १९२५ म ही अपने स्वराज्य की परिभाषा करते हुए कहा था कि ' सच्चा स्वराज्य थोड लोगो द्वारा सत्ता प्राप्त कर लेन से नहीं बल्कि जब सत्ता का दुरुपयोग होता हो तब सब लोगो के द्वारा उसका प्रतिकार करने की क्षमता प्राप्त करके हासिल किया जा सकता है। दूसरे शब्दो मे स्वराज्य जनता म इस बात का ज्ञान पदा करके प्राप्त किया जा सकता है कि सत्ता पर अधिकार करन और उसका नियमन करने की क्षमता उसम है। इस समाज म सत्ता एक साधन होती है जिसका उपयोग समाज की सेवा के लिए किया जाता है। किन्तु गाधी जी मार्क्स की तरह कल्पनावादी नहीं थे। वे जानते थे कि इस समाज की स्थापना के लिए उन्हें उस तरह के सगठन भी खडे करन पडेंगे और ऐसे समाज की राज्य प्रणाली भी भिन्न होगी अत इस सबकी व्याख्या करते हुये उन्होने साफ-साफ कहा था कि 'ऐसा समाज अनगिनत गांवो का होगा। उसका फलाव एक के ऊपर एक के ढग पर नहीं, बल्कि लहरो की तरह एक के बाद एक की शक्ल मे होगा। जिन्दगी मीनार की शक्ल म नहीं होगी जहा ऊपर की तग चोटी को नीचे के चौड पाये पर खडा होना पडता है वहां तो समुद्र की लहरो की तरह जिन्दगी एक के बाद एक घेरे की शक्ल मे होगी और व्यक्ति उसका मध्य बिन्दु होगा।' यह एक ऐसे पारस्परिक सामुदायिक-समाज का चित्र है जहा समाज असख्य लघु समुदायो के केन्द्रापसारी वृत्तों पर खडा है। वहा बुनियादी लघु समुदायो के बहार मध्यवर्ती समुदायो का घेरा है, वे भी पुन कुछ बडे समुदायो से घिरे हैं और यह फलाव अत म फलते फलते विश्व समुदाय बन जाता

है । इन पंचायतों की सबसे मौलिक विशेषता यह है कि क्रमशः बाहरी घेरे की शक्ति (Force) क्रमशः कम होती जाती है । यही राज्य 'लोप' तो नहीं हो सकता (क्योंकि गांधी जी के ही शब्दों में वह तो यूक्लिड के बिन्दु की तरह आदर्श ही है) किन्तु राज्य लगभग 'अदृश्य' हो जाता है । राज्य रेल में उस जंजीर की भांति हो जाता है जो महत्वपूर्ण तो है किन्तु जिसका उपयोग कभी कभार होता है । बहुत से यात्रियों को तो कभी उसका पता भी नहीं होता । राज्य की शक्ति ऐसी बंटी रहेगी । प्रख्यात् विद्वान् श्री सी० ई० एम० जोड ने अपनी पुस्तक 'माडर्न पोलिटिकल थियरी' में एक जगह कहा है कि "यदि सामाजिक कार्य में मानव की श्रद्धा को पुनर्जीवित करना है तो राज्य को काटकर छोटे छोटे क्षेत्रों में बांट देना चाहिए और उन को विकेन्द्रित कर देना चाहिए ।" प्रसिद्ध समाजवादी लेखक श्री जी० डी० एच० कोल ने भी अपनी पुस्तक 'फेबियन सोशलिज्म' में भी यही कहा है । यह कल्याणकारी राज्य से आगे के विकास की सीढ़ी है जहां कल्याण का अधिष्ठान राज्य के बजाय लोक हो जाता है । वास्तव में कल्याण जब राज्य की जिम्मेवारी हो जाती है तो उसका लोकतान्त्रिक स्वरूप तत्काल नष्ट हो जाता है । यही कारण है कि जहां तक लोक कल्याण का प्रश्न है पश्चिम में आज साम्यवादी और पूंजीवादी राज्यों में कोई तात्विक भेद नहीं रह गया है । दोनों ही जगह नागरिक लगभग शून्य बन गया है । श्री डब्ल्यु फाइडमन ने अपनी पुस्तक 'ला इन ए चेंजिंग सोसायटी' में कहा है कि "कल्याणकारी राज्य एक 'रक्षक' 'सामाजिक सेवाओं का प्रदाता' एक औद्योगिक प्रबन्धक, एक आर्थिक नियन्त्रक और एक मध्यस्थ होता है ।" तब बात स्पष्ट है कि नागरिक के लिए क्या बच जाता है ।

कभी कभी पंचायती राज को 'स्थानीय स्वायत्त शासन' या 'स्थानीय स्वायत्त प्रशासन' जैसे नाम भी दिये जाते हैं । किन्तु ये सब भी मध्य युगीन प्रत्यय हैं जब राज्य अपनी सुविधा की दृष्टि से नीचे की कुछ ऐसी संस्थाओं का निर्माण कर लेता था जो उसके उद्देश्यों को प्राप्त करने में और शासन के काम में मदद कर सकें । राज्य उन्हें दिये गये कोई भी अधिकार जब चाहे तब वापस ले सकता था क्योंकि वास्तविक सत्ता उसी के हाथ में रहती थी । हमारा ख्याल है कि हमारे पंचायती राज की मंशा ऐसी नहीं है । यहां तो पंचायतों के कुछ ऐसे बुनियादी आधिकार क्षेत्र हैं जिनका अतिक्रमण राज्य नहीं कर सकेगा । यहां जीवन की मौलिक आवश्यकताओं पर पंचायती संस्थाओं का कब्जा रहेगा क्योंकि स्वतन्त्रता की यही एक मात्र गारन्टी है । और जो काम वे स्वयं नहीं कर सकेंगी उन्हें क्रमशः बाहरी घेरे वाली संस्थायें करेंगी । कहा जा सकता है कि इसमें तो केन्द्रीय सरकार कमजोर रहेगी किन्तु बात एकदम उलटी है चूंकि केन्द्रीय सरकार के पास बहुत कम काम होगा और वह महत्वपूर्ण होगा जैसे तार व सचार सेवायें, बड़े बड़े उद्योग और सुरक्षा तथा विदेशी व्यापार आदि इसलिए सरकार का ध्यान इन्हीं पर रहेगा और वह अपने काम को सक्षमता से कर सकेगी । हां उसमें नौकरशाही अवश्य ही समाप्त हो जावेगी किन्तु नौकरशाही तो प्रजातन्त्र का सबसे खतरनाक दुश्मन है और उसे तो किसी भी हालत में समाप्त करना ही चाहिए । नौकरशाही भी मध्ययुगीन राज्य-व्यवस्था का स्वभाव है और असल में उपनिवेशवाद की अवशेष है । श्री पार किंसन ने जब नौकरशाही को राज्य की नब्ज बताया था तो वे उस वक्त तक लोकशाही से परिचित नहीं थे न उन्हें यही मालूम था कि राज्य वृहद समाज व्यवस्था का एक अंग मात्र है ।

इसलिए पंचायती राज केवल प्रशासन का एक सुविधाजनक ढंग ही नहीं वरन् एक नई समाज व्यवस्था की रचना की ठोस योजना है । आज विज्ञान की प्रगति ने उसे और सरल बना दिया है । अब स्वतन्त्रता समानता और बन्धुत्व के आदर्श को मानव जीवन का व्यावहारिक अंग बनाने का अवसर आ

गया है। असल में आज तक हमने मानव पर उसके वातावरण से अलग करके विचार किया है इसे कार्ल मनहाइम ने स्वरूपकृत मानव नाम दिया है किन्तु मनुष्य तो असल में एक ठोस वास्तविकता है और हमें उसे ऐसा ही मान कर चलना होगा। हमें ऐसा समाज चाहिए जो मानव को एक मानव बनने की कल्पना से मुक्त कर सके। ऐसा समाज केवल वही हो सकता है जो मानव की पकड़ में हो और उसके लिए स्पष्ट हो। जिसके साथ वह स्पष्ट क्रिया प्रतिक्रिया कर सके। श्री आर्थर फिंक प्रभृति विद्वानों ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक दि फिल्ड आफ सोसल वर्क में एक आर्गेनाइजेशन ग्रुप एण्ड मेंटल हेल्थ ए रिपोर्ट टु द इन्टर नेशनल कांग्रेस आफ मेंटल हेल्थ को उद्धृत किया है जिसमें कहा गया है कि 'मानव समाज की सबसे महत्वपूर्ण और सार्थक सामाजिक इकाई वह छोटा सामाजिक समूह है। उन्होंने यहां समूह का प्रयोग समुदाय के लिए किया है —ले०) जिसमें परस्पर अविरोधी और एक दूसरे को निकट से जानने वाले व्यक्ति एक साथ रहते हैं और जिनके अन्तर्व्यक्तिक संबंध प्यार विश्वास, आपसी व्यवहार और समझ पर आधारित होते हैं। ऐसे ही समूह में रह कर व्यक्ति को इस बात की सबसे अधिक अनुभूति होती है कि वह समाज का एक सदस्य है। स्पष्ट है ऐसा सामुदायिक समाज ही हो सकता है और यह समाज अति वायत लोकतांत्रिक होता है क्योंकि सामुदायिकता मनुष्य का मौलिक गुण है और उसका आरोपण नहीं होता। इस समाज में मनुष्य को समाजवादी बनाना नहीं पड़ता वह तो समुदायी का प्राणी होने के नाते सामाजिक के अलावा और कुछ हो ही नहीं सकता।

इस दृष्टि से भारत में विनोबा जी द्वारा चलाया जाने वाला ग्रामदान और अब प्रखंड या जिलादान आन्दोलन का अतीव महत्व है। क्योंकि यह आन्दोलन ऐसे समुदायों की स्थापना के लिए जन अभिक्रम जगाने का प्रबलतम प्रयास है। इसके अलावा ऐसे समाज की रचना और किसी तरीके से हो ही नहीं सकती। समुदायों की स्थापना कानून या अन्य जनेतर तरीके से नहीं होती और हो भी तो वह समाज सजीव नहीं होता। उसमें मनुष्य रेत के कणों की भांति ढेर से तो होते हैं किन्तु उस संख्या में गुण नहीं होता। सामुदायिक समाज गुणात्मक समाज है। मनुष्य का विकास उसके लघुवृत्त में ही होता है यह अब मनोविज्ञान का सर्वविदित तथ्य है। श्री प्रो० लाइमान ब्रेसन ने अपनी सुन्दर पुस्तक दि नवस्ट अमेरिका में जोरदार शब्दों में लिखा है कि प्रजातन्त्र का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि वह नागरिक को स्वयं के लिए प्रत्यक्ष निर्णय और क्रिया करने का कितना अवसर देता है। उनका प्रसिद्ध वाक्य है—फले किन्ग वन में दी एफसियेंट द आर नाट डेमोक्रेटिक। अतः हम पंचायती राज को ऐसे गुण प्रधान सामुदायिक समाज की स्थापना का एक अनुकूल और वैधानिक अवसर मानकर चलना चाहिए और इस दिशा में ग्रामदान आन्दोलन को पंचायती राज से सम्बद्ध समझना चाहिए। मालूम नहीं ग्रामदान के कार्यकर्ता लोग भी इसे ऐसा ही अनुभव करते हैं या नहीं किन्तु ग्रामदान का समाज दर्शन भी यही है। भारत सरकार ने सामुदायिक विकास और ग्रामदान के समन्वय और सहयोग की आवश्यकता अनुभव की है। किन्तु उसमें यह भ्रान्ति रह गई कि उसमें हमारे वर्तमान गांवों को वास्तविक समुदाय मान लिया गया है किन्तु वे सही अर्थों में आज समुदाय नहीं रह गये हैं। उन्हें समुदाय बनाना सहज है यह बात सही है और उन्हें समुदाय बनाना होगा। ग्रामदान आन्दोलन यही काम कर रहा है। इसलिए पंचायती राज और ग्रामदान आन्दोलन एक दूसरे के पूरक हैं और उन्हें वैसे ही मानकर चलना चाहिए।

विकेन्द्रीकरण : आर्थिक, राजनीतिक एवं जनतान्त्रिक समाजवाद

—श्री सोमप्रकाश शैदा

राजनीति और अर्थनीति का आपस में बहुत गहरा सम्बन्ध है। दोनों एक दूसरे को प्रभावित करती हैं। यदि दोनों एक दूसरे के पूरक हैं तो समाज प्रगति करता है। वह स्थिर और स्वस्थ होता है। यदि राजनीति और अर्थनीति एक दूसरे से टकराती हों तो फिर समाज अस्थाई, अस्वस्थ और तनाव पूर्ण रहता है। कुछ राजनीतिज्ञों और अर्थशास्त्रियों का यह कहना है कि आर्थिक व्यवस्था और प्रशासन के दरम्यान प्रतिकूलता और द्वन्द्व ही आज तक के सामाजिक उथल पुथल का मौलिक कारण रहा है। उनका यह भी मत है कि आर्थिक व्यवस्था ही किसी समाज का आधार होता है जिस पर उसके राजनीतिक सांस्कृतिक, वैज्ञानिक तथा दार्शनिक सिद्धांत और संगठन के ढांचे खड़े होते हैं, यदि हम इतनी दूर न भी जाएं तो भी इस वास्तविकता से इन्कार नहीं किया जा सकता है, क्योंकि यह तो अब एक अमर जीवित सत्य है कि राजनीति और अर्थनीति का संबंध पारस्परिक अनुकूलता और आदान प्रदान का ही होना चाहिये। मानव समाज की प्रगति का रहस्य इसी में है, दोनों में से कौन साध्य और कौन साधन इसका निर्णय करना मुश्किल है। एक माने में दोनों एक दूसरे के साध्य और एक दूसरे के साधन हैं दोनों का केन्द्र बिन्दु मानव है, जिसकी प्रगति जिसकी भलाई और सुख संतोष दोनों का लक्ष्य है। परन्तु जब मानव साध्य न रह कर साधन बना दिया जाए, किसी सिद्धान्त और संगठन के प्रयोग का एक साधन, तो ऐसा समाज अशान्ति और पतन की ओर जाता है।

सीमित जनतन्त्र

जनतन्त्र में मानव ही प्रभुसत्ता का स्रोत है। परन्तु आज जनतन्त्र की सीमा यहीं तक रुकी हुई है। समाज के बुद्धिमान और श्रीमान प्रभुसत्ता के इस स्रोत से अपनी प्यास बुझाते हैं। इस स्रोत से प्रभुसत्ता के प्रभाव को

वह रूप और दिशा नहीं देना चाहते हैं, जो सारे समाज को तृप्त करे। आज का जनतन्त्र चाहे वह संसदीय हो या अध्यक्षीय उसकी राजनीति तथा अर्थनीति प्रभुसत्ता को एक छोटे से स्रोत तक ही सीमित किये हैं जिसका परिणाम यह है कि समाज पर चन्द बुद्धिमान चन्द श्रीमान, जिनमें सब से प्रभावशाली धनवान होते हैं, छाये हुए हैं। ऐसा समाज चन्द राजनीतिक और आर्थिक केन्द्रों का समाज होता हैं। दुनिया में चाहे वह रूस की दुनिया हो, या अमेरिका की मानव भी अस्थिर और अशान्त है और समाज भी। आज तक छोटे-बड़े युद्धों का मौलिक कारण यही रहा है। परन्तु गाधीजी ने समाज परिवर्तन का एक क्रान्तिकारी रास्ता सुझाया वह मानव को प्रभुसत्ता का स्रोत तो मानते ही थे, किन्तु इसलिए नहीं कि चन्द श्रीमान और चन्द बुद्धिमान इससे अपनी प्यास बुझा सकें बल्कि इस माने में कि मानव अपने निकटतम समाज जिसका कि वह स्वयं एक अंग है यानी प्राथमिक समुदायों को अपनी प्रभुसत्ता प्रदान करे। मानव एक सामाजिक प्राणी है परन्तु आज के समाज में आर्थिक और राजनीतिक केन्द्रों का प्रभावहीन बल्कि अधीन बना हुआ है वह अपने प्राथमिक समुदाय से भी कटा हुआ है।

स्वराज्य का आधार स्वशासित प्राथमिक समुदाय

मानव को इसी अधीनता के गड्ढे से उठाने के लिये गाधी जी ने स्वराज्य की कल्पना की थी। उन्होंने ऐसा कहा था कि—"असंख्य गावों में यह व्यवस्था लगातार फैलने वाले ऐसी वृत्तों की होगी जिसका कोई अन्त ही न हो। ऐसी व्यवस्था में जीवन का अंतिम उद्देश्य पिरामिड के शिखर के सामने संकुचित नहीं होगा बल्कि समुद्र में बनने वाले वृत्त के समान होगा जिसका केन्द्र बिन्दु व्यक्ति होगा। वह व्यक्ति गाव के लिए त्याग करेगा, गाव जनपद के लिये त्याग करेगा जनपद राज्य के लिये राज्य राष्ट्र के लिए त्याग करेगा। इस प्रकार यह प्रक्रिया व्यक्तिरूपी केन्द्र बिन्दु से प्रारम्भ हो कर हमेशा त्याग और सहयोग की भावना से निर्मित होकर सामूहिक वृत के रूप में जीवन का पूर्ण वृत बनेगा।"

अपने मृत्यु के सिर्फ बारह दिन पूर्व गाधी जी ने अपने एक भाषण के प्रसंग में भारत के लिये सच्चे लोकतन्त्र की चर्चा करते हुए कहा था कि भारत के लिये सच्चे लोकतन्त्र की इकाई गाव होगा। अगर एक गाव की पंचायत राजस्थापित करने को इच्छुक हो तो कोई उसे रोक नहीं सकता। सच्चा लोकतन्त्र तो केन्द्र में बैठे बीस प्रतिनिधियों से नहीं चलाया जा सकता। इसे प्रत्येक ग्राम की जनता द्वारा नीचे से चलाना होगा जिसका अभिप्राय यह है कि प्राथमिक समुदाय न केवल प्रभुसत्ता का स्रोत है बल्कि प्राथमिक समुदाय ही समाज का आधार है। यह समुदाय जितना स्वस्थ और शक्तिशाली होगा मानव समाज भी उतना ही स्वस्थ और शक्तिशाली होगा और शान्तिप्रिय भी। ऐसा स्वराज मुट्ठी भर केन्द्रों पर निर्भर नहीं होगा, बल्कि इसमें शक्ति ग्रामों केन्द्रों में विकेन्द्रित होगी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के दस वर्ष बाद जब सामुदायिक विकास योजना सफल सिद्ध होने लगी तो राजनीतिक विकेन्द्रीकरण की आवश्यकता अनुभव की गई। यही अनुभव पंचायती राज की शुरूआत है और त्रिस्तरीय प्रणाली लागू की गई परन्तु छः वर्ष बीत जाने के बाद भी सब प्रदेशों में त्रिस्तरीय पंचायती राज की स्थापना नहीं हो पाई। यहां इस बात को साफ कर देने की आवश्यकता जरूर है कि आज के पंचायती राज में प्राथमिक समुदाय स्वशासन की इकाई नहीं है। पंचायती राज संस्थाओं को आर्थिक अधिकार

देना तो दूर की बात है ग्राम में पंचायती राज में ग्राम सभा और पंचायत सबसे कमजोर संस्था है। कहीं-कहीं तो विकेन्द्रीकरण केवल जिले तक ही सीमित है। गांधी जी के स्वप्न में तो पंचायतें अपने अपने स्तर पर राजनीतिक और आर्थिक स्वशासन की इकाइयां थीं। गांधी जी का सारा विचार एक तक संगत धारा में बंधा हुआ है। मौलिक तथ्य यह है कि राजनीति और अर्थनीति दोनों का एक दूसरे के अनुकूल होना अनिवार्य है। यह बात कतई तौर पर असम्भव है कि आर्थिक विकेन्द्रीकरण के आधार पर राजनैतिक विकेन्द्रीकरण हो सके या वह एक दूसरे के साथ साथ रह सके। पंचायती राज संस्थाओं को शासन प्रबन्ध का अंग बना कर आर्थिक विकास योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिये इस्तेमाल तो किया जा सकता है किन्तु वह स्वशासन की इकाइयां नहीं होंगी वह तो मशीनरी के निर्जीव कलपुर्जे होंगी।

वर्तमान स्थिति का एक विश्लेषण

पंचायती राज का उदघाटन इसलिये हुआ था कि विकास के कार्यों में जनता का सक्रिय सहयोग प्राप्त किया जा सके। पंचायती राज संस्थाओं को जनतांत्रिक रूप देकर जनता में इस बात का गौरव पैदा करना कि वह नीचे स्तर पर जो अपनी संस्थाओं का निर्वाचन कर सकती हैं और उन निकटतम संस्थाओं द्वारा शासन के कार्यों में भागीदार हो सकते हैं। किन्तु यह गौरव तो मिथ्या है। इन सात वर्षों में पंचायती राज के अनुभवों ने इस गौरव को मिथ्या सिद्ध कर दिया है। जनता में वह विश्वास, वह आशा, वह आकांक्षा उत्पन्न नहीं हो सकी जो उत्साहपूर्ण भागीदारी और सहकारिता को उभार सके, इसलिए तो विकास की गति न केवल धीमी ही रही है बल्कि सीमित भी। नगरीकरण की एक भयानक प्रक्रिया पड़ी, और गांव उजड़ने लगे, गांव के युवक रोजगार की तलाश में शहरों की ओर हिजरत करने लगे हैं। जिन देहातों में गांधी जी स्वराज का केन्द्र बनाना चाहते थे वही देहात निर्जीव होकर छिन्न भिन्न हो रहे हैं। यदि इससे भी देश का आर्थिक विकास हो पाता जनसाधारण की कम से कम प्रारम्भिक आवश्यकता पूरी होने लगती, रोजगार के क्षेत्र विस्तृत होने लगते शिक्षा, स्वास्थ्य की सहूलियत बढ़ने लगती, तो इतना सन्तोष तो होता कि ग्रामीण जीवन के खण्डहरों पर एक नये और स्वस्थ जीवन का विकास हो रहा है। केन्द्रिय आर्थिकता का प्रभुत्व भी सिद्ध होता, परन्तु हुआ इसके विपरीत। विकास की गति धीमी रही, राष्ट्रीय आमदनी तो बढ़ी पर इसका ज्यादा भाग चन्द चन्द्र तक सिमट कर रह गया। अमीरी और गरीबी के दरम्यान खाई और भी ज्यादा विस्तृत और गहरी हो गई है। देश के आर्थिकता के किसी भी क्षेत्र में कोई मौलिक परिवर्तन नहीं हुआ। कृषि की स्थिति बिगड़ी है, जमींदारी उन्मूलन के बावजूद मालकियत के प्रबन्ध में कोई प्रगतिशील परिवर्तन नहीं हुआ, देहात छिन्न भिन्न हो गये। अरबों अरबों की धनराशि इन योजनाओं के द्वारा खर्च हुई मानो देश की प्यासी धरती ने समा ली है। इस स्थिति का विश्लेषण किया जाए तो सबसे बड़ा कारण यही सिद्ध होता कि योजनायें गलत आधार पर बनाई गईं, और वह इसलिये कि योजनाओं के निर्माताओं के दृष्टिकोण ही गलत थे। जिस बात को यह प्राथमिकता देते हैं वह केन्द्रीय औद्योगिकरण है। बाकी सब बातें इस लक्ष्य के अधीन कर दी गई हैं। कृषि के विकास पर लघु उद्योग और दस्तकारी इन पर भी अरबों रुपय की धनराशि खर्च हुई, इसलिये कि यह केन्द्रित आर्थिकता के विकास में सहायक हो।

राजनैतिक और आर्थिक विकेन्द्रीकरण : अनिवार्य सम्बन्ध

राजनीति में विकेन्द्रीकरण का प्रचार और आर्थिक व्यवस्था में केन्द्रीकरण पर जोर

खड–३

पंचायती राज की सरचना की पृष्ठभूमि



राष्ट्रपिता के सपनों का ग्रामराज

—गांधीजी



ग्राम-स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा जो अपनी अहम जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए—जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा—वह परस्पर सहयोग से काम लेगा, इस तरह हर एक गांव का पहला काम यह होगा कि वह अपनी जरूरत का तमाम अनाज और कपड़े के लिए कपास खुद पैदा कर ले उसके पास इतनी सुरक्षित जमीन होनी चाहिये जिसमें ढोर चर सकें, और गांव के बड़ों व बच्चों के लिए मन बहलाव के साधन और खेलकूद के मैदान वगैरा का बन्दोबस्त हो सके। इसके बाद भी जमीन बचे तो उसमें वह ऐसी उपयोगी फसलें बोयेगा जिन्हें बेच कर वह आर्थिक लाभ उठा सके, या वह गांजा, तम्बाकू अफीम वगैरा की खेती से बचेगा।

गांव की स्थानीय संस्थाएं

हर एक गांव में गांव की अपनी एक नाटकशाला, पाठशाला और सभाभवन रहेगा। पानी के लिए उसका अपना इन्तिजाम होगा—वाटर वर्क्स होंगे—जिससे गांव के सभी लोगों को शुद्ध पानी मिला करेगा। कुओं और तालाबों पर गांव का पूरा नियंत्रण रख कर यह काम किया जा सकता है। बुनियादी तालीम के आखिरी दरजे तक शिक्षा सबके लिए लाजिमी होगी। जहां तक हो सकेगा, गांव के सारे काम सहयोग के आधार पर किये जायेंगे। जात-पांत और क्रमागत अस्पृश्यता के जैसे भेद आज हमारे समाज में पाये जाते हैं, वैसे इस ग्राम-समाज में बिलकुल नहीं रहेंगे।

गांव की रक्षा के लिए ग्राम सैनिक

गांव की रक्षा के लिए ग्राम-सैनिकों का एक ऐसा दल रहेगा, जिसे लाजिमी तौर पर बारी-बारी से गांव के चौकी-पहरे का काम करना होगा। इसके लिए गांव में ऐसे लोगों का रजिस्टर रखा जायगा।



पंचायतीराज के स्वप्न द्रष्टा

महात्मा गाँधी

राष्ट्रपिता के सपनों का ग्रामराज

—गांधीजी



ग्राम-स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा जो अपनी अहम जरूरतों के लिए अपने पड़ौसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए—जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा—वह परस्पर सहयोग से काम लेगा, इस तरह हर एक गांव का पहला काम यह होगा कि वह अपनी जरूरत का तमाम अनाज और कपड़े के लिए कपास खुद पैदा कर ले उसके पास इतनी सुरक्षित जमीन होनी चाहिये जिसमें ढोर चर सकें, और गांव के बड़ों व बच्चों के लिए मन बहलाव के साधन और खेलकूद के मैदान वगैरा का बन्दोबस्त हो सके। इसके बाद भी जमीन बचे तो उसमें वह ऐसी उपयोगी फसलें बोयेगा जिन्हें बेच कर वह आर्थिक लाभ उठा सके, यों [illegible] गांजा, तम्बाकू अफीम वगैरा की खेती से बचेगा।

गांव की स्थानीय संस्थाएँ

हर एक गांव में गांव की अपनी एक नाटकशाला, पाठशाला और सभाभवन रहेगा। पानी के लिए उसका अपना इन्तिजाम होगा—वाटर वर्क्स होंगे—जिससे गांव के सभी लोगों को शुद्ध पानी मिला करेगा। कुओं और तालाबों पर गांव का पूरा नियन्त्रण रख कर यह काम किया जा सकता है। बुनियादी तालीम के आखिरी दरजे तक शिक्षा सबके लिए लाजिमी होगी। जहां तक हो सकेगा गांव के सारे काम सहयोग के आधार पर किये जायेंगे। जात-पांत और क्रमागत अस्पृश्यता के जैसे भेद आज हमारे समाज में पाये जाते हैं, वैसे इस ग्राम-समाज में बिलकुल नहीं रहेंगे।

गांव की रक्षा के लिए ग्राम सैनिक

गांव की रक्षा के लिए ग्राम-सैनिकों का एक ऐसा दल रहेगा जिसे लाजिमी तौर पर बारी-बारी से गांव के चौकी-पहरे का काम करना होगा। इसके लिए गांव में ऐसे लोगों का रजिस्टर रखा जायगा।

ग्राम पंचायत

गाव का शासन चलाने के लिए हर साल गाव के पाच आदमियो की एक पचायत चुनी जायगी इसके लिए नियमानुसार एक खास निर्धारित योग्यता वाले गांव के बालिग स्त्री-पुरुषो को अधिकार होगा कि वे अपने पच चुन लें। इन पचायतो को सब प्रकार की आवश्यक सत्ता और अधिकार रहेंगे। चूकि इस ग्राम-स्वराज्य म आज के प्रचलित अर्थो मे सजा या दड का कोई रिवाज नहीं रहेगा इस लिए यह पचायत अपने एक साल के कार्यकाल मे स्वय ही धारासभा, न्यायसभा और कार्यकारिणी सभा का सारा काम सयुक्त रूप से करेगी।

गांव का प्रजातंत्र

आज भी अगर कोई गाव चाहे तो अपने यहा इस तरह का प्रजातत्र कायम कर सकता है। उसके इस काम मे मौजूदा सरकार भी ज्यादा दस्तदाजी नहीं करेगी। क्योंकि उसका गाव से जो भी कारगर सम्बन्ध है वह सिर्फ मालगुजारी वसूल करने तक ही सीमित है।

ग्राम शासन की रूपरेखा

यहा मने इस बात का विचार नहीं किया है कि इस तरह के गाव का अपने पास-पडोस के गावो के साथ या केन्द्रीय सरकार के साथ, अगर वैसी कोई सरकार हुई क्या सबध रहेगा। मेरा हेतु तो ग्राम शासन की एक रूपरेखा पेश करने का ही है। इस ग्राम शासन म व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर आधार रखने वाला सपूर्ण प्रजातत्र काम करेगा। व्यक्ति ही अपनी इस सरकार का निर्माता भी होगा। उसकी सरकार और वह दोनो अहिंसा के नियम के वश होकर चलेंगे। अपने गाव के साथ वह सारी दुनिया की शक्ति का मुकाबला कर सकेगा। क्योकि हर एक देहाती के जीवन का सबसे बडा नियम यह होगा कि वह अपनी और अपने गाव की इज्जत की रक्षा के लिए मर मिटे।

पूरी जिंदगी खत्म हो जाए

समय है ऐसे गाव को तैयार करने मे एक आदमी की पूरी जिन्दगी खत्म हो जाय। सच्चे प्रजातत्र का और ग्राम-जीवन का कोई भी प्रेमी एक गांव को लेकर बैठ सकता है और उसी को अपनी सारी दुनिया मानकर उसके काम मे मशगूल रह सकता है। निश्चय ही उसे इसका अच्छा फल मिलेगा। वह गाव म बैठते ही एक साथ गाव के भगी कतवये चौकीदार वैद्य और शिक्षक का काम शुरू कर देगा। अगर गाव का कोई आदमी उसके पास न फटके तो भी वह सन्तोष के साथ सफाई और कताई के काम मे जुटा रहेगा।

ग्रामीण कला और उद्योग

देहात वालो म ऐसी कला और कारीगरी का विकास होना चाहिये, जिससे बाहर उनकी पैदा की हुई चीजों की कीमत की जा सके। जब गांवो का पूरा-पूरा विकास हो जायगा तो देहातियो की बुद्धि

और आत्मा को सन्तुष्ट करने वाली कला-कारीगरी के धनी स्त्री-पुरुषो की गावो मे कमी नही रहेगी। गाव मे कवि होगे, चित्रकार होगे, शिल्पी होगे, भाषा के पंडित और शोध करने वाले लोग भी होगे। थोडे मे जिन्दगी की ऐसी कोई चीज न होगी जो गाव मे न मिले। आज हमारे देहात उजडे हुए और कूडे-कचरे के ढेर बने हुए हैं। कल वहाँ सुन्दर बगीचे होगे और ग्रामवासियो को ठगना या उनका शोषण करना असभव हो जायगा।

इस तरह के गावो की पुनर्रचना का काम आज से ही शुरू हो जाना चाहिये। गावो की पुनर्रचना का काम कामचलाऊ नहीं, बल्कि स्थायी होना चाहिये।

अखड ग्राम रचना

उद्योग, हुनर, तन्दुरुस्ती और शिक्षा इन चारो का सुन्दर समन्वय करना चाहिये। नई तालीम में उद्योग और शिक्षा, तन्दुरुस्ती और हुनर का सुन्दर समन्वय है। इन सब के मेल से मा के पेट मे आने के समय से लेकर बुढापे तक का एक खूबसूरत फूल तैयार होता है। यही नई तालीम है। इसलिए मै शुरू मे ग्राम-रचना के टुकडे नही करूंगा बल्कि यह कोशिश करूंगा कि इन चारो का आपस मे मेल बैठे। इस लिए मै किसी उद्योग और शिक्षा को अलग नही मानूंगा, बल्कि उद्योग को शिक्षा का जरिया मानूंगा, और इसलिए ऐसी योजना में नई तालीम को शामिल करूंगा।

मेरी कल्पना की ग्राम-इकाई

मेरी कल्पना की ग्राम इकाई मजबूत से मजबूत होगी। मेरी कल्पना के गाव मे १००० आदमी रहेंगे। ऐसे गाव को अगर स्वावलम्बन के आधार पर अच्छी तरह सगठित किया जाय तो वह बहुत कुछ कर सकता है।

आदर्श भारतीय ग्राम

आदर्श भारतीय ग्राम इस तरह बनाया जायगा कि उसम आसानी से स्वच्छता की पूरी-पूरी व्यवस्था रहे। उसकी झोपडियो मे पर्याप्त प्रकाश और हवा का प्रबन्ध होगा और उनके निर्माण मे जिस सामान का उपयोग होगा वह ऐसा होगा जो गाव के आस पास पाच मील की त्रिज्या के अन्दर आने वाले प्रदेश मे मिल सके। इन झोपडियो मे आगन या खुली जगह होगी, जहा उस घर के लोग अपने उपयोग के लिए साग भाजियां उगा सकें और अपने मवेशियो को रख सकें। गाव की गलियो और सडकें, जिस धूल को हटाया जा सकता है उससे मुक्त होगी। उस गाव मे उसकी आवश्यकता के अनुसार कुए होंगे और वे सबके लिए खुले होंगे। उसमे सब लोगो के लिए पूजा के स्थान होगे, सबके लिए एक सभा भवन होगा, मवेशियों के चरने के लिए गाव का चारागाह होगा, सहकारी डेरी होगी प्राथमिक और माध्यमिक शालायें होंगी जिनमे मुख्यत औद्योगिक शिक्षा दी जायगी और झगडों के निपटारे के लिए ग्राम-पचायत होगी। वह अपना अनाज साग भाजियां और फल तथा खादी खुद पैदा कर लेगा।

आजादी नीचे से शुरू होनी चाहिए (पचायत राज)

आजादी नीचे से शुरू होनी चाहिये। हर एक गाव मे जमहूरी सल्तनत या पचायत का राज होगा। उसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। जिसका मतलब यह है कि हरएक गाव को अपने पाव

पर खड़ा होना होगा—अपनी जरूरत खुद पूरी कर लेनी होगी ताकि वह अपना सारा कारोबार खु' चला सके। यहां तक कि वह सारी दुनिया के खिलाफ अपनी रक्षा खुद कर सके। उसे तालीम देकर इस हद तक तयार करना होगा कि वह बाहरी हमले के मुकाबले म अपनी रक्षा करते हुए मर मिटने के लायक बन जाय। इस तरह आखिर हमारी बुनियाद व्यक्ति पर होगी। इसका यह मतलब नहीं कि पड़ोसियों पर या दुनिया पर भरोसा न रखा जाय, या उनकी राजी–खुशी से दी हुई मदद न ली जाय। कल्पना यह है कि सब लोग आजाद होंगे और सब एक दूसरे पर अपना असर डाल सकेंगे, जिस समाज का हरएक आदमी यह जानता है कि उसे क्या चाहिये और इससे भी बढ़कर जिसमे यह माना जाता है कि बराबरी की मेहनत करके भी दूसरों को जो चीज नहीं मिलती है वह खुद भी किसी को नहीं लेनी चाहिये, वह समाज जरूर ही बहुत ऊंचे दर्जे की सभ्यता वाला होना चाहिये।

गांव की जिंदगी समुद्र की लहरों की तरह

ऐसा समाज अनगिनत गांवों का बना होगा, उसका फलाव एक के ऊपर एक के ढंग पर नहीं, बल्कि लहरों की तरह एक के बाद एक की शकल म होगा। जिंदगी मीनार की शकल मे नहीं होगी जहां ऊपर की तंग चोटी को नीचे के चौड़े पाये पर खड़ा होना पड़ता है। वहां तो समुद्र की लहरों की तरह जिंदगी एक के बाद एक घेरे की शकल म होगी और व्यक्ति उसका मध्यबिंदु होगा।

एक के लिए सब, सबके लिए एक

यह व्यक्ति हमेशा अपने गांव के खातिर मिटने को तयार रहेगा। गांव अपने इर्दगिर्द के गांवो के लिए मिटने को तयार होगा। इस तरह आखिर सारा समाज ऐसे लोगों का बन जायगा, जो उन्मत्त बनकर कभी किसी पर हमला नहीं करते, बल्कि हमेशा नम्र रहते हैं, और अपने में समुद्र की उस शान को महसूस करते हैं जिसके वे एक जरूरी अंग हैं।

इसलिये सबसे बाहर का घेरा या दायरा अपनी ताकत का उपयोग भीतरवालों को कुचलने म नहीं करेगा बल्कि उन सबको ताकत देगा और उनसे ताकत पायेगा। मुझे ताना दिया जा सकता है कि यह सब तो खयाली तस्वीर है इसके बारे में सोचकर वक्त क्यों बिगाड़ा जाय? युक्लिड की परिभाषा वाला बिंदु कोई मनुष्य खींच नहीं सकता, फिर भी उसकी कीमत हमेशा रही है।

यह खयाली तसवीर नहीं है मेरी तसवीर

उसी तरह मेरी इस तसवीर की भी कीमत है। इसके लिये मनुष्य जिंदा रह सकता है। अगरचे इस तसवीर को पूरी तरह बनाना या पाना सम्भव नहीं है तो भी इस सही तसवीर को पाना या इस तक पहुंचना हिंदुस्तान की जिंदगी का मकसद होना चाहिये। जिस चीज को हम चाहते हैं उसकी सही–सही तसवीर हमारे सामने होनी चाहिये, तभी हम उससे मिलती-जुलती कोई चीज पाने की आशा रख सकते हैं। अगर हिंदुस्तान के हर एक गांव म कभी पंचायती राज कायम हुआ तो मं अपनी इस तसवीर की सचाई साबित कर सकूंगा, जिसम सबसे पहला और सबसे आखिरी दोनों बराबर होंगे या यों कहिये कि न कोई पहला होगा न आखिरी।

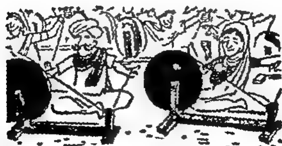
हर धर्म को बराबरी की जगह

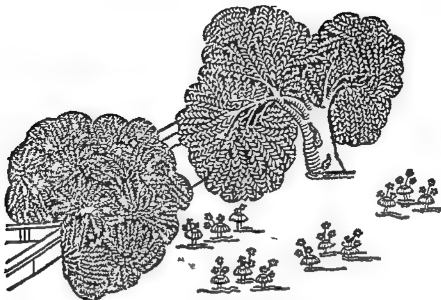
इस तसवीर में हरएक धर्म को अपनी पूरी और बराबरी की जगह होगी। हम सब एक ही आलीशान पेड़ के पत्ते हैं। इस पेड़ की जड़ हिलाई नहीं जा सकती, क्योंकि वह पाताल तक पहुंची हुई है। जबरदस्त से जबरदस्त आंधी भी उसे हिला नहीं सकती।

मशीनों के लिए कोई जगह नहीं

इस तसवीर में उन मशीनों के लिये कोई जगह नहीं होगी, जो मनुष्य की मेहनत की जगह लेकर कुछ लोगों के हाथों में सारी ताकत इकट्ठी कर देती हैं। सभ्य लोगों की दुनिया में मेहनत की अपनी अनोखी जगह है। उसमें ऐसी मशीनों की गुंजाइश होगी जो हर आदमी को उसके काम में मदद पहुंचायें। लेकिन मुझे कबूल करना चाहिये कि मैंने कभी बैठकर यह सोचा नहीं कि इस तरह की मशीन कैसी हो सकती है। सिलाई की सिंगर मशीन का खयाल मुझे आया था। लेकिन उसका जिक्र भी मैंने यों ही कर दिया था। अपनी इस तसवीर को पूरा बनाने के लिये मुझे उसकी जरूरत नहीं।

जब पंचायत राज स्थापित हो जायेगा तब लोकमत ऐसे भी अनेक काम कर दिखायेगा जो हिंसा कभी नहीं कर सकती। जमींदारों, पूंजीपतियों और राजाओं की मौजूदा सत्ता तभी तक चल सकती है जब तक कि सामान्य जनता को अपनी शक्ति का भान नहीं होता। अगर लोग जमींदारी और पूंजीवाद की बुराई से सहयोग करना बन्द करदें, तो वह पोषण के अभाव में खुद ही मर जायगी। पंचायत राज में केवल पंचायत की आज्ञा मानी जायगी और पंचायत अपने बनाये हुए कानून द्वारा ही अपना काम करेगी।





भारतीय संविधान के संदर्भ में पंचायती राज की गरिमा

—श्री जयप्रकाशनारायण

मैं पंचायती राज की संवैधानिक स्थिति की चर्चा करना चाहूंगा। जैसा कि सर्वविदित है पंचायती राज्य का प्रारम्भ और विकास ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में अनुभूत कतिपय निराशाओं को लेकर हुआ। सुप्रसिद्ध बलवंतराय मेहता प्रतिवेदन ने लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की वर्तमान प्रक्रिया को गति दी। इस प्रक्रिया की पृष्ठभूमि में ग्रामीण क्षेत्रों की विकास-गति को तीव्रतर करना ही प्रधान लक्ष्य रहा है। इस प्रसंग में मैं संविधान सभा की सम्बन्धित कार्यवाही का स्मरण करना चाहूंगा। १९४७ को १० मई को संविधान सभा के अध्यक्ष डा० राजेन्द्रप्रसाद ने यह विचार प्रकट किया कि संविधान का आधार ग्राम पंचायतें होनी चाहिये और अप्रत्यक्ष चुनावों के आधार पर स्तर पर स्तर बनाकर संविधान का निर्माण किया जाना चाहिये। इस विचार पर मेरी समझ में प्रायः एक ही प्रकार के सैकड़ों संशोधन रखे गए। संवैधानिक परामर्शदाता श्री बी० एन० राव की यह सम्मति रही कि इस सुझाव के अनुसार समूचे

संविधान को फिर से दोहराने में अब बहुत विलम्ब हो गया है, और यह राय दी गई कि इस विषय को बाद में केन्द्रीय तथा राज्य स्तरीय विधान सभाओं के विचारार्थ स्थगित कर दिया जाए। १९४८ की २२ नवम्बर को श्री संथानम् का एक संशोधन श्री अम्बेडकर द्वारा स्वीकार किया गया और बाद में उसे ४० वीं धारा के रूप में संविधान में अंगीभूत किया गया, जिसमें कहा गया कि "राज्य स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में ग्राम पंचायतों को संगठित करने के लिए कदम उठायेगा।"

संविधान में ग्राम पंचायतों को स्वशासन की इकाइयां बताया गया है। इकाई' शब्द के अर्थ में यह सन्निहित है कि पंचायतों का अस्तित्व और कार्य एकांतिक रूप में न होकर, स्वशासन की बड़ी इकाइयों के अंगीभूत रूप में होगा, जो स्वयं वृहत्तर इकाइयों के भाग होंगी। इस प्रकार संक्षेप में पंचायतीराज का अभिप्राय संविधान की चालीसवीं धारा में सन्निहित है।

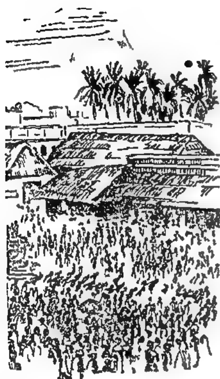
मैंने इस विषय का उल्लेख यहां इसलिए किया है कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त और उससे सम्बंधित संस्थायें सामुदायिक विकास सम्बन्धी अनुभवों से ही नहीं उद्भूत होतीं बल्कि सीधे संविधान सभा के निर्णयों से भी होती हैं। विषय का यह पक्ष अत्यधिक राजनीतिक महत्व का है क्योंकि यह पंचायती राज को एक नितांत भिन्न प्रकार से प्रकाश में लाता है और इसे एक महान् अर्थ और नई गरिमा प्रदान करता है।

सम्भवतः यह अनिवार्य ही था कि भारतीय संविधान में मूल रूप से यह अत्यधिक केन्द्रीकृत राज्य का चित्र प्रस्तुत किया गया है। अंग्रेजी राज्य में केवल केन्द्रीय और प्रांतीय सरकारें ही थीं। ये दोनों ही उच्चस्तरीय केन्द्रीकरण की द्योतक थीं। यही पद्धति हमारे संविधान में भी ग्रहण की गई। संघीय तथा राज्य सरकारें आज वयस्क मताधिकार के आधार पर ही बनती हैं—यह तथ्य भी उनके केन्द्रीकरण की सचाई में कोई परिवर्तन नहीं लाता। तानाशाही राज्य भी लोकमत से चुने और स्थापित हुए सुने जाते हैं। संविधान तो सामाजिक तथ्यों को प्रतिबिम्बित मात्र करते हैं। वे उन्हें गढ़ नहीं पाते। संविधान बनाते समय उल्लिखित सामाजिक तथ्य सम्भवतः यह प्रमाणित नहीं करते कि राज्यस्तर से ऊपर भी शासन के विकेन्द्रीकरण का कोई आधार था। आजादी की लड़ाई ने नीचे से लोकमत के एस अंग खड़े नहीं किए जिन्हें राज्यसत्ता सौंपी जा सकती। स्थानीय स्वायत्त शासन की उस समय वर्तमान संस्थायें पूर्णतया ढोंग मात्र थी और उनमें किसी भी प्रकार का कोई तत्व नहीं था तथा न ग्राम, मण्डल और जिला स्तरीय कांग्रेस समितियों को ही लोकमत की प्रतिनिधि संस्थायें मान कर उन्हें विश्वास के साथ शासनाधिकार सौंपा जा सकता था।

किन्तु पंचायती राज के प्रारम्भ से ही, कुछ न कुछ सामाजिक तथ्यों की रचना अवश्य हो रही है, चाहे इनके पीछे सत्य कुछ भी रहा हो। गांव से जिले तक त्रिस्तरीय स्वायत्त शासन संस्थायें स्थापित की जा रही हैं। इस अति आवश्यक विकास को अति शीघ्र ही देश के संविधान में समुचित रूप से उल्लिखित कर स्थान देना होगा और इस प्रकार प्रामाणिक रूप से संविधान सभा की मनसा भी पूरी हो जाएगी। वर्तमान संविधान में शासन के दो क्षत्रीय अंग ही माने गए हैं—केन्द्र और राज्य। स्वायत्त शासन के तीनों स्तरों—ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला परिषद् को भी संविधान में उनका समुचित स्थान दिया जाना चाहिए और उनके अधिकारों दायित्वों तथा राष्ट्रीय साधनों में उनके भाग की स्पष्ट व्याख्या की जानी चाहिये।

यहा यह भी उल्लख किया जा सकता है कि ऐसी ही सिफारिश १९६० मे भारत सरकार द्वारा युगोस्लेविया भेजे गये उस अध्ययन दल ने भी की थी जिसम राजस्थान राज्य के मुख्य सचिव श्री भगवतसिंह मेहता तथा केन्द्रीय सामुदायिक विकास मन्त्रालय के पचायत आयुक्त श्री जी एफ मनकोडी सम्मिलित थे। यहा म प्रासगिक रूप से यह उल्लेख करना चाहूगा कि युगोस्लेविया के राजनतिक और आर्थिक विकेन्द्रीकरण के असाधारण रूप स साहसिक प्रयोग, जिन्हें वे सामाजिक व्यवस्था की सज्ञा देते हैं हमारे देशवासियो के लिए बहुत गूढ महत्व के हैं और हमे उनका अत्यन्त निकट से अध्ययन करना चाहिये।





नवीन भारत में पंचायतों की भूमिका

—श्री उच्छ्रगराय ढेबर

भारतीय सविधान की धारा ४० म कहा गया है
"राज्य ग्राम पचायतो को सगठित करने और उन्हे ऐसे अधिकार और काय सुपुर्द करने के लिए कदम उठायेगा, जो उन्हे स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप मे काय करने मे समर्थ बनायेंगे।"

हमम से कुछ लोग यह सोचने या विश्वास करने लगे हैं कि सविधान की भावना के अनुसार, ग्राम पचायत राज्य की समस्त प्रशासनिक व्यवस्था का आधार और उसका प्रधान स्रोत है, जिससे सभी क्रियाशीलताएं प्रवाहित होती हैं। फिर कुछ दूसरे लोग भी हैं जो इस विश्वास के अन्तगत कार्य करते रहे हैं कि यद्यपि यह न तो केन्द्र है और न हो ही सकती है फिर भी यह राज्य की एक अपरिहाय विकेन्द्रित प्रशासनिक व्यवस्था का एक अपरिहाय प्रशासनिक माध्यम होगी। अन्त म, वे लोग भी हैं, जो यही कहते रहे हैं कि पचायत का निर्माण चाहे जसी भी भावनात्मक या तुच्छ घोषणाओ के साथ हो वह राज्य की स्थानीय स्वायत्त शासन सस्थाओ की क्रमिक व्यवस्था में केवल एक सामान्य इकाई ही रहेगी——यह स्वय

आधार नहीं होगी वल्कि समूचे ढांचे के आधार पर स्थित होगी। नागरिक के लिए समस्या यह है कि वह देश की राजनीतिक व्यवस्था और संविधान के भीतर पंचायत की भूमिका और उसके स्थान को सही सही निश्चित कर ले। प्रथम श्रेणी के लोग इसे केन्द्र और आधार मानते हैं दूसरी श्रेणी के लोग इसे प्रशासन की एक महत्वपूर्ण कड़ी समझते हैं जबकि तृतीय श्रेणी के लोग इसका स्थान प्रशासनिक परिधि के निकट कहीं पर मानते हैं।

इंग्लैण्ड मे स्थानीय सरकार

ब्रिटिश स्थानीय सरकार के विषय में चर्चा करते हुए प्रो जी डी एच कोल ने कहा है

ब्रिटिश स्थानीय सरकार का काय मुख्यत प्रशासनिक है अर्थात् उसका सम्बन्ध संसद द्वारा स्वीकृत कानूनों अथवा प्राचीन घोषणापत्रों और शायद, आधुनिक कानूनो द्वारा सुपुर्द किये गए कार्यों को कार्यान्वित करने से है।"

अन्य शब्दों म यह तृतीय श्रेणी के लोगों के दृष्टिकोण का समर्थक है। प्रशासनिक परिधि पर स्थित होने पर भी, इसे, निश्चय ही, सफाई, सडक व्यवस्था आदि प्राविधिक समस्याओं को सुलझाना पडता है और साथ ही राज्य व्यवस्था से अथवा ज्यादा सही अर्थ मे उन व्यक्तियों से जो उसका सचालन करते हैं, निपटाना भी पडता है, चाहे वे राजनीतिज्ञ हो या नौकरशाह। इस सम्बन्ध में इसे ऐसे शासकों द्वारा शासन करने का दुष्परिणाम भोगना पड़ेगा जिनकी स्वयं अपनी धारणाएँ या अभिलाषाएँ हैं। यदि सरकार प्रतिक्रियावादी हुई तो इस बात का प्रयत्न करेगी कि स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाएँ कमजोर और भयभीत माध्यमों के रूप म ही क्रियाशील हों, और इस प्रकार, वे एक स्वायत्त शासन ढांचे के गतिशील संयुक्त बिन्दु कदापि न बनने पावें। केवल वे सरकारें ही स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाओं पर पूरा पूरा विश्वास करने और जनता के प्रतिनिधियों को अत्यन्त अनिवार्य मामलों के अलावा, अन्यथा अंतिम सत्ता प्रदान करने का साहस कर सकती हैं, जिन्हें अपने नागरिकों की आधारभूत राज्य भक्ति और दृढ सामान्य ज्ञान पर अच्छी तरह विश्वास हो। इन संस्थाओं को पंचायतों के कार्यों के सम्बन्ध मे गांव के जन साधारण की प्रतिक्रिया पर भी अच्छी तरह गौर करना पड़ेगा। अत पंचायतों की स्थिति प्रशासनिक परिधि पर मानने से भी काय सरल नहीं होगा। कभी न कभी यह बात स्पष्ट हो जायगी कि अधिकांश मामलों मे ग्राम पंचायतों के प्रदत्त अधिकार इतने कम और उनके साधन इतने सीमित हैं कि ग्राम पंचायत का सारा व्यवसाय इस निःशक्त चीज को बढावा देने म लगाये गये प्रयत्नों की क्षतिपूर्ति कदापि न कर पायेगा।

सन् १९४७ में लिखते हुए प्रो कोल ने इंग्लैंड की स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाओं की काय प्रणाली के सम्बन्ध म अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यक्त की थी

मेरा सुझाव यह है कि स्थानीय सरकार की समस्या मे इस समय जो दिलचस्पी की कमी दिखलाई पडती है उसका कारण सिर्फ सफाई सम्बन्धी कार्यों की जिनसे आधुनिक स्थानीय सरकार का विकास हुआ है अरुचि ही नहीं है बल्कि *स्थानीय सरकार के सम्बन्ध म एक सर्वथा निराधार धारणा* भी है जिसे हमने उस समय से विरासत म पाया है जबकि आम तौर पर यह माना जाता था कि इसके कार्य अनिवार्य रूप से स्थानीय ही होने चाहिये। ... "उसे ऐसी गन्दगियों और बुराइयों की सफाई करने वाला भंगी समझने की बजाय जिन्हें कोई अन्य संस्था न तो कर सकती है, और न करेगी, हम उसको सामुदायिक

जावन के तानें-बाने का बुदान शिल्पी मानना चाहिये। " यह पूछने की बजाय कि अन्य संस्थाएँ 'एक चलन' के रूप मे क्या करने के लिए प्रेरित की जा सकती हैं, हम, दरअसल, यह पूछना चाहिए कि स्थानीय समाज, सम्पन्न की जाने वाली सेवा के स्वभाव के अनुसार ज्यादा विस्तृत या संकुचित क्षेत्र म अपने कल्याण के लिए सर्वश्रेष्ठ ढग पर क्या कर सकता है। हमें चाहिये कि हम अन्तर पूरा करने या खाल्या भरने का काम अन्य संस्थाओं पर छोड दें, न कि उन संस्थाओं द्वारा छोडी गयी कमियों को दूर करने के साधन के रूप म स्थानीय सरकार का इस्तेमाल करें।'

प्राचीन भारत में

यद्यपि यह बात ब्रिटिश स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाओं के सम्बन्ध म सही है किन्तु इस तर्क को भारतीय परिस्थितियों की पृष्ठभूमि मे ग्राम पचायतों पर दूने जोर के साथ दुहराया जा सकता है। साइमन कमीशन ने अपनी रिपोर्ट म कहा है

' किन्तु, भारतीय ग्राम जीवन के मूल तथ्यों का अस्तित्व कायम है और उसका महत्व वर्धानिक सुधारक और कृषि परामर्शदाता, दोनों ही समान रूप से मान्य होना चाहिये।'

ब्रिटिश काल न्याय और पुलिस प्रशासन के भार के अन्तर्गत ध्वस्त होने के पूर्व भारतीय ग्राम एक गतिशील सामाजिक आर्थिक व्यवस्था का चित्र प्रस्तुत करता था। डा एस राधाकृष्णन् के शब्दों म यह राष्ट्र को 'एक उद्देश्य, एक मन्तव्य और एक विश्वास प्रदान करता था। चार्ल्स मेटकाफ के शब्दो म

' ग्राम पचायतें छोटे लोकतन्त्र हैं जिनके स्वयं अपने भीतर प्राय प्रत्येक चीज जिसकी उन्हें जरूरत हो सकती है, मौजूद है, और जो किसी भी विदेशी सम्बन्ध से लगभग मुक्त है। ऐसा प्रतीत होता है कि व नश्वरों के बीच अनश्वर हैं। शासन पर शासन ध्वस्त होते जाते हैं, क्रांति के बाद क्रांति आती है, लेकिन ग्राम पचायत का अनवरत क्रम जारी है। अत म कहता हूँ कि ग्राम सम्बन्धी विधानों म परिवर्तन न किये जायें। मैं ऐसी प्रत्येक चीज से भयभीत हूँ जिसमें उन्हें भग कर देने की प्रवृत्ति पायी जाती है।

फिर भी, जान-बूझकर ग्राम्य-समुदाय को नष्ट भ्रष्ट करने का कोशिश की गयी। सरकारी अधिकारियों के हाथों म कार्यकारिणी तथा न्याय सम्बन्धी अधिकारों के अत्यधिक केन्द्रीकरण तथा जमींदारी प्रथा न गावों के सामुदायिक जीवन के छोटे और बड़े विभाजक का कार्य किया। युगों से चली आती उनकी समानता तथा ग्रामों और ग्रामीणों के मसलों पर उनकी सत्ता और उनके प्रभाव उनसे छीन लिये गये। जिन बातों को निरंकुश राजाओं के शासन तथा क्रांति के बाद आने वाली क्रांतियाँ भी नष्ट न कर सकीं, उन्हें जान बूझकर, बुरी नीयत से आयोजित प्रयासों द्वारा नष्ट कर डाला गया।

डा राधाकुमुद मुकर्जी ने ग्रामों पर इस प्रकार का संकट आने के पूर्व पाये जाने वाले भारतीय ग्रामीण प्रशासनिक ढाचे का चित्र प्रस्तुत किया है। वह कहते हैं

' भारत राज्य और समाज के ऐसे सघ अस्तित्व का अद्भुत और उल्लेखनीय चित्र प्रस्तुत करता है, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक दूसरे से पृथक और कुछ अंश म स्वतन्त्र होता है और साथ ही, स्पष्ट तथा पृथक इकाई भी होता है। इस चित्र मे समाज और राज्य, दोनों ही

राष्ट्रीय, लोकप्रिय और सामूहिक जीवन तथा कार्य के स्वतन्त्र केन्द्र होते हैं। ये दोनों ही स्वतन्त्र संगठन थे और इनका ढांचा भी एकदम प्रत्यक्ष और सुनिश्चित था। इनके विकास और प्रगति के नियम भी अपने अपने थे।

आगे जब हम ग्राम पंचायत प्रशासन की समस्या के अन्य दो दृष्टिकोणों पर विचार करेंगे, तो इस विषय पर विस्तार से विचार करेंगे।

सही दृष्टिकोण

यदि ग्राम पंचायत को श्री जी. डी. एच. कोल के शब्दों में, गांव के लोगों के भाग्य का 'कुशल शिल्पी' होना है, यदि उसे सामूहिक-जीवन-यापन का उदाहरण प्रस्तुत करना है, यदि उसे डा. राधाकुमुद मुकर्जी के शब्दों में राष्ट्रीय, लोकप्रिय और सामूहिक जीवन का केन्द्र होना है, यदि उसे डा. राधाकृष्णन् के शब्दों में राष्ट्र को एक उद्देश्य, एक सार्थकता और एक विश्वास प्रदान करना है, यदि उसे अपनी मदद आप करने और आत्मनिर्भर होने के लिए प्रेरणा उत्पन्न करनी है, तो हम अपने विचारों में पुनर्नवीनता लानी होगी और पंचायत के अधिकारों, उसकी सत्ता और उसके साधनों की समस्या पर स्वायत्त शासन की स्थानीय निम्नतम इकाई के दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि स्वायत्त शासन की एक ऐसी इकाई के दृष्टिकोण से विचार करना पड़ेगा जिस पर कुछ बुनियादी जिम्मेदारियों का भार रक्खा गया हो। कहने की जरूरत नहीं कि इस अर्थ में उसे कुछ बुनियादी अधिकार भी प्राप्त होने चाहिएँ। ये अधिकार और जिम्मेदारियां क्या हैं, अथवा संविधान तथा ग्राम पंचायत संस्थाओं को अनुशासित करने वाले कानूनी शब्दों में, ये अधिकार और कर्त्तव्य क्या होने चाहिएँ—इन पर हम आगे चल कर विचार करेंगे।

आइये, हम द्वितीय दृष्टिकोण पर विचार करें। प्रशासन के विकेन्द्रित ढांचे की धारणा अनेक स्पष्ट दृष्टिकोणों से उत्पन्न होती है। आधुनिक राज्य की प्रवृत्ति केन्द्रीयकरण की दिशा में अग्रसर होने की होती है, चाहे वह लोकतन्त्रीय संविधान पर आधारित होती हो या अधिकार और सत्ता की एकतन्त्रीय धारणा पर। शहरी और औद्योगिक समाज की जटिल समस्याएं, जनता द्वारा रहन सहन और सुविधाओं के कुछ आधारभूत स्तरों की मांग, तथाकथित स्वतन्त्र संसार में जोकि मुद्रा स्फीति और उससे उत्पन्न राष्ट्रीय राजकोषीय नीतियों की समस्या से संयुक्त है, मुद्रा बाजार की गहन संवेदनशीलता, आणविक अस्त्रों के संदर्भ में राष्ट्रीय सुरक्षा की समस्याएं तथा संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे संगठनों के माध्यम से युद्ध सुरक्षा, बीमारी और गरीबी की महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने के प्रयत्न—ये सभी बातें हमें अनिवार्य रूप से केन्द्रीयकरण की ओर ले जाती हैं। यह एक विश्वव्यापी प्रक्रिया है।

विकेन्द्रीकरण : परस्पर विरोधी पक्ष

सत्ता के केन्द्रीयकरण को रोकने वाले उपाय के रूप में विकेन्द्रीकरण की धारणा, उसकी उस धारणा से भिन्न है जो केन्द्रीकृत सरकार की क्रियाशीलता का परिणाम होती है। एक का जन्म एक सिद्धान्त की सचेत मान्यता का फल है, जबकि दूसरी धारणा केवल उस सिद्धान्त से परिचित होती है, और सिर्फ उसी हालत में विकेन्द्रीकरण करती है जब आवश्यकता, सुविधा अथवा अधिक क्षमता की दृष्टि से ऐसा करना अनिवार्य होता है। हम ग्राम पंचायत प्रशासन

के संदर्भ में इस अन्तर को ध्यान में रखना पड़ेगा। एक मामले में तो यह विश्वास और श्रद्धा की बात होती है, जबकि दूसरे में केवल परिणामजन्य। अगर हम इस प्रश्न पर निर्णय करने की दृष्टि से विचार करें, तो यह अन्तर अच्छी तरह से समझा जा सकता है। निर्णय करना प्रशासन का सार तत्व है। हमेशा सवाल यह उठता है कि "किसे और किस स्तर पर निर्णय करना है?" निर्णयों के अन्तर्गत, उच्च नीतियों से सम्बद्ध निर्णय, साधारण नीति सम्बन्धी प्रश्नों पर निर्णय, प्रशासन सम्बन्धी मामलों पर निर्णय तथा इस बात के सम्बन्ध में निर्णय कि इन निर्णयों को किस प्रकार कार्यान्वित किया जाय, शामिल होते हैं। मोटे तौर पर, हम उनकी परिभाषा करते हुए कह सकते हैं कि ये बुनियादी नीतियों, प्रशासनिक नीतियों और कार्यान्वयन सम्बन्धी नीतियों के बारे में किये जाने वाले निर्णय होते हैं। हमेशा यह संघर्ष चलता रहता है कि कौन ये निर्णय करेगा और कौन इन्हें कार्यान्वित करेगा। समाधान का बुनियादी अन्तर, जिसकी चर्चा मन ऊपर की है, उस समय क्रियाशील होता है, जबकि निर्णय करने के अधिकार पर मतभेद हो। नौकरशाही समाधान की प्रवृत्ति समानता, प्रमाणीकरण और इस भय के नाम पर कि बातें ठीक या वाञ्छनीय ढंग पर नहीं की जायेंगी, कि निम्नतर संस्थाओं में विच्छेदकारी शक्ति-केन्द्र विकसित हो जायेंगे, कि प्रगति बहुत ही धीमी होगी, बहुत कुछ निम्नतम अधिकार हस्तान्तरित करने के पक्ष में होती है। इसी प्रकार, कुछ राजनीतिक कारण भी हो सकते हैं। पितृ प्रधान नेतृत्व की ओर एक मत प्रेरित प्रवृत्ति भी होती है। नेतृत्व के प्रतीक जिन पर नेतृत्व की प्रतिष्ठा निर्भर करती है, कालान्तर से व्यक्ति के अविच्छिन्न अंग बन जाते हैं। किन्तु इन सब के पीछे भावनात्मक प्रौढ़ता की इस विश्वास की कमी है कि जो बात सभी के हित में है वह सर्वश्रेष्ठ तथा सभी के लिये लाभप्रद ढंग पर केवल सभी को आ सकती है, जबकि प्रत्येक व्यक्ति उसे हासिल करने में हिस्सा ले। जब यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाता है कि किसी व्यक्ति का अस्तित्व उच्चतम पद पर है, तो यह तय है कि उसे पद कोई व्यक्ति दबा अवश्य है और उस हालत में सम्मिलित प्रयत्न के भीतर सामुदायिक या पंचायती क्रियाशीलता का तत्व नहीं मिलेगा। जब तक कि उपर्युक्त दोनों साधनों के पारस्परिक विरोध दुरुस्त नहीं कर लिये जायेंगे, तब तक प्रधान कार्यालयी क्रियाशीलता और क्षेत्रीय क्रियाशीलता और प्रशासन के लिए समस्यायें उत्पन्न करती ही रहेंगी। कार्य क्षमता की चिन्ता के नाम पर हम हमेशा प्रतियोगिता की नीतियां उत्पन्न करते रहेंगे, जिससे सत्ता के सम्बन्ध में गलत धारणाएं पैदा होती रहेंगी, जबकि प्रशासन का काम यही है कि वह इस सत्ता को जनता की सेवा के नाम पर सन्तुलित और महत्वपूर्ण बनाये रखे। प्रशासन का कार्य सरकार के नियमित कार्यों को ही सम्पन्न करना नहीं है। उसे अधिक व्यापक सामाजिक कार्य भी पूरा करना है। संगठन के पक्ष में उसे भावनात्मक, सामाजिक और आर्थिक स्तरों पर अविवेक-पूर्ण प्रवृत्तियों को, कम से कम, घटाकर, चाहे वह उन्हें पूर्णतः भले ही विनष्ट न कर सके, राज्य की स्थिरता को सुरक्षित रखना पड़ता है, और साथ ही साथ, शान्ति, व्यवस्था तथा प्रगति की समस्याओं से सहना पड़ता है। प्रबन्ध पक्ष में, उसे मार्ग-दर्शन, समन्वय और नियन्त्रण करना पड़ता है। यह प्रतिक्रिया तब तक सफल नहीं हो सकती, जब तक की सरकारी ताने-बाने का प्रत्येक धागा एकलय होकर कार्य न करता हो और स्वार्थ से ऊपर उठ कर समान रूप से उत्साह और सेवा भावना से प्रेरित न हो।

सत्ता के सम्बन्ध म यह याद रखना भी जरूरी है कि सत्ता के एक पक्ष मे आन्तरिक सामाजिक नियत्रण और दूसरे पक्ष म, राज्य मे निहित सत्ता होनो ह। समाज अपने अगो—व्यक्ति परिवार, गाव, राज्य और केन्द्र—के माध्यम स काय करता है। अत ग्राम इस क्रियाशीलता का केन्द्र होता है। मुख्यत आदत और परम्परा पर आधारित वाछनीय दृष्टिकोण प्र रित करके उसे आन्तरिक सामाजिक और सामूहिक नियत्रण का निर्माण करना चाहिए और सामाजिक सम्बन्धो म व्यवस्था की निश्चित प्रतिष्ठा करने के लिए जिम्मेदार होना चाहिए। इस सम्बन्ध के सन्दभ म ही हम डा० राधाकुमुद मुकर्जी के उस कथन का पाठ करना चाहिये जिसका उद्धरण मन ऊपर दिया है।

इस प्रकार ग्राम पचायत प्रशासन को एक अधिक व्यापक उद्देश्य स पूण होना चाहिए, जिसे एक विशेष प्रकार के कार्यों द्वारा पूरा करना समाज और राज्य का उद्देश्य होना चाहिए। इन कार्मों मे से कुछ स्वभावत सामाजिक काय होगे और शेष प्रशासनिक काम। अत प्रशासनिक स्तर पर पचायतो के सम्मुख पन सामाजिक और आर्थिक समस्याओं के सम्बन्ध में निणय करने के अधिकार बगर अथवा प्रशासनिक और क्रियाशीलता सम्बन्धी नीतियो के बारे म निणय करने का अधिकार बगर सत्ता और कार्यों की बात करना उस एकदम निम्नतम अधिकार को इकार करने के समान है जो पचायत द्वारा अपनी भूमि का अदा करन के लिए आवश्यक है। इस तरह की लगडी या निर्जीव सस्था से यह अपेक्षा हर्गिज नही की जा सकती कि वह उन कार्यों को कामयाबी से पूरा कर लेगी जिसका उल्लेख मने ऊपर किया है। यह काय हैं 'अविवेक पूण प्रवृत्तियो को कम करना, या 'शान्ति और अव्यवस्था की समस्याओ से लडना या 'माग-दशन 'समन्वय और नियन्त्रण करना। इस प्रारभिक असुविधा से प्रारम्भ करने पर उससे यह अपेक्षा हर्गिज नही की जा सकती कि वह 'वाछनीय दृष्टिकोण प्रेरित करेगी या 'आतरिक नियत्रण का निमाण करेगी या सामाजिक सम्बन्ध म निश्चित व्यवस्था कायम करने की जिम्मेदारी लेगी।

इस पृष्ठ भूमि म आइये हम देखें कि आज से २० वष पूव गाधी जी ने हरिजन मे क्या लिखा था।

'म यह कहता रहा हू कि अगर छूतछात का भावना कायम रही तो हिन्दू धम का अस्तित्व खत्म हो जायगा, उसी तरह म कहूगा कि अगर गाव विनष्ट हुआ तो भारत भी नष्ट होकर रहेगा। भारत नही रह जायगा। विश्व म स्वय उसका अपना मान्न खत्म हो जायगा।

इसस यह बात स्पष्ट हो जाती है कि देश की भावी रूपरेखा म गाधीजी ग्रामो से किस तरह की भूमिका अदा करन की अपेक्षा करते थे। आधुनिक खयालो के भारतीय को उनके विचार म बहुत ही सीमित विश्वास था, क्योंकि गाधीजी जिस तरह की सामाजिक व्यवस्था की कल्पना करते थे उसमे उसका सीमित विश्वास था। आधुनिक खयाला के भारतीय की अपनी धारणायें अपनी कल्पनाए, थीं। वह गावो के विकास के लिए यथाशक्ति सब कुछ करन को तयार था। किन्तु उसके लक्ष्य का मूल तत्व यह था कि वह देहातो का शहरीकरण करना चाहता था। अत उसके लिए पचायत एक छोटी प्रशासनिक इकाई

थी—अधिक से अधिक एक छोटी नगरपालिका का प्रारम्भिक रूप। उसने दुबारा सोचने पर गांधीजी की सलाह से संविधान में यह व्यवस्था शामिल करना मंजूर कर लिया।

इतिहास का निर्माण जनता द्वारा होता है। लेकिन इस प्रक्रिया में वह भी जनता का स्वरूप निर्माण करता है। इतिहास की प्रत्येक घटना, इस प्रक्रिया में प्राप्त प्रत्येक अनुभव, न सिर्फ कुछ बाहरी परिणाम उत्पन्न करता है बल्कि आम जनता को भावात्मक और मनोवैज्ञानिक स्तर पर भी प्रभावित करता है। इतिहास के मोड़ अपनी छाप छोड़ जाते हैं और जनता के मस्तिष्क को एक ऐसा मोड़ देते हैं, जो कि उन भौतिक परिणामों की अपेक्षा जिन्हें ऐतिहासिक घटनायें प्रत्यक्ष उत्पन्न करती हैं, अधिक शाश्वत और स्थायी होता है। वे नागरिकों के मस्तिष्क और हृदय के कुछ गुणों को सबल बनाते तथा कुछ को दबा देते हैं, ठीक उतना ही जितना वे कुछ कमजोरियों को बढ़ाते और कुछ को दबा देते हैं। नतीजा यह होता है कि एक विशेष दृष्टिकोण विकसित हो जाता है। राष्ट्र केवल एक समूह नहीं होता। भारत आज जो कुछ है, वह उन सभी बातों का सम्मिलित रूप है, जो उसे इतिहास से विरासत में मिली हैं और जिन्हें उसने अनुभव किया है।

एक नवीन विराट अभियान

भारत ने एक नवीन लम्बा अभियान प्रारम्भ किया है। उसने एक नवीन अध्याय खोला है, जो कि न पहला है और न अंतिम। हम अपने भाग्य के भाग का सर्वेक्षण और नक्शा तैयार कर रहे हैं। इसमें मानव प्राणियों के छठे हिस्से का भाग्य शामिल है जिनमें से ८० फी सदी गांवों में रहते हैं। मशीन या व्यवस्था एक माध्यम होती है। यह सिर्फ वाहक है—एक साधन। अतः, आइये, हम इस सवाल पर कि भारत की प्रशासनिक व्यवस्था में हम ग्राम पंचायत को कौनसा स्थान देते हैं, एक संतुलित निर्णय करें। मैंने राष्ट्र की निर्दोष प्रवृत्ति की चर्चा की है। मैंने ग्राम पंचायत की भूमिका का उल्लेख किया है। जब गांधीजी ने भारत और विश्व में भारत के आदर्श के जीवित रहने की बात कही थी, तो उनके दिमाग में ये दोनों ही बातें थीं।

यह सामान्य तर्क की बात है कि मनुष्य के अनुभव और ज्ञान में प्रत्येक वृद्धि के साथ, चाहे वह सामाजिक या आर्थिक क्षेत्र में हो, उन संस्थाओं में परिवर्तन अवश्य होगा, जो लोगों के जीवन को अनुशासित करती हैं। किन्तु इसमें एक बात और है। इस प्रकार परिवर्तन में बढ़े हुए ज्ञान और अनुभव से उत्पन्न शक्ति प्रतिबिम्बित होनी चाहिये। इसका मन्तव्य अनिवार्य रूप से लोगों की सामाजिक और आर्थिक संस्थाओं के आधार को व्यापक बनाना होता है। यदि राजनैतिक और आर्थिक उत्थान के प्रत्येक कदम पर भारत में समाज के जीवन को अनुशासित करने वाली संस्थाओं का आधार व्यापक होता रहता तो गांधीजी को कोई ऐतराज न होता। उन्होंने एक बार कहा था कि

असंख्य ग्रामों से निर्मित इस ढांचे में अनवरत विस्तारशील वृत्त होंगे जो कदापि ऊर्ध्वगामी नहीं होंगे। जीवन एक पिरामिड नहीं होगा जिसका शिखर तले पर अवलम्बित होता है। उसका आशय तो होगा महासागरीय वृत्त और परिधियां जो कि उस महासागर की विशालता का अंश होंगी, जिसकी वे अविच्छिन्न अंग हैं।

और उन्होंने आगे कहा

'बाह्यतम परिधि इसलिए सत्ता का उपयोग नहीं करेगी कि वह आन्तरिक वृत्तो को खत्म कर दे, बल्कि उन सभी को शक्ति देगी जो उसके अन्दर होंगे और उनसे स्वयं शक्ति हासिल करेगी।'

तो, तीसरा दृष्टिकोण है जिसे मैं प्रस्तुत कर रहा हूं। मेरा उद्देश्य यह दिखलाना है कि आधुनिक विचारधारा भी हमें इसी निष्कर्ष तक ले जाती है। इसमे से अधिकांश, जिनमें मैं भी हूं के सामने कुछ बाधाएं हैं। हम अपने आपको, कुछ हद तक ग्रामीण जीवन से बौद्धिक और भावनात्मक स्तर पर पृथक समझते रहे हैं। हालांकि शारीरिक स्तर पर हम मे से कुछ लोग अभी भी उससे सम्पर्क बनाये हुए हैं। अतः ग्रामीण व्यक्ति के विचारो को समझने में कुछ प्रयत्न करने की जरूरत पड़ती है जो कि निश्चय ही खोखले नहीं। प्रकृति को शून्यता से घृणा है। उसका मस्तिष्क नये विचारो को ग्रहण कर रहा है, और बड़ी तेजी से विकसित हो रहा है जैसा कि होना स्वाभाविक भी है। वह आजादी के प्रतिफल तथा वैज्ञानिक और प्राविधिक विकास के लाभो मे हिस्सा बटाने में गहरी दिलचस्पी ले रहा है। उसकी प्रवृति भी शहरी हो रही है। अगर भारत की भौतिक स्थितियां वर्तमान जैसी न होती तो ऐसा होने दिया जाता। किन्तु मस्तिष्क का शहरीकरण और जीवन की ग्रामीण परिस्थितियां ऐसे तनाव पैदा करेंगी, जिन्हे हम भुला नहीं सकते क्योंकि हम चाहने पर भी ऐसी परिस्थितियां पैदा करने की आशा नहीं कर सकते, जो एक निश्चित समय के भीतर हमारी सभी उचित आशाएं पूरी कर सकें। अतः इन तनावो पर जो कि एक प्रकार के विस्फोट के रूप में विकसित हो रहे हैं एक सम्भव नियन्त्रण यह है कि हम ग्रामीण व्यक्ति को राष्ट्रीय प्रयास के बड़े ताने बाने में मिलाकर बुन लें ताकि वह राष्ट्र के सामने पेश इस महान कार्य में हिस्सा लेने वाले की हैसियत से यह जान सके कि सचमुच यह एक महान् कार्य है और कोई भी उसे पीछे रहने देना नहीं चाहता। इस उद्देश्य को पूरा करने का एक मात्र सम्भव माध्यम ग्राम पंचायत है।

आत्मनिर्भरता

दूसरे किसी भी देश का विकास उन साधनो पर निर्भर करता है जिन्हें वह विकास में लगा सके। एक अर्द्ध विकसित देश के लिए जो कि अपनी अर्थ-व्यवस्था का निर्माण करने की कोशिश कर रहा हो कुछ समय तक दूसरो पर निर्भर रहने की स्थिति से बच पाना मुश्किल है, किन्तु एक सीमा होती है जिसके बाद इस तरह की निर्भरता, अगर उसकी आजादी को नहीं तो कम से कम, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र मे अपनी नीति लागू करने या उसका अनुशीलन करने की उसकी स्वतन्त्र इच्छा पर प्रभाव डाल सकती है। वह सीमा क्या होगी—यह एक निर्णय का प्रश्न है। किन्तु पिछले तीन महीनो के दौरान आप सबने एक ऐसा वातावरण देखा होगा जिसमे सामान्यतः विवेकशील व्यक्ति भी 'अस्तित्व के लिए सहायता' के रूप में सोचने लगे थे, जबकि उन्हें "अस्तित्व के लिए सर्वोच्च आन्तरिक प्रयास" के रूप में सोचना चाहिये था।

पूंजी निवेश का कार्यक्रम जो कि निश्चित जिम्मेदारियां पैदा करता है देश मे ही कुछ आधिक्य का, अथवा विदेशी सहायता की उपलब्धि की, कल्पना करता है। भारत मे हमारे पास धन के आधिक्य की कमी है और हमें अनिवार्य रूप से अक्सर दूसरे विकल्प का सहारा लेना पड़ता है हालांकि हम ऐसा स्वेच्छा से नहीं बल्कि परिस्थितियों से बाध्य होकर करते हैं। लेकिन इस विकल्प में उपयुक्त जोखिम भी होता है। इस स्थिति का सामना करने के लिए हम क्या करना चाहिये? मैं अर्थशास्त्री नहीं हूं, लेकिन महसूस करता हूं कि हम अधिक से अधिक आत्मनिर्भरता के रूप में सोचना शुरू कर देना चाहिये।

इसका मतलब यह हर्गिज नहीं कि हम बड़े पमाने के उद्योगों पर पूजी लगाना बन्द कर देंगे। इसका मतलब यह भी नहीं कि हम किसी ऐसे काय के रूप म सोचगे ही नहीं जिसमे विदेशी विनिमय की जरूरत होगी। जहा तक मैं देख सकता हूँ उन योजनाओ को पूरा करने के लिए काफी मात्रा म विदेशी विनिमय की जरूरत होगी, जि हें हम पहले से शुरू कर चुके हैं, क्योंकि हम अपनी पूजी का कोई अश ब द कर रखना नहीं चाहते। लेकिन, फिर भी विकल्प बिल्कुल स्पष्ट है। मैं अपने देश के आन्तरिक साधनों के अधिक उपयोग के रूप में सोच रहा हू। हमारे पास मानव शक्ति का अपार अप्रयुक्त साधन पडा हुआ है। हमारे पास दूसरे भी साधन बडी मात्रा म बिखरे पड़े हैं जिनका उपयोग हम अभी सिफ इसलिए नहीं कर सके हैं कि हम ऐसा करने मे असमथ रहे हैं। मेरा खयाल है कि जब गाधीजी ने आत्मनिभर ग्रामीण अथ-व्यवस्था के पक्ष पर जोर दिया था, तो उनके विचार के पीछे अप्रयुक्त बिखरे साधन और बेकार या अद्ध-बेकार किन्तु अत्यधिक सम्भाव्यता वाली अपार मानव शक्ति ही थी। इनका उपयोग केन्द्रीय और राज्य सरकारें नहीं कर सकतीं, क्योंकि वे एक दूरी से काय करती हैं और ऐसा करने मे काफी विस्तारपूण ध्यान देने की जरूरत होती है।

साधनों की प्रचुरता

बिखरे हुए साधनो की विभिन्नता मुरझाये पत्तों तथा अन्य फैली हुई अनुपयोगी वस्तुओ से बनी खाद के ढेरा से लेकर जन मानस के आत्मिक साधनो तक फैली हुई है। उपयोग म लाये जाने योग्य साधनो का एक बड़ा भडार हमारे पास है, किसी न किसी को उसे इस्तेमाल मे लाना ही होगा। यह काय केवल ग्राम पचायतें ही कर सकती हैं। जब तक सारा देश ग्राम्य जीवन के मूल्यो को भारतीय स्वराज्य की इमारत को बनाने में आधारभूत मान्यता के रूप म अपना नहीं लेता, तब तक क्या वे ऐसा करने में दिलचस्पी दिखायेंगे? यदि भारत के ग्रामीण समुदायो मे निहित शक्ति का अधिकतम उपयोग करना है तो हम यह मानना पड़ेगा कि हमें एक दीर्घकाल तक गावो पर आश्रित रहना होगा, हम जीवन मे ऐसे कुफलों को बर्दाश्त नहीं कर सकते जोकि ग्राम्यजीवन से छुटकारा पाना चाहते हैं।

तब सहकारी, सामाजिक व आर्थिक क्रांति मे गाव एक सम्बल बन जाता है, इसके लिए ऐसा बनना सम्भव नहीं है, जब तक कि इस आवश्यक मुत्थान या विकास करने के जरूरी अवसर प्रदान नहीं किये जाते तथा इसे अनिवार्य आवश्यकतायें, जसे सहूलियतें, प्राविधिक सहायता, वित्तीय तथा प्रशासनिक शक्ति उपलब्ध नहीं की जाती। आजीविकोपार्जन करने वाले और धनोपार्जन म सहायक व्यक्ति, इन दोनों म अन्तर है। एक उपासक है, और दूसरा शोषित। गाव को स्तर और शक्ति, दोनो ही तरफ अपने आपको ऊपर उठाना है। इसे पुन शक्तिवान बनाना होगा ताकि यह राष्ट्र के सामाजिक व आर्थिक सम्मान का अ तिम आधार बन सके।

अन्तत , गाधी जी ने ससार की परिस्थितियो के स दभ में भारत की विशेष देन के बारे म लिखा था। केवल वही सस्कृति जीवित रहने की आशा कर सकती है जिसका लक्ष्य मानवजाती का सम्पूर्ण विकास करना हो, और इस विकास का माध्यम हर प्रकार के विचारों और मता के प्रति सहिष्णुता हो। अभी कुछ ही समय पूव तक भारत का प्रत्येक ग्राम स्वसहायता सहकारिता और पचशील के दशन का प्रतीक रहा है। हमारा लक्ष्य इसे पुनर्जीवित करना है। इसके पुनरुत्थान के साथ ही सारे मसले को पुन

स्पष्ट रूप से समझ लेना है, जिस वैज्ञानिक और प्राविधिक युग में हम रह रहे हैं, उसकी यह माग है। सामाजिक रूप से समन्वित जाति ही इस उत्तरदायित्व को निभा सकती है। इस प्रकार के अभिप्राय के लिए हम गावो की जनता को एक बड़ी इकाई के अश के रूप में सामाजिक, आर्थिक तथा अन्य दृष्टियों मे मुख्यत स्थानीय उपलब्ध साधनो से और उनकी अपनी पसन्द द्वारा विकसित होने के अवसर उपलब्ध कराने चाहियें। हम इस बात की उचित ही आशा कर सकते हैं कि इस प्रकार के सम्मानयुक्त रचनात्मक प्रयत्न द्वारा अपनी अभिव्यक्ति करने पर वे एक समन्वित व्यक्तित्व प्राप्त कर लेंगे। जनतन्त्र केवल अस्थाई सांख्यिकी आधिक्य का ही शासन नहीं होता। यह तो बाह्य जोरजबरदस्ती द्वारा भ्रष्ट हुए बिना सम्पूर्ण समाज की आकाक्षाओ और कार्यों की अभिव्यक्ति है जिसका परिणाम रचनात्मक प्रयत्न में भाग लेने इससे पूर्व उसके आयोजन म भाग लेने, और अन्त मे उससे प्राप्तियो के बराबर वितरण करने से हुई सन्तुष्टि मे होता है। जब तक इस भावना का अभाव रहेगा तब तक प्रशासनिक या विकास सम्बन्धी कार्यों म शारीरिक प्रयत्न चाहे जितनी भी मात्रा मे किया जाय, जनतन्त्र म हमारा यह तजुर्बा गहरी नींव नहीं पकड सकेगा। हम इसी प्रकार विश्व शान्ति और विश्व-जनतन्त्र को सुदृढ बनाने मे भाग लेना चाहते हैं।

हम जो भी कामक्रम या स्कीम बनाते हैं, उसे इन मूलभूत लक्ष्यो को बढाने मे सहयोग देना चाहिये, न कि इनके रास्ते म रुकावट डालें।

आदर्श पचायत प्रशासन

ग्राम्य ढांचे की जिस धारणा का उल्लेख मैंने ऊपर किया है उससे पचायत प्रशासन की धारणा पर अवश्यमेव प्रभाव पड़ना चाहिये। यह केवल ऐसा अधिकारी नहीं होगा जो कि परिधि पर काम कर रहा हो। यह राज्य के प्रशासनिक ढांचे का विकेन्द्रित अश भी नहीं होगा। इसे जीवन के विशेष मूल्यो के आधार पर नयी सामाजिक व्यवस्था की नींव बनना है। इसे शान्तिमय सामाजिक क्रांति का एक प्रभावपूर्ण औजार बन कर काय करना है। इसे राजनीतिक और आर्थिक शक्ति के विकेन्द्रीकरण का माध्यम बनना है। इसको सगठित जनतन्त्र का एक नमूना बनना है। और यह सभी कुछ इसे एक विशेष रचनात्मक दृष्टिकोण द्वारा ही प्राप्त करना है।

म अच्छी तरह समझता हू कि मैंने जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह फौरन ही कार्यान्वित नहीं किया जा सकता। गांधीजी न भी कहा था —

मुझ पर यह ताना कसा जा सकता है कि यह सब अत्यन्त कल्पनाजन्य है, और इसलिये इसका मूल्य भी विचार के बराबर नहीं। यदि यूक्लिड का बिन्दु जिसे अकित करना किसी भी मानव के लिए असम्भव था शाश्वत महत्व रखता है तो मैंने जो चित्र प्रस्तुत किया है उसका भी मानवता के अस्तित्व के लिए अपना शाश्वत महत्व है। भारत इस सच्चे चित्र के लिए कायम रहे, हालाकि यह पूर्ण रूप म कदापि हासिल नहीं किया जा सकता। इसके पहले कि हम अपनी आकांक्षा जैसा चित्र उपलब्ध कर सकें हमारे सामने जो कुछ हम चाहते हैं, उसका सही चित्र होना ही चाहिए। यदि भारत के प्रत्येक ग्राम को लोकतन्त्र बनना है तो म अपने आदर्श के औचित्य का दावा करूंगा, जिसमे अन्तिम का महत्व प्रथम के समान ही है, या अन्य शब्दों म, किसी को भी न प्रथम होना है न अन्तिम।'

लोगो को चेतना के विकास और उनके बीच एक सामान्य किस्म के नेतृत्व के विकास के साथ-साथ इस प्रकार के प्रयोग को भी विकसित होना चाहिये। पश्चिमी किस्म का चुनाव स्वयं गलती करने और सुधारने की लम्बी प्रक्रिया का अन्तिम स्वरूप है। गावो मे पायी जाने वाली चेतना को देखते हुए हम यह कह सकते हैं कि इसे इसके अतिरिक्त गणितीय महत्व के अलावा अन्यथा समझा नहीं जा सकता। गाव की जनसख्या तो अलग रही, हमम से भी कितनो को अभी लोकतन्त्र का यह पहलू समझना है। अत गावो के लोगों के लिए इसे समझना कितना ज्यादा कठिन होगा। मैं ने अन्यत्र कहा था —

"अत मतदान द्वारा जनता के आपसी सम्बन्ध को विच्छिन्न होने नहीं दिया जा सकता। अपनी कड़ी मानसिक सीमाओं के कारण राजनीतिक दल, कम से कम वतमान परिस्थिति म, सामाजिक विलय और एकीकरण की इस बुनियादी आवश्यकता को तिलांजलि दिये बगैर, तथा सामुदायिक अस्तित्व की प्रक्रिया को क्षति पहुँचाये बगर क्रियाशील ही नहीं हो सकते। अत मैं बिना हिचक कह सकता हू कि दलों के आधार पर होने वाले चुनाव गावो की जनता के प्रति की गई सब से बुरी सेवा सिद्ध होंगे।

प्रो जी डी एच कोल ने पेरिश कौंसिलो की दलगत राजनीति का उल्लेख करते हुए कहा है —

'यदि हमारा दल चुनाव म पेरिश कौंसिल की सभी जगहों पर सफलता हासिल कर ले, तो पेरिश कौंसिल शायद ही अच्छी तरह काय कर सके। इसके लिये समूचे रूप से स्थानीय सामुदायिक सरकार के स्वरूप का प्रतिबिम्बित करना तथा अपने सदस्यो म, उनके राजनीतिक मतभेदो के बावजूद सहकारिता का सगठन करना बेहद जरूरी है।"

मैं इस तरह के चुनावो के विरुद्ध वधानिक रोक लगाने का अनुरोध करने की सीमा तक जाना चाहूँगा।

मैं ने उस समय यह भी कहा था —

'हालांकि चुनाव जनता की इच्छा का मूल्यांकन करने के लिए जरूरी हैं महत्वपूर्ण बात यह है कि जनता कि इच्छा का मूल्यांकन किस तरह किया जाय, न कि कोई विशेष तरीका। अत मैं जनता कि इच्छा का निश्चय करने के इस सवाल के मौलिक समाधान पर जोर दूगा। अगर हम गावो म एकता कायम रखने पर जोर देते हैं तो हम अभी भी हर गाव में कुछ ऐसे व्यक्ति मिल सकते हैं जिनम ग्राम समाज अपना विश्वास दृढ रखने के लिये तैयार होगा। जरूरत है ऐसे कार्यकर्ताओ की जो कि ग्रामीण जनता के विचारो और प्रचलित धाराओ को अच्छी तरह समझते हों, न कि सिर्फ चुनाव सम्बन्धी कानून की प्राविधिक गणित को ही सन्तुष्ट करते हों।"

निस्सदेह, मतैक्य का मतलब शत प्रतिशत एकता नहीं होता है। यदि पचायत को अपनी भारी जिम्मेदारियां निभाना हैं, तो गाव के बाशिन्दों का उसके साथ रहना लाजिमी है। अन्यथा उसका काफी समय और शक्ति झगडे और विद्वेष में ही बीत जायगा। अन्तिम रूप में परिणाम विचित्रता और असतोष होगा। इस हालत म हम वैयक्तिक तथा दलगत भावनाओ की वेदी पर महान् और विशाल लक्ष्य की आहुति चढ़ा देंगे और एक गन्दे किस्म का नेतृत्व उत्पन्न करेंगे जो कि शेष आवश्यक गुणो को भी चूस लेगा।

एकता की सफलता

इस दलील का उत्तर देना मेरे लिये कठिन है कि ग्रामों में मौजूद फूट के बीच एकता कैसे हासिल की जा सकती है। सौराष्ट्र का उदाहरण देकर मैं केवल अपनी प्रमाणिकता प्रस्तुत कर सकता हूं। लेकिन, इसके अलावा, मैं ग्रामीण की अनिवार्य बुद्धिमत्ता में अपने विश्वास को मिटा नहीं सकता। यदि उचित ढंग से उन तक पहुँचा जाय और उन व्यक्तियों द्वारा जिनमें वे विश्वास रखते हों, तो वे विवेक और बुद्धिमत्ता की आवाज को सुनेंगे। शान्तिपूर्ण, सन्तुष्ट और लाभप्रद अस्तित्व के लिये प्रेम उनके हृदयों पर असर करता है और उनके विचारों पर शासन करता है।

मैं भी पंचायतों के वर्गीकरण के पक्ष में रहा हूँ। जैसे-जैसे वे अधिक अनुभवशील और परिपक्व होती जायं, उन्हें उत्तरोत्तर उच्च स्थान प्रदान किया जाय। इस दिशा में भी प्रयत्न किया गया और सौराष्ट्र में यह सफल साबित हुआ। 'स' श्रेणी की पंचायतें सामान्य स्वच्छता तथा अन्य कार्य सम्पन्न करती हैं। 'ब' श्रेणी की पंचायतें राज्य का सरकारी बकाया वसूल करती हैं, जिसमें मालगुजारी तथा छोटे तकावी ऋण के अनुदान भी शामिल हैं तथा पटवारी या सर्किल निरीक्षकों के अन्य कार्य करती हैं। अ श्रेणी की पंचायतों पर न्याय सम्बन्धी कार्यों का भार है। जिस अनुपात से ये कार्य सम्पन्न करती हैं उसी अनुपात से सरकारी अनुदान में वृद्धि होती है। सामान्य रूप से ब श्रेणी की पंचायतों तक पहुँचने के लिये स श्रेणी की पंचायतों को दो वर्ष लगते हैं और एक या दो से अधिक 'ब' श्रेणी की पंचायत को अ श्रेणी तक पहुँचने के लिए। मेरा ऐसा विचार है कि ग्रामीण को उत्तरदायित्व की दृष्टि से केवल उसी हद तक प्रभावित किया जा सकता है जिस सीमा तक राज्य के नेतृत्व में पंचायत को जिम्मेदारी हस्तान्तरित करने का उद्योग होता है। यह तथ्य कि सरकार वास्तविक उचित तथा महत्तम सम्भव अधिकार हस्तान्तरित करने को दृढ़ प्रतिज्ञ है, पंचायत को प्रभावपूर्ण बनाने तथा उससे श्रेष्ठतम प्राप्त करने में बहुत प्रभावकारी रहा है।

ग्रामीण प्रशासन लोगों के निकटतम रह कर ही कार्य करता है। उसमें अधिकार या सत्ता के बनावटी रोब को बनाने या भय पैदा करने की कोई गुंजायश नहीं जो कि मंत्रियों या अधिकारियों में है। ग्रामीण लोगों तथा ग्रामीण नेतृत्व दोनों के हित में निरंकुश शक्तियों का कोई प्रयोग नहीं होना चाहिए, जो कि उन्हें स्वीकार करने की जरूरत पड़ सकती हैं। एकमात्र प्रभावपूर्ण तरीका समझाना बुझाना तथा हृदय परिवर्तन ही हो सकता है। उचित ढंग तो जीवन में एक नये सहयोगी तथा सभ्य तरीके के मूल्यों के प्रति वफादारी पैदा करना है। ग्राम पंचायत को सामाजिक शिक्षा तथा सामूहिक जीवन का तथा उसके लिए अवसर प्रदान करने का माध्यम बनना चाहिए।

गांव को पुलिस के प्रबन्ध से भर देने की गुंजायश नहीं। आन्तरिक या आत्म संयम एक गांव का सामाजिक जीवन में एकमात्र सुरक्षा यन्त्र है। एक धर्म निरपेक्ष लोकतन्त्र में भी लोगों को अपने पूर्वजों की आस्था से शिक्षा ग्रहण करने और अपने बच्चों के चरित्र के लिये बुनियाद तयार करने की गुंजायश है। हम धर्म का मजाक नहीं उड़ा सकते। ग्रामीण स्तर पर धर्म कम से कम विच्छिन्नता या उथल-पुथल मचायेगा।

पचायतों के कार्य

पचायत के कार्यों को अच्छी तरह बताया जाना चाहिये। द्वितीय पचवर्षीय आयोजन मे योजना आयोग ने यही बताने का प्रयत्न किया है। उसने कार्यों को दो व्यापक वर्गों मे बाट दिया है, जैसे प्रशासनिक तथा न्याय सम्बन्धी। न्याय सम्बन्धी कार्यों के अन्तर्गत नागरिक तथा आपराधिक न्याय का प्रशासन, श्रम कानून, खास तौर से कृषि मजदूरो मे न्यूनतम वेतन का अधिनियम तथा भूमि से सम्बन्धित साधारण झगडो मे उनका लागू किया जाना आता है। प्रशासनिक कार्यों मे नागरिक काय तथा भूमि व्यवस्था तथा विकास सम्बन्धी काय शामिल है। नागरिक कार्यों मे ग्रामीण स्वच्छता, देख रेख तथा जन्म और मृत्यु के लेखे काय आते है। देख रेख सम्बन्धी काय गाव के बडो द्वारा सम्पादित होने चाहिए। एक पचायत के न्याय सम्बन्धी अधिकार उसके स्थान और प्रतिष्ठा का निर्माण करते है। मालगुजारी का सग्रह तथा उसका सदुपयोग और न्याय पचायत से लोगों पर उसका आवश्यक प्रभाव जमेगा। अध्याय ७ के अनुच्छेद १२ म इस पर विस्तारपूर्वक विचार करते हुए योजना आयोग ने इन बातो की व्यवस्था की है।

(अ) भूमि-सुधार लागू करने में पचायतो का सहयोग,
(ब) भूमि के उपयोग का नियमन, और खास तौर पर प्रतिमान, अच्छे प्रबन्ध और कृषि के तरीके अपनाना
(स) खेती और गाव मे उत्पादन सम्बन्धी कायक्रम कार्यान्वित करना,
(द) सहकारिता और सहकारी प्रयत्नो को बढ़ावा देना,
(य) कुटीर, ग्रामीण और लघु उद्योगो को बढावा देना, तथा
(र) समूचे रूप म योजना कार्यान्वित करने के लिये जनता के सहयोग का उपयोग।

इस सम्बन्ध मे, स्वभावत हम अपना ध्यान राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक योजना खडों की ओर ले जा सकते हैं। निस्सदेह यह भूतकालीन विचारधारा के आगे बढा हुआ कदम है। भारत की गरीबी और उसके पिछड़ेपन की प्रत्यक्ष वास्तविकता से जो कि ग्रामीण क्षेत्रो मे दिखलाई पडती है, यह बात जरूरी हो जाती है कि ग्राम पचायतो के माध्यम से सर्वतोमुखी प्रयास किये जाय जिनके द्वारा देश की ग्रामीण जनता का इस बात के लिए आह्वान किया जा सके कि वह देश के जीवन के भावनात्मक, सांस्कृतिक और उत्पादन के क्षेत्र म अपना सर्वश्रेष्ठ योगदान प्रदान करे।

वित्त और कर्मचारी

प्रशासन के सन्दर्भ म जिस समस्या पर विचार करना शेष है, वह वित्त और कर्मचारियों से सम्बद्ध है। यह सही है कि राज्य सरकारो के पास धन की कमी है। मने ऊपर यह बताया है कि अभी भी धन के अलावा ऐसे बहुत से साधन गावो मे सर्वत्र बिखरे पडे हैं जिनका उपयोग नही हो सका है। इस समय जरूरत यह है कि इस तरह बिखरी मानव शक्ति और भौतिक साधनो का उपयोग किया जाय। प्रशासनिक क्षमता की कसौटी इस मामले को सफलता के साथ हल करने म निहित है। इस सन्दर्भ म श्रम-कर विचारणीय हो सकता है जिसकी अदायगी के सम्बन्ध म यह स्वेच्छा हो कि उसे चाहे नकद अदा किया जाय या श्रम या वस्तु के रूप मे। १० करोड प्रौढ जनसख्या एक साल मे २४ दिन के श्रम

की दर पर (जो कि पुराने जमाने मे प्रचलित था) श्रम के रूप मे १०० करोड रुपये प्रदान कर सकती है बशर्ते कि एक दिन के श्रम का मूल्य आठ आना हो। इससे, और उन साधनो का उपयोग कर जो कि बेकार पडे हुए हैं या बर्बाद हो रहे हैं, जिनमे बेकार जमीनें और श्रमदान बचत, आदि भी शामिल हैं, काफी मात्रा मे पूजी का निर्माण हो सकता है। हो सकता है कि मं अति-आशावादी होऊ लेकिन मुझे निराशावादी को उत्तर देना है। हम अभी शुरूआत भर कर सकते हैं। इसके बाद कार्यकर्ताओ का सवाल आता है जिनमे पचायतो से सम्बद्ध सरकारी और गैर-सरकारी दोनो ही प्रकार के कार्यकर्ता शामिल हैं। जब तक कि पचायत के सदस्यो और सरकारी तथा गैर सरकारी कार्यकर्ताओ के बीच वह भावनात्मक सद्भावना न होगी, तब तक हम आसानो के साथ तरक्की करने की आशा नहीं कर सकते। मने ऊपर उस क्षेत्र म उपलब्ध एक प्रकार की ऐसी अर्द्ध सरकारी या गैर सरकारी व्यवस्था की स्थापना की जरूरत का सुझाव दिया है जो कि नियत्रण करने या आदेश देने की बजाय ग्राम पचायत की सहायता और रहनुमायी कर सके। हमे पचायतो का मित्र, विचारक और मार्गदर्शक बनना है जो कि उस जगह प्रशसा करने के लिए तत्पर हो जहा प्रशसा करना उचित हो, और हमेशा उसके मार्ग के बाधक तत्वों को दूर करने से सम्बद्ध उसकी जिम्मेदारियो म हाथ बटाने के लिए सहायता करने को तयार भी। हमे निराशा का त्याग कर देना चाहिये। हम उसका आलोचक नहीं होना चाहिये। ग्राम भारत की आशा है। हमें स्वय आशावादी बनकर आशा उत्पन्न करने की शिक्षा लेनी होगी।

एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात स्थानीय अधिकारियो और ग्राम पचायत का पारस्परिक सम्बन्ध है। यदि ग्राम पचायत को राष्ट्र के समूचे ढाचे का अग मानना है, यदि उसे राष्ट्रीय उन्नति के लिए किये गये कुल प्रयत्नो म हिस्सेदार समझना है, तो सघर्ष या समानान्तर क्रियाशीलता का सवाल ही नहीं उठता। अन्त म, कार्यकर्ताओ के प्रशिक्षण की समस्या भी है। हमे मानना पडेगा कि वर्तमान प्रशिक्षण प्रणाली बेकार सी है। भारत ग्रामो मे रहता है। अत अगर प्रशिक्षण मे इस सत्यता को प्रतिबिम्बित होना है तो प्रशिक्षण का काय स्कूल से ही प्रारम्भ हो जाना चाहिए। अगर स्कूल स्तर पर युवकों को इस दिशा मे कुछ प्रशिक्षण मिलने लगे तो ग्राम पचायतो की आवश्यकताए श्रेष्ठतर ढग पर पूरी हो सकती हैं।

(२९ नवम्बर १९५७ को पटना विश्वविद्यालय के 'इन्स्टीटयूट आफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन' मे किया गया भाषण)



पंचायती राज के लिए श्री बलवंतराय मेहता कमेटी की प्रारंभिक सिफारिशें

धारा १

मूल धारणा व लक्ष्य प्राप्ति

आर्थिक विकास के पहलुओं पर अति शीघ्र अधिक ध्यान दिया जाकर कार्यक्रम के विभिन्न अंगो को प्राथमिकता की दृष्टि से हस्तगत करना चाहिये जैसे जल वितरण, कृषि की प्रगति, पशुपालन, सहकारी गतिविधियां ग्रामोद्योग तथा स्वास्थ्य आदि ।

धारा २

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण

सरकार को कुछ कार्यों व जिम्मेदारियों से अपने आपको पूर्णत अलग मानकर कार्यक्रमों का दायित्व एक ऐसी संस्था को सौंप देना चाहिये जिस पर अपने क्षेत्र के विकास कार्यों का पूरा जिम्मा हो और अपने आपको निर्देशन, निरीक्षण और आयोजन के कार्यों तक सीमित रखना चाहिए।

ब्लाक के स्तर पर एक ऐसी स्वशासित संस्था का गठन किया जाये जिसका कार्यक्षेत्र विकास ब्लाक से जुड़ा हुआ हो।

ग्राम पंचायतों से अप्रत्यक्ष चुनावों द्वारा एक पंचायत समिति का निर्माण हो।

ब्लाक के क्षेत्र की नगर पालिकायें अपने सदस्यों में से एक को पंचायत समिति का सदस्य चुने। राज्य सरकारें ग्राम नगरपालिकाओं को पंचायतों में परिवर्तन करें।

जिस ब्लाक के अधिकार क्षेत्र में स्थानीय सहकारी संगठन अधिक महत्व पूर्ण हों वहां निर्वाचित स्थानों के १० प्र० श० स्थान निर्वाचन अथवा नियुक्तियां द्वारा सहकारी समितियों के डायरेक्टरों से भरे जाने चाहिये। समिति का कार्यकाल ५ वर्ष का हो और पंचवर्षीय योजना के समय के तीसरे वर्ष में इसका गठन हो।

पंचायत समिति के कार्य कृषि के हर अंग का विकास पशुपालन में प्रगति, स्थानीय उद्योगों का बढ़ावा, जन स्वास्थ्य, कल्याणकारी कार्य, प्राथमिक पाठशालाओं का संचालन तथा आंकड़ों के संग्रह आदि

हों। समिति राज्य सरकार द्वारा सौंपी गई विकास सम्बन्धी योजनाओं को कार्य रूप में परिणित करने में उसके प्रतिनिधि के रूप में भी कार्य करें।

जब पचायत समितियां प्रजातांत्रिक पद्धति पर दक्षता पूर्ण कार्य करना शुरू कर दे तो उन्हें आगे जाकर और भी कार्य सौंपे जाने चाहियें।

पचायत समिति को निम्नलिखित आमदनी के साधन प्रदान किये जाने चाहिए।

(१) ब्लाक के क्षेत्र के अन्दर से आने वाले भू राजस्व का कुछ प्रतिशत।
(२) व्यवसायों पर कर।
(३) स्थायी सम्पत्ति लेने देने पर कर।
(४) स्थानीय सपत्ति से आने वाला लाभ व किराया।
(५) यात्रा कर, मनोरंजन कर।
(६) मेले व बाजारों से वसूल होने वाला कर।
(७) मोटर गाडियों पर लगे कर का कुछ भाग।
(८) स्वेच्छित जन सहायता।
(९) सरकारी सहायता।

आर्थिक रूप से पिछड़े हुए क्षेत्रों को ध्यान में रखकर राज्य सरकार समितियों को शर्तों पर व बिना शर्तों के आर्थिक सहायता प्रदान करे।

ब्लाक के क्षेत्र में केन्द्रीय और राज्य कोष का व्यय पचायत समिति द्वारा प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में हो परन्तु समिति की सिफारिश पर सीधे ही किसी संस्था को भी व्यय का अधिकार दिया जा सकता है।

समिति के प्राविधिक अधिकारी जिला अधिकारी के प्राविधिक नियन्त्रण में रहें लेकिन उन पर प्रशासनिक नियन्त्रण समिति के प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी का हो।

समिति का वार्षिक बजट जिला परिषद् द्वारा मान्य हो।

समिति पर कुछ नियन्त्रण आवश्यक रूप से सरकार का हो यथा जन हित के मामलों में पचायत समिति में निहित शक्ति पर नियन्त्रण।

पचायत का सविधान निर्वाचन पर आधारित हो जिनमें दो महिला सदस्याओं तथा अनुसूचित व जन जातियों के एक एक सदस्य की नियुक्ति की व्यवस्था हो। इनके अलावा किसी वर्ग को विशेष प्रतिनिधित्व प्रदान नहीं किया जावे।

पचायत की आय के मुख्य स्रोत आवास कर, बाजार व सवारी कर ऑक्ट्राय या टरमीनल कर, जल व विद्युत की दरें पशुओं का पानी पिलाने के तालाबों के कर, पचायत समिति द्वारा दिया गया अनुदान तथा पशुओं की बिक्री कर।

ग्राम प चायतो का उपभोग भू राजस्व संग्रह करने के लिये किया जाये जिन्हे राजस्व का कुछ हिस्सा कमीशन के तौर पर दिया जाये। उपरोक्त काय के लिये उन्हीं प चायतो को उपयुक्त माना जाय जो प्रशासन व विकास क्षेत्र मे कुशलता प्राप्त कर चुकी हो और उन्हे ही यह अधिकार प्रदान किया जाये।

ग्राम प चायतो प चायत समिति स भू राजस्व का निर्धारित भाग प्राप्त करें।

ग्राम प चायतो द्वारा स्थानीय रूप से जुटाये गये आय के साधन जो अब निगरानी व सुरक्षा कर्मचारियों पर खर्च किये गये हैं व भविष्य म विकास कार्यो पर व्यय किये जायें।

जो व्यक्ति एक वर्ष तक कर अदा न करे उसे नियमानुसार आगामी प चायत के चुनावो म भाग लेन से वंचित रखा जाये और यदि ऐसा व्यक्ति प चायत का सदस्य हो जो ६ महिने तक कर अदा न करे उस भी उपरोक्त नियमानुसार उतना ही जिम्मेवार ठहराया जाये और उपरोक्त अधिकार से वंचित किया जाय।

ग्राम प चायत का बजट प चायत समिति की जाच व मान्यता पर आधारित होगा। समिति का प्रमुख अधिकारी ग्राम प चायत पर उपरोक्त विषयक उन सभी अधिकारो का उपभोग करेगा जो प चायत समिति पर जिलाधीश करेगा। ग्राम पचायत के अधिकार क्षेत्र में केवल राज्य सरकार ही जिला परिषद् की सिफारिशों के आधार पर हस्तक्षेप कर सकेगी।

ग्राम पचायतो के और कार्यों के साथ अनिवार्य काय होंगे, जल वितरण सफाई, रोशनी, सड़को की समार भूमि प्रबंध, आकड़ो व रेकार्ड का संग्रह व सामूहिक प्रबन्ध तथा पिछड़े वर्गो के कल्याण आदि। इसके साथ ही ग्राम प चायत, प चायत समिति द्वारा निर्मित किसी योजना को कार्यान्वित करने मे उसका प्रतिनिधित्व करेगी।

प चायत का न्याय क्षेत्र एक ग्राम सेवक के क्षेत्र से अधिक बड़ा भी हो सकता है जिसम न्याय कार्य के लिये ग्राम प चायतो द्वारा प्रस्तावित सूची मे स सब डिवीजनल अधिकारी या जिलाधीश ऐसे लोगो को चुन जो प चायत का न्याय क्षेत्र सभाल सकते हैं।

प चायत समितियो के कार्यों म समन्वय स्थापित करने के लिये एक जिला परिषद् का गठन किया जाये जिसके सदस्य समितिया के अध्यक्ष तथा उस क्षेत्र के विधान सभाई व संसद सदस्य और जिला स्तर के अधिकारी हो। इस जिला परिषद का चेयरमेन वहा का कलक्टर हो तथा उसके अधीन कोई भी अधिकारी उसका मंत्री हो।

यदि हमे प्रजातान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के अनुभव के अच्छे से अच्छा परिणाम निकालने है तो यह आवश्यक है कि हमारी इस क्रमबद्ध योजना की तीनो उपरोक्त समितियो का यथा ग्राम प चायत, प चायत समिति तथा जिला परिषद का गठन किया जाये साथ ही क्रमश पूरे जिले में यह योजना कार्यान्वित की जानी चाहिये।

स्थानीय संस्थाओ के लिये निर्वाचित या निर्वाचित होने के उम्मीदवार लोगों के लिये प्रगाढ़ निष्ठ प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि इस मूल भावना का किसी भी मात्रा में उन्हे ज्ञान प्राप्त हो सके जो अधिक स अधिक जटिल होता जा रहा है।

धारा—तीन

कार्य-पद्धति आयोजन-कार्यक्रम

आयोजना और सामुदायिक विकास कार्यक्रम को क्रियान्वित करने में ऐसे समय जब कि राज्यों ने विस्तृत लक्ष्य निर्धारित कर रखे हैं सुरक्षा व आर्थिक सतुलन तथा प्राविधिक व निरक्षरता को सम्भव सहायता प्रदान की जानी चाहिए और यह काम जनता के प्रतिनिधियों को सौंपा जाना चाहिए जो इसको विस्तारपूर्वक विकास कर्मचारियों की सहायता से पूरा करें।

बजट का विस्तार पूर्वक विभाजन केन्द्र द्वारा निर्धारित हो। इस योजना के अनुसार हर राज्य अपने योजनाबद्ध बजट को केन्द्रीय मन्त्रियों से विचार विमर्श के बाद निश्चित करे।

जिला व ब्लाक स्तर के स्थानीय प्रतिनिधि संगठनों को निर्धारित कार्य के पहलुओं को प्राथमिक तालों तथा कुछ निर्देशक व निषेधात्मक सिद्धान्तों के आधार पर कार्यरूप में परिणित करना चाहिए।

धारा—चार

केन्द्रीय व राज्य-सरकार में परस्पर समन्वय

केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारों के अधिकार विषयक कार्यों में आर्थिक, उच्च स्तरीय खोज कार्य व उच्च प्रशिक्षण सम्बन्धी सहायताएँ प्रदान करे तथा इस प्रकार की अन्तर्राज्यीय संस्थाओं पर नियन्त्रण रखे क्योंकि राज्य सरकारें स्वयं ऐसा नहीं कर सकती हैं। इसके साथ ही राज्य सरकारों से विचार विमर्श कर एक देश व्यापी विभिन्न राष्ट्रीय पंचवर्षीय योजनाएँ क्रियान्वित की जानी चाहिए।

जहां केन्द्रीय सरकार को कोई देश-व्यापी नई योजना प्रारम्भ करनी हो वह राज्य सरकारों को विस्तृत रूप से सलाह दे और उन्हें उसे कार्यरूप में परिणित करने दे यदि वे चाहें तो कुछ आवश्यक परिवर्तनों के साथ भी।

धारा—पांच

प्रशासनिक ढांचा-राज्य के अन्दर समन्वयता

ग्रामसेवकों में कार्य-क्षेत्र को कम किया जाये तथा हर ब्लाक में २० ग्राम सेवक और बढ़ाये जायें।

धारा—सात

महिलाओं व बच्चों के बीच कार्य

महिला-कल्याण के कार्य व नीति देशव्यापी स्तर पर एक ही दृष्टिकोण से निर्धारित की जानी चाहिए। इस कार्य की पूर्ण जिम्मेदारी राज्य सलाहकार केन्द्रीय व वित्तीय एजेन्सी की हो।

विभिन्न क्षेत्रों के लिये धुआं रहित उपयोगी चूल्हों का निर्माण किया जाये, न कि सारे देश के लिये एक ही प्रकार के चूल्हे हों?

ग्राम सेविकाग्रा के प्रशिक्षण कन्द्रा में सफाई के सैद्धांतिक नान पर अधिक ध्यान न दिया जाकर रोजमरा की दिनचर्या म तत्सम्बन्धी व्यवहारिक नान पर अधिक जोर दिया जाये।

ग्राम महिला कार्यकर्त्रियो को ग्रामीण महिलाग्रा के प्रति दिन के काय जसे पशु पालन, रसोई उद्यान व मुर्गी पालन पर अधिक ध्यान देना चाहिए।

ग्रामीण व अध ग्रामीण क्षेत्रा के दसवीं कक्षा पास अध्यापका मे से ग्राम सेवका की भरती की जानी चाहिए।

महिलाओं व बच्चो मे कल्याणकारी कायक्रम को क्रियान्वित करने वाले कमचारी स्थायी रूप से नियुक्त किये जायें।

धारा आठ

जातीय क्षेत्रों में कार्य

अय क्षेत्रा के ब्लाको की भाति जातीय क्षेत्रा की भाति जातीय क्षेत्रो म विकास कार्यों के लिये ६ वष के लिये बजट बनाया जाये।

ब्लाक का बजट बनाने से पूव उस क्षेत्र का सर्वेक्षण व गहन अध्ययन किया जाना चाहिये।

जातियो के बारे मे जानकारी व सहानुभूति रखने वाले स्थानीय लोगो को जातीय क्षेत्रों में काम करने के लिये नियुक्त किया जाना चाहिए।

इस काय के लिये छाटे गये व्यक्तियो को इन क्षेत्रो की स्थानीय भाषा, रीति रिवाज तथा वहा के निवासियो के जीवन सम्बन्धी नान प्राप्त होना चाहिए।

सरकार द्वारा ऐसे क्षेत्रा के लिए कृषि ऋण देने की दिशा मे कदम उठाने चाहिए।

इन क्षेत्रो म शिक्षा की मूल पद्धति प्रारम्भ की जानी चाहिए ताकि शिक्षतो व अशिक्षिता के बीच की खाई दिनो दिन घटती जाये।

धारा ग्यारह

कृषि कार्य

अधिक उत्पादन के निर्धारित लक्ष्य ब्लाक व ग्राम सेवक क्षेत्रो के सम्मुख होने चाहिए।

फसलों के लिए सिंचाई की प्रगति की जानी चाहिए।

ग्राम सेवको को नये व विकसित प्रदशन करके कम से कम हर ग्राम म ५ प्रदशन करने चाहियें जो गावो म प्रचलित तरीको से भिन्न हो।

जिला कृषि अधिकारी कृषि के नये उपकरणो का नान प्रदान करने के निमित्त ग्राम सेवको के लिए अल्प कालीन प्रशिक्षण की व्यवस्था करें।

पंचायतों व सहकारी संस्थाओं को कृषि के उपकरणों की खरीद, बेचान व किराये पर देने आदि के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

फलों व सब्जी के अधिक उत्पादन की दिशा में अधिक प्रयत्न करने की आवश्यकता है।

फलों को सुरक्षित रखने के वर्तमान तरीके अधिक आसान व सस्ते बनाये जाने चाहिये।

सिंचाई के लिए बिजली वितरण की दरें औद्योगिक बिजली वितरण की दरों से अधिक नहीं होनी चाहिए।

ऐसे क्षेत्र जहां धान की पैदावार होती है उनका विकास होना चाहिए।

कस्बों व शहरों में दुग्ध सहकारी समितियां सही रूपरेखा के आधार पर बनाई जायें।

पशुओं की नस्ल के विकास के लिए प्राविधिक निर्देशनों की आवश्यकता है।

मछली उद्योग के लिए अधिक आर्थिक सहायता व प्रशासन द्वारा अधिक ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है मुख्यतौर पर सामुदायिक विकास क्षेत्रों में।

धारा बारह

सहकार

एक व एक से अधिक गांवों के बीच में बहु उद्देश्य सहकारी समितियों का निर्माण हो जो स्थानीय या पंचायतों की सहायता से सही आधारों पर कार्य करें।

आवश्यकता के समय किसान को ऋण देने की व्यवस्था के साथ ही उसे ऐसी सहूलियतें प्रदान की जायें कि वह फसल के समय ऋण की अदायगी कर सके।

सहकारी कृषि पद्धति को पहले अपने प्रथम अनुभवों से गुजरने दिया जाना चाहिए ताकि तुरन्त ही चुने हुए सामुदायिक विकास योजना ब्लाक के हर जिले में एक सहकारी कृषि क्षेत्र का निर्माण किया जाये।

हाईस्कूलों में पाठ्यक्रम की पुस्तकें व स्टेशनरी के वितरण के लिए विद्यार्थियों द्वारा सहकारी समितियों का निर्माण किया जाना चाहिये।

धारा तेरह

ग्रामोद्योग

कुटीर, ग्राम व लघु उद्योग धंधों में परस्पर समन्वय स्थापित किया जाय ताकि वे एक दूसरे के पोषक बन सकें

ग्रामीण क्षेत्रों में तत्सम्बन्धी प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किये जायें।

जिला क्षेत्र या उसके एक भाग के ग्रामोद्योगों के लिये प्राविधिक सलाहकार हों जिन पर उस उद्योग का विकास निर्भर करे।

हर ब्लोक में प्रमुख आर्टिजनों को एसोसियेन्स बनाई जायें।

धारा चौदह

स्वास्थ्य

महिला स्वास्थ्य निरिक्षिकाओं के प्रशिक्षण केन्द्रों में परिवार नियोजन शिक्षा का अध्ययन भी शामिल किया जाये।

एवं प्रशिक्षण केन्द्रों की संख्या में वृद्धि की जायें।

हर राज्य सरकार इस बात का विश्वास दिलाये कि नजफगढ़, सिंगर पूना में स्थित प्रशिक्षण केन्द्रों में हर राज्य के लिये निर्धारित स्थानों के लिये उम्मीदवार भजती रहे।

इन तीनों प्रशिक्षण केन्द्रों में दिये जानेवाले प्रशिक्षण का कोर्स एक सा हो।

जो लोग इन केन्द्रों में शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं उन्हें विकास ब्लाक में नियुक्त किया जाय।

राज्य सरकारों को इन स्वास्थ्य केन्द्रों में सम्भावित प्रशिक्षण की जाच करनी चाहिए तथा मलेरिया, राज्य क्षमा, कुष्ट कोढ़ तथा चम रोगों आदि के प्रशिक्षण में लिये विशेषज्ञों की नियुक्तियाँ की जाय।

ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित आवासों में राजनदान आदि मुक्त उनके विकास की ओर अधिक ध्यान दिया जाय।

सामुदायिक पशु शालाओं का गांव के एक छोर पर निर्माण किया जाये ताकि पशु ग्रामीण जन सख्या के बाहर रह सकें।

धारा पन्द्रह

प्राथमिक शिक्षा

शिक्षा प्रशासन इकाईयों को ब्लोक के आधार पर व्यवस्थित किया जाये।

हर ब्लाक में ब्लोक सलाहकार समिति हो जिसकी व्यवस्था व स्कूलों के काय का उत्तरदायित्व पंचायत समिति पर हो।

ब्लाक क्षेत्रों के लिये आवश्यक कोष तथा कुशल कार्यकर्ताओं की व्यवस्था हो जिसमें निःशुल्क व अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति की जा सके।

महिला अध्यापिकाओं के लिए निवासस्थान की व्यवस्था की जानी चाहिये।

पंचायत व सहकारी संस्थाओं को कृषि के उपकरणों की खरीद, बेचान व किराये पर देने आदि के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

फलों व सब्जी के अधिक उत्पादन की दिशा मे अधिक प्रयत्न करने की आवश्यकता है।

फलो को सुरक्षित रखने के वर्तमान तरीके अधिक आसान व सस्ते बनाये जाने चाहिये।

सिंचाई के लिए बिजली वितरण की दरें औद्योगिक बिजली वितरण की दरो से अधिक नहीं होनी चाहिए।

ऐसे क्षेत्र जहा धान की पैदावार होती हैं उनका विकास होना चाहिए।

कस्बों व शहरो म दुग्ध सहकारी समितिया सही रूपरेखा के आधार पर बनाई जायें।

भेड़ो को नस्ल के विकास के लिए प्राविधिक निर्देशनो की आवश्यकता है।

मछली उद्योग के लिए अधिक आर्थिक सहायता व प्रशासन द्वारा अधिक ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है मुख्यतौर पर सामुदायिक विकास क्षेत्रों मे।

धारा बारह

सहकार

एक व एक से अधिक गांवो के बीच म बहु उद्देश्य सहकारी समितियो का निर्माण हो जो स्थानीय या पचायतो की सहायता से सही आधारो पर काय करें।

आवश्यकता के समय किसान को ऋण देने की व्यवस्था के साथ ही उसे ऐसी सहूलियतें प्रदान की जायें कि वह फसल के समय ऋण की अदायगी कर सके।

सहकारी कृषि पद्धति को पहल अपने प्रथम अनुभवो से गुजरने दिया जाना चाहिए ताकि तुरन्त ही चुने हुए सामुदायिक विकास योजना ब्लाक के हर जिले में एक सहकारी कृषि क्षेत्र का निर्माण किया जाये।

हाइस्कूलो मे पाठ्यक्रम की पुस्तकें व स्टेशनरी के वितरण के लिए विद्यार्थियो द्वारा सहकारी समितियों का निर्माण किया जाना चाहिये।

धारा तेरह

ग्रामोद्योग

कुटीर, ग्राम व लघु उद्योग धंधों में परस्पर समन्वय स्थापित किया जाये ताकि वे एक दूसरे के पोषक बन सकें,

ग्रामोद्योग क्षेत्रों में तत्सम्बन्धी प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किये जायें।

जिला क्षेत्र या उसके एक भाग के ग्रामोद्योगो के लिये प्राविधिक सलाहकार हों जिन पर उस उद्योग का विकास निर्भर करे।

हर ब्लोक में प्रमुख आर्टिजनो की एसोसियन्स बनाई जाये।

धारा चौदह

स्वास्थ्य

महिला स्वास्थ्य निरिक्षिकाओ के प्रशिक्षण केन्द्रो में परिवार नियोजन शिक्षा का अध्ययन भी शामिल किया जाये।

इस प्रशिक्षण केन्द्रो की सख्या मे वृद्धि की जाये।

हर राज्य सरकार इस बात का विश्वास दिलाय कि नजफगढ, सिगर पूना मली स्थित प्रशिक्षण केन्द्रो मे हर राज्य के लिये निर्धारित स्थानो के लिये उम्मीदवार भेजती रहे।

इन तीनो प्रशिक्षण केन्द्रो म दिये जानेवाले प्रशिक्षण का कोस एक सा हो।

जो लोग इन केन्द्रो मे शिक्षा प्राप्त कर चुके हो उन्हे विकास ब्लाक म नियुक्त किया जाये।

राज्य सरकारों को इन स्वास्थ्य केन्द्रो में सभावित प्रशिक्षण की जाच करनी चाहिए तथा मलेरिया, राज्य क्षमा, कुष्ठ कोढ तथा चम रोगो आदि के प्रशिक्षण के लिये विशेषज्ञो की नियुक्तियां की जाये।

ग्रामीण क्षेत्रो में स्थित आवासो में रोशनदान आदि युक्त उनके विकास की ओर अधिक ध्यान दिया जाय।

सामुदायिक पशु शालाओ का ग्राम के एक छोर पर निर्माण किया जाये ताकि पशु ग्रामीण जनसख्या के बाहर रह सकें।

धारा पन्द्रह

प्राथमिक शिक्षा

शिक्षा प्रशासन इकाईया का ब्लोक के आधार पर व्यवस्थित किया जाये।

हर ब्लाक मे ब्लोक सलाहकार समिति हो जिसकी व्यवस्था व स्कूलो के काय का उत्तरदायित्व पचायत समिति पर हो।

ब्लोक क्षेत्रो के लिये आवश्यक कोष तथा कुशल कायकर्ताओ की व्यवस्था हो जिसमें नि शुल्क व अनिवाय प्राथमिक शिक्षा के निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति की जा सके।

महिला अध्यापिकाओं के लिए निवासस्थान की व्यवस्था की जानी चाहिये।

ग्राम सेवक व ग्राम सेविकाओं का यह कर्तव्य होना चाहिये कि वे उन क्षेत्रों में जहां प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य नहीं है ग्रामीणों को उनके बच्चे पाठशालाओं मे भेजने की सलाह दें।

राज्य सरकारों को ग्रामीण क्षेत्रों में बेसिक शिक्षा प्रारम्भ करने सम्बन्धी नीति को स्पष्ट करना चाहिए।

राज्य सरकारो को चाहिये कि वे जन-साधारण को इस बारे मे जानकारी दें कि बेसिक स्कूल अन्य प्रकार के स्कूलो से अधिक श्रेष्ठ व उपयोगी होते हैं।

बेसिक पाठशालाओं के लिए शिक्षकों व शिक्षण सामग्री की व्यवस्था की जाये।

जिन राज्यो मे बेसिक अध्यापक के प्रशिक्षण का समय एक साल निश्चित किया गया हो वहा उनकी अवधि २ वर्ष की जानी चाहिये।

धारा सोलह

समाज-शिक्षा

समाज शिक्षा का उद्देश्य लोगों को नागरिकता सम्बन्धी ज्ञान प्रदान करना प्रजा तन्त्र की कार्य पद्धति से अवगत करना, (ब) उन्हे पढ़ना व लिखना सिखाना (स) उनकी हर प्रवृत्तियों का सही दिशा मे विकास करना (द) तथा उनमे सहिष्णुता की भावना का सचार करना है।

समाज शिक्षा सगठन (एस ई ओ) की सेवायें इस काम मे ली जानी चाहिये कि वह लोगों को सामाजिक बुराईयों का ज्ञान करावे तथा उनके बारे में जनमत तयार करे।

एस ई ओ का पथ निर्देशन करने के लिए जिला या राज्य स्तर पर विशेषज्ञ होने चाहिये तथा शिक्षा विभाग मे जोइन्टडायरेक्टर समाज शिक्षा के अधीन अलग विभाग खोला जाना चाहिये।

सोशल एजूकेशन आरगेनाइजर तथा ग्राम सेवक के बीच परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध हो तथा वे समाज शिक्षा की सब प्रकार की गतिविधियो मे पूर्ण दिलचस्पी लें।

ग्राम अध्यापक इस कार्य मे भाग लेने के लिये एस० ई० ओ० द्वारा काम मे लिये जा सकते हैं।

समाज शिक्षा के प्रसार मे प्रयत्नशील ग्राम नेताओं की सूची तयार की जानी चाहिये।

एस० ई० ओ० समठ नेताओं को सामुदायिक जीवन को बेहतर बनाने की दिशा मे सहायता प्रदान करे।

नेता और नेतागीरी जसी प्रचलित धारणाओं को समाप्त किया जाये।

सहकारी समितियों के सदस्यों का सहयोग प्राप्त कर एस० ई० ओ० प्रगति शील ग्रामीणों को ऐसी समितियों के सदस्य बनने मे सहायता प्रदान करे।

विकास मेले, शिविर, प्रशिक्षण कैम्प आदि के आयोजन किये जायें जो ग्रामीणों के सम्मिलित रूप से भाग लेने की दिशा में उपयोगी हैं।

प्रौढ़ शिक्षा के लिये उपयोगी पुस्तकें तैयार की जायें और शिक्षा देने में सही तरीके ग्राम अध्यापकों को सिखाये जायें।

सभी ब्लाकों म प्रौढ शिक्षित लोगों के सर्वेक्षण के बाद स्त्री व पुरुषों के लिये शिक्षा के काय क्रम प्रारम्भ किये जायें।

पुस्तकालयों उपयोगी सिने चित्रों आदि का व्यवस्था राज्य सरकार द्वारा की जाय। एस० इ० ग्रो० के पास एक प्रोजेक्टर (सिनेमा की मशीन) होनी चाहिये तथा फिल्मों को नियमित भजते रहना चाहिये ताकि गाव वालों को दिखा सके। साथ ही ग्रामीणों के लिये रेडियो की व्यवस्था की जाये। ग्राम नेताओं से वार्तायें प्रसारित करने का कहा जाना चाहिए तथा वार्तायें व ग्राम शिविरों आदि में हुए विचार विमर्श के रेकार्ड भरे जाने चाहिए।

धारा सत्रह

कुछ विशेष कार्यक्रम--सर्वोदय सघन क्षेत्र व ग्राम दान

सर्वोदय क्षेत्र समिति केवल मात्र सलाहकार समिति न होकर उसे पूर्ण अधिकार होने चाहिये ताकि सचालक वधानिक चेयरमेन हो सके।

सर्वोदय ब्लोक का क्षेत्र सम्पूर्ण एन० इ० एस० ब्लोक पर बढा दिया जाये।

सर्वोदय योजना के कायक्रमों के अलावा सचालक को वे सभी काय अपने हाथों म लेने चाहिए जो एन इ० एस० ब्लोक के अन्तर्गत आते हैं।

पचायत समिति व सर्वोदय के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध निश्चित किये जाने चाहिये तथा विकास काय क्रम को नियन्त्रित करने के लिये कुछ पारस्परिक समझौते तय हों।

सघन क्षेत्र समिति के काय कर्ता ग्रामोद्योग काय क्रम को अपने हाथ मे लें तथा अपनी शक्ति का कुटीर ग्रामोद्योगों के विकास की दशा म लगायें वे ब्लोक के सभी विकास कायक्रमों को हाथ म लेकर उन आधारभूत रेखाओं पर काम कर जो सर्वोदय के कायकर्ताओं के सामने प्रस्तुत की गई है।

सघन क्षेत्र कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण की सुविधाएँ प्राप्त होनी चाहियें।

सामुदायिक विकास कायक्रम ग्रामदान आन्दोलन से मिलाजुला रहना चाहिए। ग्रामदान वाले क्षेत्र नये ब्लोक के लिये चुने हुए क्षेत्रों से प्राथमिकता प्राप्त करें।

धारा अठारह

वित्त कार्य दक्षता तथा काय कुशलता

ब्लोक स्तर पर किया गया व्यवस्थित वित्त ब्लोक के बाहर खर्च नहीं किया जाना चाहिए जैसे राज्य के मुख्य कार्यालयों के कर्मचारियों पर।

ब्लोक से बहार की किसी भी योजना पर ब्लोक कोष में से धन खर्च नहीं किया जाना चाहिए जिस पर आवश्यकता से अधिक धन खर्च हो जब तक कि ऐसा करना बिल्कुल अनिवार्य ही न हो ।

धन सहयोग जो किसी भी कार्य के लिये प्राप्त हुआ हो धीरे धीरे सामुदायिक विकास कार्यक्रम की प्रगति के साथ-साथ अधिक प्राप्त किया जाये ।

हर ब्लोक में ५० प्रतिशत उत्पादन की दिशा में खर्च किया जाये तथा ५० प्रतिशत सुविधाओं पर । यह व्यय सीमा एक प्रस्ताव के रूप में है जो स्थानीय समस्याओं व परिस्थितियों के अनुसार राज्य द्वारा बदली जा सकती है ।



लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की अमरज्योति

—श्री जवाहरलाल नेहरू

[२ अक्टूबर १९५९ को नागोर म राजस्थान की पचायती राज योजना का समारम्भ करते हुए भारत के प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू के भाषण के कुछ महत्वपूर्ण अश]

आज आपको मालूम है कि हमारे भारत म; और म तो कहूँगा कि सारी दुनिया म एक शुभ दिन है महात्माजी का जन्म दिन है। आज से ९८ वर्ष हुए, दो कम सौ वर्ष हुए जब गाधीजी का जन्म भारत भूमि म हुआ था। ठीक है कि हम उस दिन को याद करें क्योकि हजारो वर्षों के इतिहास मे महापुरुष आए है, कई सौ वर्ष हजार वर्ष बाद बड़े-बड़े पुरुष अवतार हुये है यह हम कहा जाता है। अपने जीवन मे भी हमने एक बडे महापुरुष को देखा उसके साथ कुछ काम किया, कुछ सीखा और भारत भर को उसने उठाया और स्वतन्त्र किया और उससे अधिक यह कि हम सीधे रास्ते पर च हान पड़ पाया, गलत रास्ते पर नहीं लडाई झगड के रास्ते पर नहीं वीरता के रास्ते पर। लेकिन वीरता कैसी, अहिंसा की, शांति की वीरता, कभी सिर नहीं किसी के सामने झुकायें कमर नहीं झुकायें डर से सत्य का पालन करें और देश की सेवा करें वीरता से और प्रेम से और इस तरह से उन्होंने दुनिया के इतिहास म पहली बार यह दिखाया कि शांति के रास्ते पर चल कर प्रेम और एकता से कैसे एक देश, महान देश अपने को आजाद कर सकता है और एक बड साम्राज्य का मुकाबला करके आजाद कर सकता है।

× × × ×

आपने इस काय को शुरू किया। जनतन्त्र का यहां फैलाया पचायती राज्य जो कुछ आप कहे। और मन सोचा कि महात्माजी को कितनी प्रसन्नता होती अगर इस समय होते और देखते कि महा राजस्थान मे जो कि भारत का एक माने म हृदय है भारत का नक्शा भी देखो तब भी एक उसका दिल सा है लोकतन्त्र चल रहा है। राजस्थान के लोग एक एक जिले से, एक एक गाव से आये और यह निश्चय किया कि इस भार को लोकतन्त्र को वो उठायें और यहा की सरकार न कानून बनाया उसने जनता के

ऊपर ये जिम्मेदारी सौंप दी। बड़ा काम है। ऐतिहासिक काम है। तो कितनी उन्हें प्रसन्नता होती। इस लिये और भी यह उचित है और मुनासिब है कि आज, महात्माजी की जयन्ती के दिन हम और आप मिलें और यह महान ऐतिहासिक काम शुरू करें।

× × × ×

स्वराज्य आने के समय एक और बड़ी भारी बात थी कि देश में विशेषकर यहां राजस्थान में, मध्यभारत में और-और जगह भी बहुत सारे रजवाड़े थे। अब अगर देश के बहुत सारे अलग अलग टुकड़े ऐसे हों अलग अलग कायदे कानून हों, तो इस तरह से देश की शक्ति नहीं बनती। तो पहला काम यह हो गया कि हम रजवाड़ों का जो यहां एक ढंग था उसका अन्त करें। यह एक पुराना ढंग था पुराने जमाने में एक जमाने में यह भी अच्छा रहा। लेकिन जैसे संसार का चक्र चलता है तो नये नये रूप धारण करता है समाज का संगठन नये नये रूप से होता है। समाज बढ़ता है, आपका एक बच्चा बढ़ता है। आप एक बच्चे को सुन्दर कपड़े पहना दें तो उन कपड़ों में अच्छा लगता है बच्चा लेकिन साल दो साल बाद बच्चा बड़ा हो जाता है कस उसके कपड़े उसको रोकते हैं और अगर आप समझ से बुद्धि से काम लें तो आप उसके वस्त्र उसके कपड़े, बदल दें बड़े कपड़े पहनायें, ताकि वह बढ़ सके। इसी तरह समाज बढ़ता है, समय के मुताबिक उसका संगठन भी बदलता जाता है। उसका रूप बदल जाता है। बड़े बड़े सिद्धान्त नहीं बदल जाते हैं। लेकिन ये ऊपर की बातें हैं। तो रजवाड़ा का जमाना था ठीक है कई सौ बरस हुए। वह भी एक उचित जमाना था और महापुरुष हुए यहां के राजा महाराजा इसमें कोई संदेह नहीं वह अच्छा था हमें गर्व है। उन लोगों का नाम लेकर हम खुशी होती है। लेकिन वो जमाना खतम हुआ। वह चीज जो पहले दो तीन सौ वर्ष अच्छी रही वो आजकल के जमाने में ठीक नहीं रही।

× × × ×

दूसरी तरफ आप देखें राजनीति की तरफ। यहां स्वराज्य आया। हमने कहा कि जनता का राज्य है और सब लोगों को वोट मिला। वोट करो भाई दिल्ली की विधान सभा के लिए लोक सभा के लिये जयपुर की विधान सभा के लिये। अपने अपने प्रतिनिधि भेजो, चुनकर। ठीक है, एक तरह से जनता का राज्य हुआ। लेकिन फिर भी इतना राज्य हुआ कि तुम अपने प्रतिनिधि चुनो किन्तु तुम्हारे हाथ में रोज का अधिकार नहीं है। बड़े बड़े अफसर हैं कभी कभी आपसे सलाह कर लें तो ठीक है। हम यह फिर रही कि भारत तभी उठेगा जब कि यहां लाखों गांव उठेंगे क्योंकि भारत में सौ आदमियों में ८० आपके गांवों में रहते हैं। जब गांव उठेंगे तो भारत असल में मजबूत हो जायेगा तब उसको कोई रोक नहीं सकेगा। इसलिये हमने विकास योजना शुरू की। कम्युनिटी डेवेलपमेंट ब्लाक बनाये। सात वर्ष हुये इसको और भारत के करीब ३ लाख गांवों में यह फैला है, इससे भी अधिक। कहीं अच्छा काम हुआ, कहीं नहीं। सब मिला के अच्छा ही हुआ क्योंकि काम बहुत बड़ा है। याद रखो लाखों गांवों को उठाना कोई छोटा काम नहीं है। करोड़ों आदमी उठें। लेकिन फिर भी जितना हम चाहते थे उतना नहीं हुआ। क्या नहीं हुआ? हमने देखा यह काम ऐसा नहीं है कि खाली ऊपर के अफसरों के करने से पक्की तौर से हो सके, चाहे वे कितने ही भले अफसर हों। अफसर की जरूरत है क्योंकि सीखा हुआ आदमी है। वह बता सकता है। लेकिन यह काम ऊपर का नहीं है। यह काम तभी चलेगा जब जनता के हाथ में बागडोर हो। अब लोगों ने कहा भाई, जनता के हाथ में बागडोर आप दो तो जाने गलत चले सही चले और काम खराब कर दे और उस पर भरोसा कैसे हो? यह बात गलत है। क्योंकि कोई आदमी बगैर काम किये सीखता

नहीं है, तो फिर हमारे सामने यह नई बात हो गई, नई नहीं यह नया कदम हो गया कि अब ऐसा प्रबन्ध करें कि अधिक से अधिक जनता के हाथ में काम करने की शक्ति लायें। खाली देखने की नहीं, सलाह देने की नहीं। और इस सवाल पर बहुत विचार हुआ। तो हमारी कमेटियां हैं और कांग्रेस महासभा है, उसके भी बड़े-बड़े प्रस्ताव हुये और कुछ बातें उन्होंने निश्चित कीं। उन्होंने निश्चय किया कि हर गांव में एक पंचायत होनी चाहिये और पंचायत को अधिकार अधिक मिलने चाहिये। दूसरे, सहकारी संघ होने चाहिये और उसको भी अधिकार मिलने चाहिये।

× × × ×

अब पंचायत को समझो, वह इन्तजाम करने की है—राजनीति इन्तजाम, और सहकारी संघ आर्थिक प्रबन्ध करता है—काम वगैरह का प्रबन्ध। सहकारी संघ के माने क्या हैं? सहकारी संघ के मामूली माने हैं? कि लोग जरा मिल-जुलकर काम करें, एक दूसरे की सहायता करें। मोटी बात है कि मिलजुल कर काम करने से शक्ति आती है। यानी खाली बड़े बड़े अफसरों के ऊपर काम नहीं पड़े बल्कि काम करने का बोझा जनता पर पड़े और एक दफा हमारी ४० करोड़ जनता पर पड़े तब कोई बड़ी शक्ति उसकी होती है। कोई अफसर दे सकता है वह शक्ति? हमारी बात ठीक है कि जनता को साथ लेकर चलना है—सलाहकार के रूप में भी। तो यह हमने निश्चय किया और जोर हमने दिया इन बातों पर पंचायत के ऊपर सहकारी संघ पर। सहकारी संघ के माने क्या हैं? बहुत सारे ढंग से होते हैं अब कोई जरूरत नहीं कि हम एक ढंग का ही भारत में रखें। जैसा जहां ठीक बने वैसा वहां रखें। लेकिन मोटी तौर पर सहकारी संघ के माने अब तक समझे जाते थे—जहां रुपया कर्जा दिया जाय किसानों को वह तो आवश्यक बात है होना चाहिए, लेकिन वो काफी नहीं है। हम चाहते हैं कि सहकारी संघ के द्वारा और बहुत सारे काम हों आपके बेचने के आपके खरीदने के। आपको उर्वरक, बीज चाहिये, आपको खाद चाहिये आप जो अन्न पैदा करें उसको बेचने का प्रबन्ध होना चाहिये।

उसमें आपकी जमीन अलग रहती है। आपही की जमीन है जमीन कभी नहीं मिटती। आपही की सम्पत्ति है और आप ही की जमीन का हिस्सा है। लेकिन इन सब कामों के करने से जो रुपया और लोगों की जेब में जाता था, वो आपके ही पास रहता है और इससे आप उन्नति कर सकते हैं, तरक्की कर सकते हैं। दुनिया में करीब-करीब सब देशों में सहकारी संघ से किसान इत्यादि लोग काम करते हैं और इससे बहुतों का लाभ होता है। उसमें एक और बात भी आ जाती है कि वे अपने छोटे छोटे कारखाने बनाते हैं काम करने के लिये और खेती के अलावा। वो विद्यालय बनाते हैं वो अस्पताल बनाते हैं, वो दवाखाना बनाते हैं। सबों का लाभ होता है। उनके बच्चों को लाभ होता है। काम-काज मिलता है। रोजगार अधिक मिलने लगता है। खेती से अधिक अन्न होता है। सबों का लाभ होता है। देश का भी होता है। यह तो मोटी बात है। हरेक को करनी है। लेकिन इसमें एक बात आपको याद रखनी है कि सहकारी संघ अपने आप नहीं बन जाता। १०० आदमी आयें, हम सहकारी संघ बनायें, बना भी लें। उसमें सोचना पड़ता है कैसे करें। किन्तु सीखा हुआ आदमी नहीं है तो आप काम शुरू करें काम खराब हो जाय तो फिर आप परेशान हों और लोग कहेंगे देखो ये काम करना भी नहीं जानते इसलिए हमने प्रबन्ध किया कि लोग सिखाये जायें। आपके पंच ग्राम सेवक वगैरह यह कुछ सीखें और भी दो ओर लोग यह सीखें ताकि हर सहकारी संघ में सीखे हुये लोग हों। तो मामूली सहकारी संघ जो हम रख रहे हैं इसमें हर एक की अलग-अलग जमीनें रहेंगी, अलग-अलग खेती रहेगी।

एक और ढंग भी इसका है जिस पर आप विचार करें। बात नई नहीं है। बाद की बात है कि जहां थोड़ी थोड़ी जमीन लोगों के पास होती है एक एकड़ दो एकड़ यदि हमारे पास बहुत है, वहां कहीं ज्यादा आसान हो जाता है अगर ५ आदमी १० आदमी २० २५ ३० ४० आदमी मिलकर खेती उस जमीन पर करें जमीन का अलग अलग हिस्सा रहे जमीनें उनकी रहें। मिलकर करने से उनका लाभ होता है खर्चा कम होता है फायदा ज्यादा होता है। तो इसलिए मिलकर खेती करना भी अच्छा है लेकिन वो बात बाद की है और जो चाहे करें, चाहे न करें। इस समय जो मैं आपसे कहता हूं वो यह है कि आप सहकारी संघ ऐसा बनाइये जिसमें ये सब काम जो मैंने आपको बताये हैं हो सकें। आपकी जमीन अलग रहे आपकी मिलकियत है। आप जैसा चाहें इसको करें और आपस में सहकारी संघ में लोग मिल कर जो मिली-जुली बातें हों उनको करें, बेचना, खरीदना वगैरह। इससे आपका बहुत लाभ होगा और उसको सीखिये। तो दो बातें मैंने आपको बताईं—एक तो पंचायत का इंतजाम करें दूसरी सहकारी संघ जो आर्थिक बातों में गांव की मदद करें।

× × × ×

ये सब बातें खाली पुरुषों के लिए नहीं हैं स्त्रियों के लिए भी हैं उनको भी स्कूल में जाना है, पढ़ना है। लड़के लड़कियों का क्योंकि देश आगे बढ़ता नहीं जब तक कि सारे देश वाले उसमें हाथ न लगायें। अब वो जमाना गुजरा, पुराना समय चला गया जिसमें घूंघट काढ़कर औरतें और काम न करें खाली घर के कामों में ही पड़ें। घर का काम तो करेंगी ही वह ठीक है लेकिन काम भी करें। देश के कामों में लगें। इस तरह से देश बढ़े क्योंकि हम देश को और जल्दी बढ़ाना है। समय नहीं है। आबादी हमारी बढ़ती जाती है। बोझा बढ़ता जाता है इसलिए सबों को यह काम करना है।

× × × ×

ये कम्युनिटी डेवलपमेंट "लाक क्या है" खास गांवों के विकास के लिये हैं और अब समय आया कि उसका काम, विकास योजना का, प्लान वगैरह का आपके कंधे पर रखा जाय। आप उस बोझ को उठायें और उसी के साथ अपनी आमदनी जो हो वो भी आप लें और अगर आप चाहें तो आप आमदनी बढ़ायें। आपका अधिकार है क्योंकि जो आप आमदनी बढ़ायेंगे तो आप ही खुद खर्चेंगे अपने गांव की तरक्की में। अपने बाल बच्चों की पढ़ाई में। तो इस ढंग से हम चलना है तो बड़ी भारी जिम्मेदारी आपने ली है, आपको दी गई और आपने ली है। किसी कदर और भारत के लोगों की आंखें भी आपकी तरफ होंगी कि देखें कैसे वे चलाते हैं। लेकिन मुझे तो विश्वास है खाली राजस्थान के लिये नहीं बल्कि सारे भारत के लिये कि जहां इस तरह से जिम्मेदारी दी जायेगी तो उसका नतीजा अच्छा होगा और देश तेजी से बढ़ेगा।

× × × ×

तो आपने यह बड़ा काम किया। बड़ा कदम उठाया और एक बड़े शुभ दिन इस कदम को सामने उठाया है तो मैं आपको बधाई देता हूं और आशीर्वाद है यह तो ठीक है लेकिन आपको बधाई और आशीर्वाद खाली क्या दूं। मैं कौन और आप कौन। हम सब साथ मिलकर एक बड़े काम में लगे हैं। हम एक दूसरे की पीठ ठोक लें अच्छा है दिल तो खुश होता है। जब सफलता होती है तब दिल खुश होता है। उमंग जब अपने सारे काम फल देते हैं तब दिल खुश होता है क्योंकि उससे हमें लाभ होता है, देश को लाभ होता है और कोई कठिन काम आप उठायें और हिम्मत से करें और उसमें कामयाबी हो तो आप बढ़ जाते हैं और आपकी शक्ति बढ़ जाती है। हमने स्वराज्य का प्रश्न उठाया

था। जब स्वराज्य मिला हमारी शक्ति बढ़ गई। दुनिया में हमारा आदर हुआ और इस तरह से ये जो बातें हमने उठाई वो हुई। हमने पंचवर्षीय योजना उठाई। उसमें सफलता हुई। हम अपने ऊपर भरोसा हो गया। इस तरह से हमारी शक्ति बढ़ती है। और भरोसा बढ़ता है। आप इस काम को यह पंचायत और पंचायत समिति और जो नक्शा बना है, इस काम को आप जोरों से चलायें, जिम्मेदारी से चलायें और आप सहकारी संघ चलायें तो आप देखेंगे कि देखते देखते राजस्थान का कुछ रूप बदलना है। आपकी हालत अधिक अच्छी होती है और उसके साथ सब से बड़ी बात आपकी शक्ति बढ़ती है। भरोसा बढ़ता है, सिर ऊंचा होता है और इस तरह से और भी तरक्की होती है। तो आप सब जमा हुये, जमा हो के आप इन सब बातों पर विचार करेंगे। मेरा आशीर्वाद तो जरूर है आपको और बधाई है, और मुझे विश्वास है इस कदम से राजस्थान को लाभ होगा, याद रखें कि ऐतिहासिक कदम है।

× × × ×

पंचायत के मानी क्या? पंचायत हो, पंचायत समिति हो या ब्लाक हो और ये सब जो इसमें बहुत सारे लोग हैं इन सब लोगों को समझना है हम एक बड़ी बिरादरी के लोग हैं। ऊंच नीच नहीं समझना है और ऊंच नीच के लिये भी आप सोचलें कि अब वो जमाना चला गया हमारे देश से। जैसे मैंने आपसे कहा राजा लोगों का अधिकार गया, जागीरदारों के भी अधिकार बहुत कुछ गये, राजाओं का हम आदर करते हैं जागीरदारों का भी लेकिन अधिकार नहीं। तो अब ये जो हमारा जाति भेद है, और कोई जाति धर्म समझे कि हम दूसरे की छाती पर चढ़े हैं या ऊंचे पर तो यह बात ठीक नहीं है। आजकल राजनीति में हरेक को बराबर के अधिकार हैं। पंचायत में बराबर के अधिकार हैं, पुरुष स्त्री कोई जाति हो जाति के ढंग पर नहीं बनी, इस तरह से काम करें। धर्म में आप हिन्दू हों, बौद्ध हों, मुसलमान हों, पारसी हों ईसाई हों, जैन हों जो कुछ आप हों जो कोई आपकी जाति हो, जो कुछ आपका धर्म हो, आप रखिये खुशी से। लेकिन धर्म के माने यह नहीं है कि आप दूसरे धर्म को धकेलें और उससे बुरा बर्ताव करें।

× × × ×

सो इस तरह से हमें चलना है और हम नये कदम को जो आपने उठाया मजबूती से उठाना है, अपने पर भरोसा करके उठाना है। लेकिन हमेशा याद रखें कि आपने जो नया कदम उठाया तो सब लोग आपकी तरफ देखेंगे। अगर आप अपनी प्रतिज्ञा भूल गये, अगर आपस में दलबन्दी करने लगे लड़ने लगे तब आप काम को खराब करेंगे और आपकी बदनामी होगी। बड़े काम को उठाते हैं तो हमको भी बड़ा आदमी बन जाना चाहिये। छोटे आदमी की तरह से काम नहीं करना चाहिये। सो आपने बड़ा कदम उठाया। यहां आप सब पंच सरपंच और प्रमुख लोगों ने एक बड़ा कदम उठाके बड़ी जिम्मेदारियां ओढ़ी हैं—सारे राजस्थान की जनता को बढ़ाने की। बड़ी बात है ना बड़े गर्व की बात है। बड़ी जिम्मेदारी की है और आपको कभी गलत बात नहीं करनी है जिससे बदनाम करें अपने को और अपनी पंचायत को या अपने राजस्थान को बदनाम करें। जरा ऊंचा रहना है। ऊंची मिसाल सबों को देनी है। ऐसे करियेगा तो आपका दिल भी ऊंचा होगा, मजबूत होगा और तरक्की होगी।

युगोस्लाविया में सत्ता की विकेन्द्रित व्यवस्था

—श्री भगवतसिंह मेहता

युगोस्लाविया की सामाजिक आर्थिक और प्रशासनिक व्यवस्था को पूर्ण रूप से समझने के लिये कुछ प्रारम्भिक बातों की जानकारी आवश्यक है। चौदहवीं शताब्दी में जब कि यूरोप पर तुर्कों के आक्रमण हुए तब से युगोस्लाविया एक स्वतंत्र राजनैतिक इकाई नहीं बन सका। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् ही सर्ब्स क्रोट्स और स्लोवेन्स तीनों को मिलाकर एक राज्य की स्थापना की गई और उसकी एक ही केन्द्रीय सरकार राजतन्त्र के रूप में बनाई गई।

(२) १९१७ में हुई रूस की राज्य क्रांति का प्रभाव इस देश के लोगों पर भी पड़ा, और सन् १९१८ में एक कम्युनिस्ट पार्टी बनाई गई पर इस पार्टी को हमेशा सन्देह की दृष्टि से ही देखा गया और १९२८ में तो इस संगठन को गैर कानूनी भी घोषित कर दिया गया। फिर भी यह पार्टी अदृश्य रूप में निरंतर काम करती रही और जिला स्तर तथा अन्य स्तरों पर समितियां संगठित करने में सफल हुई। राजतन्त्रीय शासन जब तक जर्मन आक्रमणों के परिणाम स्वरूप नष्ट नहीं हो गया, चलता रहा। इस अवधि में पार्टी श्रमिकों का विश्वास प्राप्त कर चुकी थी। द्वितीय विश्वयुद्ध काल में पार्टी की शक्ति और उसका प्रभाव और भी अधिक बढ़ गया। यहां तक कि गांवों तक में इस पार्टी के संगठन और सशस्त्र सेनाओं में छोटे २ कक्ष (Cells) कायम हो गये। पार्टी ने लोगों में विशेषकर युवकों और युवतियों में अपने स्थानीय संगठनों के जरिये, उत्साह पैदा किया और देश को उन राष्ट्रों के साथ युद्ध करने के लिये तैयार किया जिन्होंने जर्मनी और इटालियनों के बीच देश का बटवारा कर दिया था। विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि इस पार्टी के नेताओं ने न केवल आक्रमणकारियों के साथ ही युद्ध करने का निश्चय किया बल्कि भूतपूर्व शिविल सत्ता को भी समाप्त करके उसके स्थान पर नई सत्ता कायम करने का निर्णय लिया। प्राचीन पद्धति में और उस पद्धति में जो कि पार्टी के समय निर्धारित थी कोई एक सूत्रता बनाये रखने की योजना नहीं थी।

(३) गुड्वा और जिला स्तर की कमेटियां युद्ध काल में काफी शक्तिशाली बन गई। आक्रमणकारी के विरुद्ध प्रतिरोध शक्ति संगठित करने का दायित्व इन कमेटियों पर था [हाई कमान केवल सामान्य

निर्देश जब सम्भव हो, दिया करता था। इस प्रकार ये सगठन वर्तमान स्वायत्त शासन के आधार बन गये।

(४) दीर्घ काल तक होते रहे विदेशी आक्रमणो के परिणामस्वरूप जो विदेशी प्रभाव पडा उसके उपरान्त भी, युगोस्लाविया ने अपनी परम्परागत सस्कृति की रक्षा की है जिस पर कि स्वदेशीयता की स्पष्ट छाप है और जो एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र म भिन्न है।

(५) युगोस्लाविया का सघीय जनवादी गणतन्त्र (१) सर्बिया (२) क्रोसिया (३) स्लोवेनिया (४) बोसीनिया एव हर्जेगोविना (५) मसीडोनिया और (६) मान्टेनेग्रो के जनवादी गणतन्त्रो से मिलकर बना है। बासीनिया और हर्जेगोविना को छोडकर इन जनवादी गणतन्त्रो का निर्माण राष्ट्रीयता के आधार पर किया गया है। सर्बिया के जनवादी गणतन्त्र मे दो स्वशासित इकाईया हैं एक वोज्वोडिना का स्वशासित प्रान्त और दूसरे कोसोवो—मेथोहिजा रीजन की स्वशासित इकाई। ये इकाईया मल्पसख्यक वर्गों को एक विशिष्ट स्थान प्रदान करने के लिये सविधान के अन्तर्गत स्थापित की गई हैं। क्रोएशिया और स्लोविनिया पर दीर्घकाल तक आस्ट्रेलिया का प्रभाव रहा जिसका असर वहा की प्रशासनिक एव कानूनी परम्पराग्रो पर पडा। राजतन्त्रीय (Monascrist) प्रशासन पर फ्रास का अत्यधिक प्रभाव पडा। इन्ही प्रभावो के कारण फडरल तथा रिपब्लिकन सुप्रीम कोर्ट के अन्तिम क्षेत्राधिकार के अधीन, प्रशासन कार्यों म प्रशासनिक विधि की सुदृढ परम्परा बनी हुई है।

(६) द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति पर एक कम्युनिस्ट सरकार स्थापित की गई जिसकी प्रबल प्रवृत्ति राजनैतिक और प्रशासनिक केन्द्रीयकरण की ओर थी। राज्य ने कई आधारभूत प्रशासनिक कार्यों को अपने हाथ मे लिया जिनम खास तौर पर एस कार्य थे जिनका सबध वहा की अर्थव्यवस्था से था। इस अवधि मे प्रशासन को सुदृढ बनाया गया और सत्ता रुढ पार्टी द्वारा विहित नई समाज-व्यवस्था का आर्थिक आधार स्थापित किया गया। युद्ध के अपराधियो की सम्पत्ति जप्त कर ली गई और उद्योग यातायात बक, वाणिज्य आदि का राष्ट्रीयकरण किया गया। कृषि सुधार इस सिद्धान्त पर कि भूमि उन्ही की है जो उसे जोतते हैं किये गये। समाजवाद का यह प्रारम्भिक समय युगोस्लाविया म एक आवश्यक परिवर्तन-काल माना जाता है। उनके विचार मे इसी तरीके से भावी विकास के अनुकूल परिस्थितिया पैदा करने के लिये और आधारभूत कार्यों के लिये भौतिक साधन एकत्रित करना सम्भव हो सकता था।

(७) दूसरा काल १९४९ से प्रारम्भ होता है। जिसकी विशेषता यह है कि इसम सरकार तथा प्रशासन का विकेन्द्रीकरण किया गया। स्थानीय निकायो को १९४९ म राज्य सत्ता के अगो के रूप म अधिक मान्यता दे दी गई थी। अब, उनका कार्य क्षेत्र और अधिक विस्तृत कर दिया गया और इसम मुख्य बात यह रही कि सत्ता को जहा तक हो सका कम्युनो (Crmonunes) को सौंप दिया गया। उत्पादकों को उत्पादन और शिक्षा, सस्कृति तथा सामाजिक सेवा के क्षेत्र म स्वशासन प्रदान किया गया।

(८) युगोस्लाविया के राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक सगठन की सही व्याख्या १९५४ के सविधानिक विधि के तीन अनुच्छेदो से प्रतीत होगी उद्धृत है —

अनुच्छेद—२

यूगोस्लाविया के संघीय जनवादी गणतन्त्र मे सम्पूर्ण शक्ति श्रमजीवी वर्ग मे निहित है ।

यह वर्ग अपनी शक्ति का प्रयोग और अपने सामाजिक मामलो का प्रबन्ध, अपने उन प्रतिनिधियो द्वारा करता है जिन्हें वह पीपुल्स कमेटियो मे पीपुल्स असेम्बलियो मे श्रमजीवी कौंसिलो मे तथा अन्य स्वशासित निकायो म भेजता है और इसके अतिरिक्त प्रत्यक्ष रूप मे, निर्वाचनो, निर्वाचित व्यक्तियों की वापिसी जननिर्देश (रीफरेण्डम), मतदाताओं की मीटिंग, नागरिको की कौंसिलो नागरिकों द्वारा प्रशासन एव न्याय कार्यों म योगदान के जरिये एव स्वायत्त शासन के अन्य तरीको से करता है ।

अनुच्छेद—३

उत्पादन के साधनो पर समाज का स्वामित्व अर्थ व्यवस्था म उत्पादन का वर्ग का स्वायत्त-शासन और नगरपालिका कम्यें और जिले मे श्रमजीवी-वर्ग का स्वायत्त-शासन देश की सामाजिक और राजनतिक व्यवस्था की आधार-शिला है ।

शिक्षा सस्कृति और समाज सेवा के क्षेत्र मे श्रमजीवी वर्ग के स्वायत्त शासन को गारन्टी दी गई है ।

उत्पादक वर्ग तथा श्रमजीवी वर्ग द्वारा स्वायत्त शासन की शक्ति का प्रयोग सामान्य समाज के उन हितो के अनुरूप किया जाता है जिनका वर्णन कानून मे तथा श्रमजीवी वर्ग की प्रतिनिधि सस्थाओ, पीपुल्स असम्बलियो एव पीपुल्स कमटियो के अन्य निर्णयो म किया गया है ।

अनुच्छेद—४

निम्नलिखित के सम्बन्ध म गारटी दी गई है —

लोकतन्त्रीय, राजनतिक आर्थिक, सामाजिक वज्ञानिक सास्कृतिक, कलात्मक व्यावसायिक, खेल-कूद सम्बन्धी और अन्य सामान्य हितो की पूर्ति के लिए श्रमजीवी-लोगो का स्वतन्त्रतापूर्वक पारस्परिक मिलना जुलना ।

काम करने का अधिकार

कम्यून और जिला एसे दो स्तर हैं जिन पर यूगोस्लाविया मे स्वायत्त शासन प्रणाली से कार्य होता है जिला या कम्यून म निहित सत्ता का प्रयोग एक सस्था द्वारा किया जाता है जिसे पीपुल्स कमेटी कहते हैं। कम्यून एक आधार एव मूलभूत सामाजिक आर्थिक न्यायिक और राजनतिक सगठन है । कानून की दृष्टि स तमाम कम्यूनो की स्थिति एक सी है चाहे व बड़ हो या छोट अथवा शहरो म हों या गावो म ।

सिवाय ऐसे अधिकारियो तथा कर्तव्यो के जो सविधान अथवा कानूनो के अनुसार राज्य सत्ता के अन्य क्षत्रीय अग भूत सगठनो के लिए सुरक्षित कर दिये गये हैं सरकार के समस्त अधिकारो का प्रयोग तथा कर्तव्यो का पालन कम्यून की पीपुल्स कमेटी करती है। क्षेत्राधिकार और शक्तियो के बारे में सामान्य

धारणा स्थानीय शासन की सबसे नीचे की संस्था अर्थात् कम्यून के पद्म म है। पीपुल्स कमेटी, चाहे वह कम्यून की हो या जिले की किसी उच्च सत्ता के निर्देशों और आज्ञाओं के अधीन काम नहीं करती। ऐसे तथा राज्य प्रशासन के समस्त अगभूत संगठन उसके अधीन होते हैं सिवाय एसे जिन्हें कानून द्वारा गणतांत्रिक या संघीय कार्यों का पालन करने के लिये अधिकृत किया गया है। वास्तव में सिवाय पुलिस को छोडकर दूसरा कोई ऐसा संगठन है ही नहीं। पुलिस भी उन कार्यों के पालन में जिसमें कि उसे कम्यून की सहायता की आवश्यकता होती है, कम्यून की मर्जी के अनुसार ही काय करती हैं।

पीपुल्स कमेटी के दो सदन होते हैं, हाउस आफ सिटीजन्स तथा हाउस आफ प्रोडयूसर्स हाउस आफ सिटीजन्स में नागरिकों का प्रतिनिधित्व है। इसके सदस्यों की संख्या कम्यून का जनसंख्या के अनुसार घटती बढ़ती रहती है। किन्तु कम से कम संख्या सामान्य तौर पर ५० होती है। हाउस आफ प्रोड्यूसर्स में उत्पादकों के प्रतिनिधि हैं, इसके सदस्यों की संख्या प्राय हाउस आफ सिटीजन्स के सदस्यों की संख्या की ७५ प्रतिशत होती है।

चुनाव—कम्यून के हाउस आफ सिटीजन्स के सदस्यों का चुनाव १८ वर्ष से अधिक आयु वाले समस्त नागरिक (नर तथा नारी दोनों) गुप्त मतदान द्वारा करते हैं।

हाउस आफ प्रोडयूसर्स के लिए भी निर्वाचन होता है। इसके सदस्यों का चुनाव उत्पादकों के दो ग्रुपों द्वारा किया जाता है। एक ग्रुप उद्योग, वाणिज्य तथा हस्तशिल्प के उत्पादकों का होता है और दूसरा कृषि-उत्पादकों का जिसमें सहकारी संस्थाओं के उत्पादक एवं समाज-फार्मों पर काम करने वाले श्रमिक शामिल होते हैं। इन दोनों ग्रुप्स के सदस्यों की संख्या गत वर्ष में कम्यून के कुल उत्पादन में उनके योगदान के अनुसार निश्चित की जाती है।

जिले में हाउस आफ सिटीजन्स का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से होता है। प्रत्येक कम्यून से आने वाले सदस्यों की संख्या समस्त जिले की जन संख्या के अनुपात के अनुसार होती है। वैसे ही हाउस आफ प्रोडयूसर्स का चुनाव भी अप्रत्यक्ष होता है।

दोनों सदनों के सदस्यों का विशेष उत्तरदायित्व होता है कि वे अपने अपने कामों की तथा जिस पीपुल्स कमेटी में उनका प्रतिनिधित्व है उसके काम के बारे में अपने निर्वाचित क्षेत्र में मतदाताओं को जानकारी देते रहें। जो सदस्य अपने कर्तव्यों का पालन करने में विफल रहते हैं उन्हें सक्षम प्रतिनिधि निकाय संस्था द्वारा चेतावनी दी जा सकती है।

कम्यून या जिले की पीपुल्स कमेटी की साधारणत बैठक महीने में एक बार होती है जो कि सब साधारण के लिये खुली होती है। प्रत्येक सदन का अलग अधिवेशन आर्थिक योजनाओं बजट या अन्य महत्वपूर्ण विषयों से सम्बन्धित प्रश्नों को छोडकर अन्य काय के लिये होता है। ऐसे प्रश्नों पर संयुक्त अधिवेशन पीपुल्स कमेटी के प्रेसीडेन्ट की अध्यक्षता में होता है।

हाउस आफ सिटीजन्स के सदस्यों में से प्रधान चुना जाता है और उसके कई सहायक उप-प्रधान होते हैं और उनकी संख्या तीन होती है। प्रधान पीपुल्स कमेटी का प्रतिनिधित्व करता है और कम्यून या जिले के वैधिक प्रतिनिधित्व करता है परन्तु कम्यून या जिले के दैनिक काय में हस्तक्षेप करने का उसे कोई अधिकार नहीं है।

पीपुल्स कमेटी को उसके काय म कई सलाहकार नायकारी तथा प्रशासी सगठना द्वारा सहायता दी जाती है। प्रत्येक पीपुल्स कमेटी म आवश्यक रूप से पाच सलाहकार एव विमर्शी निकाय होते हैं जिन्हें स्टैंलिंग कमीशन कहते हैं इनम से दो अर्थात चुनाव तथा मनोनयन कमीशन और पिटीशन एव निकायत कमीशन दोना सदना स सम्बन्धित प्रश्नो का निपटारा करते हैं। इनके अलावा दस से पन्द्रह तक कौंसिल होती है जो कि कायकारी तथा प्रशासी काय करती है। इनम हाउस आफ सिटीजन्स या हाउस आफ प्रोड्यूसस के सदस्यो के अलावा। कई विशेषज्ञ तथा बुद्धिमान नागरिक बाहर के भी होते हैं।

पीपुल्स कमेटी के निर्णयो के पालन और उसके कानूनो को लागू करने के लिये। कम्यून का अपना एक प्रशासी सगठन होता है जिसका मुख्य अधिकारी एक सेक्रेटरी होता है। इसका मुख्य काय भिन्न भिन्न विभागो के काय का सगठित तथा उसकी देख रेख करता है और उनके कार्यों का समन्वय करना होता है कम्यून या जिले के स्थायी कमचारियो पर उसका प्रशासनिक नियन्त्रण होता है और उसकी तुलना एव पचायत समिति के विकास अधिकारी अथवा जिला परिषद के सेक्रेटरी से की जा सकती है। जिले की सगठन सम्बन्धी व्यवस्था करीब करीब कम्यून के समान ही होती है।

शासन और जनसाधारण में निकट सम्पक स्थापित करने के लिये और जनता को शासन में अधिकाधिक भाग लेने का अवसर देने के लिये, कम्यून के क्षेत्र म जो गाव होते हैं उनकी एक स्थानीय समिति होती है। इस समिति का निर्माण किसी कानून के अन्तगत नहीं होता। इसके सदस्यो का चुनाव उस क्षेत्र की वोटर असेम्बली करती है। यह सामान्यतया निर्माण कार्यों, इमारतो और सेवाओ की सुव्यवस्था सावजनिक सम्पत्ति, स्थानीय चरागाहो और उनके उपयोग का प्रबन्ध, स्थानीय बाजार की सफाई और सुव्यवस्था इत्यादि का काम सम्भालती है।

कम्यून का मुख्य काय नागरिकों के व्यक्तिगत हितो का समाज के व्यापक हितो के साथ समन्वय करना है और इस कारण, वह अपने क्षेत्र की आय को वहा की आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक तथा अन्य आवश्यकताओ पर खच करती है जिससे आर्थिक सगठनो के हितो और कार्यों का समाज के व्यापक हित के साथ सामजस्य बना रहता है। इसी अभिप्राय से वह आर्थिक सस्थान स्थापित करती है तथा जनोपयोगी सेवाए जैसे कि सडकें यातायात जल व्यवस्था, नालिया स्वास्थ्य तथा शिक्षा सम्बन्धी सगठित और स्थापित करती है, अपने क्षेत्र म स्थित भूमि और इमारतों का प्रबन्ध लोगो के रहने के लिये मकानो का निर्माण जन्म मृत्यु के आंकडे, कानून और शान्ति की व्यवस्था तथा कुटिनियन न्यायालयो का सगठन अपने हाथ म लेती है।

जिले की पीपुल्स कमेटी का कायक्षेत्र साधारण तथा नीचे की सस्थाओ की कायवाहियो की एकता का मेलन, कम विकसित कम्यूनो के विकास एव व्यवसायो की स्थापना जो कम्यून की क्षमता के बाहर हो टक्नीकल सस्थाओ के सगठन और स्थापना तथा अपने अधिकार क्षेत्र म स्थित विभिन्न कम्यूनों के सामान्य हित के काय करने तक सीमित है।

अपने विभिन्न कार्यो को पूरा करने के लिये स्वय कम्यून के पास आमदनी के साधन होते हैं। इन साधनो म मुख्य बजट आय और निधि म आय के साधन हैं। बजट आय अलग अलग नागरिकों से (नियोजको द्वारा दिये गये सामाजिक अशदान के रूप म) करो से आर्थिक सस्थानो को होने वाले लाभो से तथा जिला रिपब्लिक या फेडरल सरकार के अनुदानो से प्राप्त होती है।

कृषि, वन, [illegible] निर्माण इत्यादि की उन्नति के लिये पृथक साधनों से जैसे कर आदि से होने वाली आय में से कुछ आय नियत करके विशेष फंड स्थापित किये जाते हैं।

जिले की आय के साधन आर्थिक संस्थाओं के लाभ का हिस्सा, आयकर, नियोजकों द्वारा अनुदान, टैक्स इत्यादि हैं।

आर्थिक व्यवसाय और संस्थाएं तथा सेवाएं जैसे शिक्षा, जन स्वास्थ्य, समाज कल्याण आदि का प्रबन्ध सामाजिक प्रबन्ध नामक कार्य पद्धति के अनुसार किया जाता है। सामाजिक प्रबन्ध में निम्नलिखित समाविष्ट है—

(१) स्वकीय प्रबन्ध अर्थात् आर्थिक संस्थाओं का प्रबन्ध श्रमजीवी वर्ग की समितियों द्वारा किया जाना, और

(२) सामाजिक प्रबन्ध (अथवा सार्वजनिक प्रबन्ध) अर्थात् संस्थाओं और सेवाओं का उन व्यक्तियों और एसोसियेशनों द्वारा प्रबन्ध किया जाना जिनकी उनमें रुचि हो।





खण्ड–४

ग्राम–सभा



ग्राम सभा का सैद्धान्तिक पक्ष

[श्री चन्द्रकुमार सुकामार]

सम्पूर्ण दायित्वों से युक्त अपने उच्चस्तरीय त्रिवृत्तात्मक ग्राम-पंचायतों की स्थापना के पीछे यदि कोई भावनायें कार्य कर रही थी, तो वे ये थी कि —

१ स्थानीय स्वायत्त शासन के लिए जहां कि शासन अब स्वयं जनता द्वारा संचालित होगा अधिक से अधिक स्वस्थ व्यवस्था का अवसर देना —
२ क्रमिक प्रक्रिया द्वारा विशेषत त्रिवृत्तात्मक पंचायतों के निचले स्तरों पर गांव के लिए विकास कार्यों की प्रगति और उन्नति तथा
३ विकास योजना के साधारणतम स्वरूप में सामुदायिक व क्रियाशील लोकतन्त्रात्मक उत्तर-दायित्व की भावनाओं का प्रसार करना।

इस दृष्टि से पंचायती राज की स्थापना सत्ता व अधिकारों का विकेन्द्रित साधारणीकरण मात्र ही नहीं है वरन् लोकतन्त्र में सक्रिय योगदान की ओर भी एक दृढ़ कदम है। त्रिस्तरीय शासन में निम्न स्तर पर उपलब्ध स्रोतों द्वारा प्रशासनिक विकास उसके 'पंचायत' कहे जाने वाले स्तर पर ही हो सकता है क्योंकि पंचायत का गठन निर्वाचन द्वारा स्वयं ग्रामवासी ही करते हैं। परिणामत ग्रामवासियों की प्रवक्ता होने के नाते क्षेत्रीय स्रोतों द्वारा क्षेत्रीय और सामुदायिक आवश्यकताओं की पूर्ति

हेतु ग्राम पंचायत को ही सामने रखा जा सकता है और सर्वेक्षण, किया जा सकता है। उच्च स्तर पर प्रशासन द्वारा नीति संचालन उन मुद्दों पर होता है जिनका नित्य प्रति के जीवन से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं होता। फिर राष्ट्रीय और राज्यीय स्तर पर बनने वाली प्राविधिक व मिश्रित योजनाओं पर कार्यक्रमों में देश की अधिकतम जनता (भीड़) की सहमति की न तो कोई अनिवार्यता ही रहती है और न अपेक्षा ही। इस हालत में पंचायत स्तर के कार्य ही ऐसे हैं जो कि दैनिक जीवन से वास्तविक अर्थों में प्रत्यक्षतः सम्बन्धित हैं। इस स्थिति में सामुदायिक प्रशासनिक इकाई की जाँच और सर्वेक्षण ही सम्बन्धित क्षेत्र के निवासियों के दैनिक जीवन की आवश्यकता और उनकी पूर्ति हेतु तैयार कार्यक्रमों की सही ढंग और दिशा के लिए सही तरीका है। किन्तु यह तभी सम्भव है जब कि अधिकतम व्यक्ति उस (इकाई) से सम्बद्ध हों। ग्राम स्तर पर उपलब्ध स्रोतों का प्रशासन के लम्बे हाथों द्वारा न तो सही सर्वेक्षण ही किया जा सकता है और न ही उनका उपयोग फिर भले राज्य की राजधानी से प्रयत्न किए जाय अथवा केन्द्रीय सरकार द्वारा क्योंकि उनके और व्यक्ति के मध्य सामाजिक मनोवैज्ञानिक एवं प्राकृतिक आदि कुछ ऐसी दूरियाँ हैं जो असाध्य हैं। इसीलिये व्यावहारिक लोकतन्त्र की जड़ें उस क्षेत्र में छोटे सामुदायिक वृत्त के मध्य पनपती हैं जहाँ कि व्यक्ति व्यक्ति का सम्बन्ध साधन और दायित्वों का निर्वहण प्रत्यक्ष हो सकता है। जहाँ तक योजना और विकास कार्यों के लिये ग्राम स्तर पर मिलने वाले साधनों का सवाल है चाहे वह भूमि सम्बन्धी हो या श्रम या पूंजी सम्बन्धी उनमें श्रम ही ऐसा साधन है जो भारतीय ग्रामों के आर्थिक पक्ष की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। पर योजना में सक्रिय सहयोग के साधन 'श्रम' का यह अर्थ कदापि नहीं कि वह केवल उसकी सैद्धान्तिक जरूरत ही को पूर्ण करता है वरन् यही वह गारण्टी है जो कार्यकर्त्ताओं को अन्य साधनों की उपलब्धि की सम्भावना भी बनाता है। ऐसा योगदान मात्र सहयोग ही को उन्नत नहीं करता वरन् साधनों के सही सही मूल्यांकन और उपयोग के अवसर भी प्रदान करता है।

ग्राम–सभा

अगर ग्राम-स्तर पर पंचायतों की संरचना भारत में लोकतन्त्रात्मक शासन एवं जीवन-पद्धति की नींव को शक्ति प्रदान करती है तो ग्राम के सभी वयस्क मतदाताओं द्वारा गठित ग्राम सभा को सक्रिय योग, निर्णय और निर्यान्विति की सामर्थ्य देनी होगी क्योंकि यही पंचायती राज संस्थाओं को ओजस्विता प्रदान कर सकती है। अगर ग्राम समुदाय का प्रत्येक वयस्क सदस्य या जितने अधिक से अधिक हो सकें वे सब ही ग्राम विकास और ग्राम प्रशासन के कार्यों में संलग्न हो सकें तो तत्सम्बन्धी साधनों का उपयोग और उपभोग भी किया जा सकता है, और उनमें स्व-सेवा तथा स्व शासन की धारणा भी जमाई जा सकती है। स्व-सेवा और स्व शासन की धारणा स्वयं ही लोकतन्त्र की भौतिक एवं नैतिक नींव को सक्षम बना देगी। विकास कमिश्नरों की समय समय पर हुई बैठकों और स्थानीय स्वायत्त-शासन की केन्द्रीय समिति की बैठकों में भी यही माना गया है कि समन्वित सम्पूर्ण उर्वरता प्रदान करने की दृष्टि से प्रत्येक राज्य की विधान सभा द्वारा 'ग्राम सभा' को स्थाई मान्यता प्रदान की जानी चाहिये कि जिससे वह अपना स्वरूप और तेजस्विता प्राप्त कर सके।

स्थानीय-स्वायत्त-शासन की केन्द्रीय समिति की १६५६ में हैदराबाद में हुई बैठक में भी यही अनुभव किया गया था कि—

मात्र कुछ ही राज्यों की विधान-सभाओं ने पंचायत क्षेत्र के वयस्क मतदाताओं द्वारा गठित ग्राम-सभा को वैधानिक इकाई के रूप में मान्यता प्रदान की हुई है, तो कुछ ऐसे क्षेत्र भी हैं जहां कोई ग्राम-सभा' है ही नहीं जब कि मान्य मतदाता सूची में वहां की स्त्रियों और पुरुषों के नाम अंकित है। पर ये विधान-सभायें तो इन मतदाताओं तक को मान्य नहीं स्वीकार करतीं। पर जहां विधान सभा ने ग्राम सभा को वैधानिक इकाई के रूप में मान्यता प्रदान की है तथा जहां ग्राम-सभा की बैठक वर्ष में दो बार आयोजित की जाती हैं और पंचायत अपने आय-व्यय का लेखा-जोखा तथा अपने कार्यों की प्रगति की रिपोर्ट उस (ग्राम-सभा) के समक्ष प्रस्तुत करती है वहां पंचायत को अपने कार्यों के लिए स्वीकृति संयुक्त बल तथा जनता का सक्रिय सहयोग प्राप्त करने का अवसर लाभ भी मिला है। इसीलिये यह अनुभव किया जाता है कि प्रत्येक राज्य की विधान सभा द्वारा ग्राम-सभा को वैधानिक इकाई के रूप में मान्यता देना और वर्ष में कम से कम दो बार उसकी बैठकें आयोजित करने की सुविधा प्रदान करना आवश्यक है।'

यमे बिहार और उत्तर प्रदेश में सन् १९४७ से यह संस्था (ग्राम-सभा) कार्यरत है और प्रायः अन्य सभी राज्यों में भी अब इसकी प्रस्थापना हो चुकी है, तब इसकी सफलता या विफलता के आधार भूत कारणों को जैसा कि सामुदायिक विकास के राष्ट्रीय संस्थान के तत्वावधान में १९६२ में मसूरी में हुई सेमीनार में भी 'ग्राम-सभा' नामकी संस्था के विकास की संभावनाओं की खोज बीन की अनिवार्यता स्वीकार की गई थी जांच अवश्यक होनी चाहिये।

ग्राम-सभा के विघटन कारक तथ्य

ग्राम-सभा की असफलता या विघटन के कारण जो कि प्रायः अनुभव किये जाते हैं, वे निम्नलिखित हैं —

१ चेतना का अभाव—आज भी अधिकांश ग्रामीण-जन पंचायत से भिन्न 'ग्राम सभा' नामक संस्था के अस्तित्व तक से अपरिचित है उन्हें यह तक भान नहीं है कि पंचायत क्या है? ग्राम सभा क्या है और उनमें क्या अन्तर है? जहां ग्रामीण जन इन दोनों संस्थाओं के स्वरूप और अन्तर से भिज्ञ हैं वहां वे ग्राम-सभा के सदस्य के नाते अपने दायित्वों और अधिकारों से अनभिज्ञ हैं तो दूसरी ओर ऐसे भी हैं जिन्हें इन दोनों संस्थाओं के स्वरूप व अन्तर का भान भी है तथा जो अपने अधिकारों से परिचित भी है उनमें अपने कर्तव्य तथा अधिकारों को तत्परता के साथ अमल में लाने की चेतना नहीं है।

२ ग्रामीण राजनीति की व्यक्ति-परक प्रकृति—पंचायत के चुनावों के अवसरों पर यह देखा गया है कि मतदाता आमतौर पर अपना मत व्यक्ति को देते हैं। वे मत देते वक्त नीति कार्यक्रम और आदर्श-धारणाओं के बारे में तनमात्र भी विचार नहीं करते। अतः इस स्थिति में जब कोई विशिष्ट व्यक्ति पंचायत का नेता निर्वाचित हो जाता है तो वे लोग यह सोचकर कि उनके लिए अब यह निर्वाचित व्यक्ति कार्य करेगा— अपने कर्तव्य की इति श्रीमान लेते हैं। उधर उस समुदाय में कुछ ऐसे सदस्य भी होते हैं जो या तो किसी दूसरे व्यक्ति का नेतृत्व हेतु समर्थन कर रहे होते

हैं अथवा जो व्यक्ति निर्वाचित हो गया है उसका विरोध कर रहे होते हैं, वे जब यह देखते हैं कि उनका (समर्थित) व्यक्ति पंचायत के कार्यों में कोई रुचि नहीं लेता है तो वे खुद भी पंचायत अथवा ग्राम सभा के कार्यों में कोई रुचि नहीं लेते।

३ सुनिश्चित स्थान का अभाव—प्रत्येक ग्राम पंचायत के लिये सुनिश्चित स्थान का अभाव भी ग्राम-सभा के विघटन का एक उत्तरदायी कारण है। प्रायः कई ग्राम एक पंचायत के अन्तर्गत आ जाते हैं और इस प्रकार आकार बढ़ जाने के कारण ग्राम सभा की बैठकों में भिन्न भिन्न मौजों वार्डों या ग्रामों से आये लोगों को बैठने का सुनिश्चित स्थान प्राप्त नहीं होता है।

४ समयाभाव—जब ग्रामीण-जन अपने कार्यों में व्यस्त हों ऐसे अवसर पर यदि ग्राम सभा की बैठक बुला आयोजित कर ली जाती है (या हो जाती है) तो वे उसमें सम्मिलित नहीं हो पाते। पर यदि ये बैठकें किसी त्योहार के मौके पर या जब वे कार्य व्यस्तता से मुक्त हों तब आयोजित हों तो स्थिति कुछ भिन्न ही होगी।

५ प्रधान अथवा पंचायत के सदस्यों की अनिच्छा—प्रायः पंचायत के शक्ति-संघटक ग्राम-सभा की मीटिंग बुलाने के प्रति विशेष कर इसलिए कि ग्राम सभा में विरोधी पक्ष के सदस्य किन्हीं जानने वाले प्रश्न करेंगे, या तो उदासीन रहते हैं अथवा यदि बैठक बुलाते भी हैं तो उसकी तिथि समय एवं स्थान की सुनिश्चित व समुचित सूचना प्रसारित नहीं करते। उधर विरोधी पक्ष के सदस्य-गण यह जाहिर करने के लिये कि उनके द्वारा आमन्त्रित ग्राम सभा की बैठक में उनका (स्वयं) कोई दिलचस्पी नहीं है उसका बहिष्कार करते हैं। इस प्रकार दोनों ही स्थितियाँ ग्राम सभा की असफलता की कारण बन जाती हैं।

६ ग्रामीणों द्वारा असहयोग—ग्राम सभा की अस्थिर एवं सन्देहास्पद स्थिति से भिन्न ग्रामीण लोग ग्राम-सभा की बैठक में सम्मिलित होने की बजाय अपने ही किसी लाभदायक एवं उत्पादक कार्य में संलग्न रहते अथवा काम न होने पर घरों में बैठे सुख की सांस लेते रहते हैं।

इसी प्रकार अन्य अनेक सामाजिक व राजनीतिक स्थितियाँ हैं जो ग्राम सभा की सरल राह में अड़चन का कार्य करती हैं और इसीलिए ग्राम सभा की अनिवार्यता अनुभव किए जाने के बावजूद भी इसके संगठित स्वरूप में अपने शक्ति सम्पन्न होने और स्थाई अधिकारों के प्रदान किए जाने में समय लगता जा रहा है। अब यह एक स्वयं सिद्ध तथ्य है कि कुछ स्थायी शक्ति प्रदान करने मात्र से ही ग्राम सभा संस्था का पूर्ण विकास नहीं किया जा सकता है। अतः पंचायती राज का आधार भूत इकाई के रूप में मान्यता प्रदान करने के साथ ही साथ यह भी सोचना पड़ेगा कि अन्ततः ग्राम सभा के क्या कार्य हों तथा उसकी कार्य विधि क्या हो ? इसी दृष्टि से 'पंचायती राज' की पूर्व नियोजित योजना के अनुसार प्रथम चरण भी निश्चित करना होगा। पर यह भी सत्य है कि अगर कभी भी 'ग्राम-सभा' अपनी विराटता, सजगता और सक्रिय-स्वरूप को प्राप्त कर सकी तो यह विश्वास होता है कि उस दिन देश का प्रत्येक व्यक्ति लोकतन्त्र के सक्रिय नागरिक का भार उठायेगा और उसी दिन पंचायती राज द्वारा आज किये जाने वाले वादे सच और खरे उतरते दृष्टिगत होंगे। अतः जब यह संस्था इस रूप में पूर्ण परिपक्वता प्राप्त करले तब ही इस और अधिक कार्य एवं अधिकारों का दायित्व सौंपा जा सकता है। और हो सकता है कि

एक समय ऐसा आये जब आगे बढ़ यह संस्था स्वयं ही अपने उच्च स्तरीय संस्थानों से अधिक दायित्व सौंप जाने की माग करने।

पुनरचना और उसके लक्ष्य—ग्राम समुदाय की पुनरचना का महत्व ग्राम सभा में निहित है। यह धारणा तो किसी भी प्रकार उचित नहीं कि आकांक्षित मात्रा में पुनरचना इस संस्था के निर्माण पर ही प्राप्त हो जायेगी अथवा उपरोक्त वर्णित कर्तव्य और अधिकारों के अमल में लाये जाने से होगी, क्योंकि सर्वमान्य पुनरचना संस्था के वधानिक गठन मात्र पर ही निर्भर नहीं करती। इस प्रकार का उत्कर्ष उत्थान एवं प्रभाव को किसी सीमा तक देश भर में विस्तृत विशिष्ट वातावरण पर भी आधारित है मुश्किल से ही प्राप्त किया जा सकता है। इसीलिये लोकतन्त्र में हमारी कर्तव्य विषयक धारणाओं में कुछ मूलभूत परिवर्तन करने के लिए भी कहा जाता है, बशर्ते कि हम अपने देश में सच्चे अर्थों में पंचायती राज की प्रतिष्ठापना चाहते हों। इसका सीधा सम्बन्ध देश की राजनैतिक पार्टियों की गतिविधियों को पुनर्जाव व जनता के सामान्य व्यवहार के स्तर को पूर्ण प्रमाण करार देने और बहुमत के नियमों से है। एक संस्था के रूप में ग्राम सभा इस दिशा में यह कर सकती है लेकिन अगर किसी भांति ये आदर्श या ये स्थितियां इन संस्थाओं के शरीर में जड़ें जमा चुकी तो फिर तुलनात्मक उच्च स्तरीय संस्थाओं एवं वैसी ही सम्बद्ध अन्य संस्थाओं में भी अपना प्रभाव स्थापित करने का मौका प्राप्त कर लेंगी। समाजवादी शासन के विचार और स्वयं समुदाय को भी ग्राम्य-समाज के संदर्भों में ही समझने की आवश्यकता, भौतिक वास्तविकता की अपेक्षा नैतिक धारणा ही अधिक है। आज ग्राम-समुदाय अधिकांशतः वर्गों में विभक्त है जिनकी भिन्न भिन्न यहां तक कि परस्पर विरोधी अभिरुचियां हैं। इन ग्राम्य अभिरुचियों की बुद्धि-परक धारणा जो, कि इन वर्गों पर नियन्त्रण रखती है सामाजिक स्वरूप में और अधिक दरार डालती हैं, और कहीं कोई इन बिखरे वर्गों की एकता में बाधा का काम भी करती हैं तो उस एकता को भी यह प्रभावित करती है। जैसे इस क्षेत्र में यह विश्वास कि एक ही सहकारी समिति गांव के विभिन्न वर्गों की विभिन्न रुचियों वाली चक्करदार आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है, ऐसी हमारी परम्परागत विचार-धारा की इन स्वरूप कुछ मूलभूत धारणाओं में परिवर्तन करना पड़ेगा। वर्गों और उपवर्गों की आड़ी तिरछी दरारों वाली सामूहिक धारणायें ऐसी सभी ग्राम-संस्थाओं के विकास को संदेहास्पद बना देती हैं। एक संस्था और एक विचार के रूप में ग्राम सभा को किसी एक विशिष्ट वर्ग या उपवर्ग की समस्या का ही समाधान नहीं करना है बल्कि पूरे गांव का एक मात्र कर कार्य करना है तब अगर सामूहिक धारणा न्यूनाधिक रूप में अपने आप में ही पूर्ण नहीं है तो पूरे गांव की एक संस्था विषयक धारणा तो शुद्ध सात्विक हो ही नहीं सकती। इसलिए विभिन्न वर्गों को एक सूत्र में पिरोने के लिए किए जाने वाले प्रारम्भिक प्रयत्नों के पूर्व गांव की विरोधी तत्वों वाली प्रकृति को समझ लेना अत्यधिक महत्वपूर्ण काम है। तब ही ग्राम समुदाय के दिन में किसी सीमा तक एकात्मकता के पनपने तथा संगठित और योजना बद्ध प्रयत्नों की दिशा में आगे कदम उठाया जा सकता है। इस प्रकार का सहयोग ही यथार्थ और साथ ही साथ क्रमानुगत भी ग्राम समुदाय में पूरे गांव की एक संस्था के रूप में आकार और महत्व प्रदान करना सम्भव हो सकता है।

यही उपरोक्त वर्णित व मूलभूत दरार है जो सामुदायिक विकास आंदोलन का सामाजिक एवं राजनैतिक विचारधारा के समक्ष आ खड़ी होती है। इसलिए ग्राम सभा जैसी संस्था जिसका कि एक

सामाजिक आधार हो 'उच्च स्तरीय त्रिरूपात्मक' सस्थाना की अपेक्षा धामी गति स ही विकसित हो तो ज्यादा श्रेष्ठ है। विभिन्न राज्या मे काय रत ग्राम सभाग्रा की गति विधियों ने इन निर्णया को पुष्ट हा अधिक किया है। ग्राम सभा नामको सस्था का दीघकालीन विकास, ग्राम-समुदाय की एकात्मकता का दीघकालीन धारणाग्रा, जिन्हे कि अभी अपना स्वरूप प्राप्त करना है और जिन्हें एक लम्बी अवधि के बाद ही अनुभव भी किया जायगा पर ही निभर करता है। पर प्रशासन ने विभिन्न स्तरो द्वारा विभिन्न क्षेत्रीय-गतिविधियों पर आधारित ऐसी सामुदायिक सस्थाग्रा को पूर्ण सरक्षण दिया जाना अनिवार्य है। इस दिशा म श्रेणी जाति अथवा धन-सम्पन्नता पर आधारित सामाजिक प्रतिष्ठा का अमान्य करन एव अवसर की समानता प्रदान करने वाली अन्त्योदय की नवीन भावनाग्रा के जन-सामान्य म प्रसार द्वारा यह काय सहज ही किया जा सकता है। इस दृष्टि से ग्राम सभा से इस थोडे से समय मे ही अधिक की कामना व्यथ है।



ग्राम सभा के कार्य की व्यावहारिक भूमिका



—श्री मनोहर प्रभाकर

ग्राम सभाओं के आयोजन का विचार शायद कुछ लोगों को आधुनिक लोकतन्त्र की उपज प्रतीत हो सकती है, किन्तु यह एक मनोरंजक तथ्य है कि ग्राम सभाओं का इतिहास उतना ही पुराना है जितना बौद्ध कालीन मठों या मौर्य कालीन स्तूपों का।

बिहार प्रदेश के इतिहास में इसका स्पष्ट संकेत मिलता है। कहते हैं कि एक बार वैशाली के बाहर किसी उपवन में भगवान बुद्ध अपने प्रिय शिष्य आनन्द के साथ बौद्ध संघों के जनतान्त्रिक संचालन की व्यवस्था पर विचार विनिमय कर रहे थे। जिज्ञासा वश आनन्द ने तथागत से पूछा—' भगवन् ! लिच्छवी गणतन्त्र की समृद्धि और सम्पन्नता का क्या कारण है ? तथागत ने कुछ क्षण सोचने के बाद शान्त स्वर में उत्तर दिया ' आनन्द ! लिच्छवी गणतन्त्र की सफलता का रहस्य वहां की ग्राम सभायें हैं। जब तक ये ग्राम सभायें बराबर जुड़ती रहेंगी और वहां के लोग अपने निर्णयों में सर्वसम्मत रहेंगे, लिच्छवी गणतन्त्र फूलता फलता ही रहेगा।'

इतिहास साक्षी है कि जब तक भारत में शासन का यह ढांचा काम करता रहा, तब तक सभी ओर सुख शांति का वास्तविक साम्राज्य स्थापित रहा।

ईसा पूर्व आठवीं शताब्दी से लेकर ईसा की चौथी शताब्दी तक देश के विभिन्न भागों में स्वतंत्र गणराज्य प्रचलित थे। कपिलवस्तु के शाक्य, पावा और कुशीनगर के मल्ल, मिथिला के विदेह, और वैशाली के लिच्छवी, ये सभी इसी गौरवपूर्ण परम्परा की स्वतन्त्र कड़ियां थीं। प्रत्येक गण में इन जातियों

की एक सभा होती थी जिसके निर्देशानुसार एक मुखिया शासन सचालित करता था। ये ग्राम सभाएं ग्राम की आवश्यकताओं और सम्भावनाओं का अध्ययन कर ग्रामीणों के लिए तो काम करती ही थीं जरूरत होने पर न्याय और सुरक्षा का दायित्व भी इनका होता था। जिन स्थानों पर सभाएं होती थीं उन्हें समष्ठगारा कहा जाता था। महात्मा बुद्ध ने अपने बौद्ध संघ का जनतांत्रिक ढांचा इसी आधार पर बनाया था।

युवक और वृद्ध सभी इस सभा में उपस्थित हुआ करते थे। प्रस्ताव को कमवाच्य कहा जाता था और उसको सभा के समक्ष रख जाने से पूर्व उसकी 'समाप्ति' अर्थात् सूचना। सभा के कोरम इत्यादि के सम्बन्ध में निश्चित नियम थे। इस परिषद को केवल औपचारिक ही नहीं वास्तविक अधिकार थे और अपने अधीन क्षेत्र पर सम्पूर्ण अधिकार इसी का होता था। हर महत्वपूर्ण मामला इस परिषद के सामने विचारार्थ आता था। नये कानून बनाने पुराने कानूनों को बदलने या हटाने का अधिकार इसे था। यदि विचारणीय प्रश्न जटिल होता या किसी प्रश्न पर परिषद के सदस्यों में बहुमत से काफी मतभेद होता तो ऐसे प्रश्न को तय करने के लिए कुछ सदस्यों की एक समिति को सौंप दिया जाता था। यह परिषद राज्य की राजधानी या केन्द्र में होती थी।

भारत में इन प्राचीन गणतन्त्रों के नष्ट हो जाने के बाद भी सभी जगह पंचायतें अपने किसी न किसी रूप में जिन्दा रहीं। इनके कार्यों में शासन का कोई हस्तक्षेप नहीं होता था। ये अपना सारा काय स्वतन्त्रतापूर्वक करती थीं। गांव का प्रबन्ध सुचारु रूप से हो, इसकी जिम्मेदारी ग्रामीण जनता के ऊपर होती थी। पंचों के चुनाव या तो योग्यता के आधार पर अथवा लाटरी द्वारा हुआ करते थे। पंच का पद और पंचों का व्यक्तित्व ही इतना प्रभावशाली होता था कि लोगों के मस्तक श्रद्धा से आप ही झुक जाते थे। पंच परमेश्वर समझा जाता था और पंच का निर्णय ईश्वरीय न्याय। पंचायतों का काय शैली भी सीधी सादी थी। पंचायतें धार्मिक एवं सामाजिक जीवन की प्रेरणा केन्द्र थीं। ब्रिटिश शासन ने सामन्त शाही का पोषण करने तथा समाज के एक विशिष्ट वर्ग का और अधिक उठाने के लिये एवं दलीय लाभ के भूमि कानून बनाकर इस ढांचे का धीरे २ छिन्न भिन्न कर डाला।

भारतीय संविधान और पंचायती राज

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद देश के आर्थिक सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों में अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। इन सबका असर ग्रामीण जीवन पर भी स्वाभाविक रूप से हुआ। जागीरदारी उन्मूलन भूमि सुधार के कानूनों तथा पंचवर्षीय योजनाओं के कारण ग्रामीण जनता में नवीन चेतना जाग्रत हुई। भारतीय संविधान की धारा ४० में पंचायतों के गठन और उन्हें अधिकार देने के बारे में स्पष्ट निर्देश दिये गये हैं। इससे हम यह सोचने समझने के लिए काफी अवसर मिला कि ग्रामीणस्तर पर हम प्रजातन्त्र के किस स्वरूप को चाहते हैं। हमारा उद्देश्य है—लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना। और यह तभी सम्भव हो सकता है जब सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो। इसीलिए हम पंचायतों को सारी योजनाओं का केन्द्र बिन्दु बनाना पड़ा और पंचायती राज की शुरुआत इसी विचार से हुई।

पंचायती राज की आधार शिला—ग्राम सभा

पंचायती राज का उद्देश्य लोकतन्त्र का आधार पहले से अधिक व्यापक बनाना और यह

स्थापित करना है कि लोकतन्त्र में जनता ही सत्ता का सच्चा स्रोत है। ऐसी अवस्था में यह बिल्कुल तर्क सम्मत है कि पंचायतों को गावों की सारी जनता के प्रति ग्राम सभा के रूप में उत्तरदायी रखा जाय। सजग और चेतनाशील लोक सत्ता न होने के कारण आज भी कितनी ही पंचायतों में दलबन्दी पाई जाती है। दलबन्दी से सत्ता की स्वार्थपरता बढ़ती है, जिससे गावों में मन मुटाव का वातावरण सहज ही पैदा हो जाता है। इस स्थिति पर अंकुश रखने के लिए ग्राम सभाओं का आयोजन निश्चित रूप से असीम महत्व का है।

अब यह भली प्रकार अनुभव कर लिया गया है कि पंचायतों के प्रशासन को निर्दोष बनाने तथा लोक शक्ति को अपनी मुख सुविधा के लिए सजग करने का माध्यम केवल ग्रामसभा ही हो सकता है। इसी से हम प्रशासन में कुशलता, अभाव पर विजय, आर्थिक और सामाजिक न्याय की प्राप्ति तथा सुयोग्य नेतृत्व का विकास कर सकते हैं। ग्राम सभा सही मायने में कर्त्तव्य और अधिकारों की अभिव्यक्ति का आधार है। इसके माध्यम से पंचायत, जो स्थानीय जनता की सरकार है, उसे नियन्त्रित, शक्तिशाली और नियमशील बनाया जा सकेगा। ऐसा करने पर ही हम ग्रामस्तर पर सच्ची लोकतन्त्रात्मक सरकार की स्थापना कर सकेंगे। जब तक जनता के प्रतिनिधि जनता के प्रति उत्तरदायी नहीं होते तब तक सच्ची लोकतन्त्रीय सरकार नहीं बन सकती।

कुछ वर्षों पहले सामुदायिक विकास मन्त्रालय द्वारा आयोजित हैदराबाद सम्मेलन में ग्राम सभाओं के सम्बन्ध में अत्यन्त महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये। प्रथम बार ग्राम सभा को वैधानिक मान्यता प्रदान करने की सिफारिश की गई। सम्मेलन ने यह सुझाव दिया कि ग्राम सभा की साल में कम से कम दो बैठकें आयोजित की जानी चाहिए जिनमें बजट, करों के नये प्रस्ताव, तथा पंचायत द्वारा किये गये कार्यों की प्रगति का सिंहावलोकन किया जाये। इस प्रकार जब ग्राम पंचायत को ग्रामीण समुदाय की साधारण सभा के प्रति उत्तरदायी बना दिया जायगा तो पंचायत के सदस्यों की पारस्परिक दलबन्दी तथा स्वार्थपरता शनैः २ स्वतः ही नष्ट हो जायगी।

ग्राम सभाओं का स्वरूप

ग्राम सभाओं का सबसे बड़ा और प्रमुख उद्देश्य है गांव के सारे स्थानीय और प्राकृतिक साधनों का समुचित उपयोग। अतः इसमें गांव की अधिक से अधिक जन शक्ति को सम्मिलित होने के लिए प्रेरित करना आवश्यक है। ग्राम सभा गांव के उन सभी लोगों की सभा है जिनको वोट देने का अधिकार है। ऐसे सभी व्यक्ति इसके सदस्य होते हैं।

ग्राम सभा की सदस्य संख्या के बारे में एक बहुत महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि इसके इतने सदस्य भी नहीं होने चाहिए कि वे एक दूसरे को जान भी न सकें। क्योंकि यदि ऐसा हुआ तो सदस्यों के बीच भावनात्मक एकता स्थापित करना कठिन हो जायगा। इस स्थिति को दूर करने के लिए यदि आवश्यक हो तो एक गांव में मुहल्लों या वार्डों के आधार पर अनेक ग्राम सभाओं का आयोजन भी किया जा सकता है। यदि एक पंचायत क्षेत्र में कई गांव हैं तो उन गांवों में अलग २ ग्राम सभायें भी आयोजित की जा सकती हैं। इस प्रकार एक ही पंचायत क्षेत्र में अनेक ग्राम सभायें आयोजित करने से जहां विचार विमर्श करने में बहुत सुविधा मिल सकती है, वहां कुछ कठिनाइयां भी सामने आ सकती हैं। ये कठिनाइयां

केवल कार्यों की प्राथमिकता को लेकर हो सकती हैं। इसके लिए सबसे आसान उपाय यह है कि जिस निर्णय को ग्राम सभाओं का बहुमत प्राप्त हो उसे ही कार्यान्वित किया जाय और प्राथमिकता भी इसी आधार पर निश्चित की जाय।

राजस्थान पंचायत अधिनियम और ग्राम सभायें

राजस्थान पंचायत अधिनियम और उसके अन्तर्गत बने नियमों के अधीन यह व्यवस्था की गई है कि साल में प्रति ६ माह पंचायत क्षेत्र के समस्त प्रौढ़ निवासियों की दो ग्राम सभायें क्रमशः मई और अक्टूबर में बुलाई जायें। यह बैठक पंचायत के सरपंच या उसकी अनुपस्थिति में उपसरपंच द्वारा बुलाई जानी चाहिए। बैठक का स्थान साधारणतया उस गांव में निश्चित किया जाना चाहिए जहां पंचायत का कार्यालय स्थित हो।

बैठक के दिन तथा समय की सूचना कार्य क्रम की संक्षिप्त रूपरेखा के साथ बैठक होने के कम से कम पन्द्रह दिन पहले निम्नलिखित रूप में प्रकाशित या विज्ञापित करदी जानी चाहिए—

(१) पंचायत क्षेत्र के प्रत्येक गांव में एक या अधिक प्रमुख स्थानों पर चिपका कर तथा

(२) पंचायत क्षेत्र के प्रत्येक गांव में ढोल बजाकर सार्वजनिक घोषणा करके—

ग्राम सभा की बैठक का सभापतित्व सरपंच या उसकी अनुपस्थिति में उप सरपंच द्वारा किया जाना चाहिए। यदि दोनों ही अनुपस्थित हों तो वहां उपस्थित पंचों में से कोई एक जो उपस्थित निवासियों द्वारा चुन लिया जाय ग्राम सभा का सभापतित्व करेगा।

किसी वित्तीय वर्ष में होने वाली इस प्रकार की बैठकों में से पहली बैठक में पंचायत का बजट पेश किया जायगा और उस पर वयस्क निवासियों के विचार लिपिबद्ध किये जायेंगे। दूसरी बैठक में पंचायत द्वारा हाथ में लिये गये निर्माण कार्य क्रमों की जानकारी दी जायगी और उनमें की गई प्रगति से अवगत कराया जायेगा। जिन कार्य क्रमों पर विचार विनिमय होगा उनमें कृषि पशुपालन, स्वास्थ्य, शिक्षा समाज शिक्षा सहकारिता, कुटीर उद्योग आदि प्रमुख हैं।

प्रत्येक ऐसी बैठक की कार्यवाहियों का विवरण हिन्दी में लिखा जायगा और उस पर सभापतित्व करने वाले व्यक्ति के हस्ताक्षर होंगे। इस प्रकार जो विवरण लिखा जायगा उसे सभापतित्व करने वाले सदस्य द्वारा पंचायत की आगामी बैठक में प्रस्तुत किया जायगा। इस प्रकार की बैठक पंचायत क्षेत्र के निवासियों की मांग पर भी बुलाई जा सकती है बशर्ते कि पंचायत क्षेत्र के कम से कम १०० वयस्क व्यक्ति या कुल वयस्क व्यक्तियों के एक चौथाई (जो भी कम हो) लिखकर बैठक की तिथि तथा प्रयोजन सहित अपनी अभियाचना बैठक के निर्धारित दिन से कम से कम बीस दिन पूर्व पंचायत कार्यालय में किसी भी जिम्मेदार व्यक्ति के सामने प्रस्तुत कर दें। यदि ऐसा करने के सात दिन के भीतर भी सरपंच बैठक बुलाने में चूक करे तो अभियाचना या मांग रखने वाले व्यक्तियों द्वारा राजस्थान पंचायत तथा न्याय पंचायत (सामान्य) नियम १९६१ के नियम ६६ के अनुसार जैसा कि पहले बताया जा चुका है तिथि तथा समय की सूचना देकर बैठक बुलाई जा सकती है। ऐसी बैठक उस गांव को छोड़कर जहां पंचायत का कार्यालय स्थित है और कहीं नहीं बुलाई जा सकती।

ग्राम सभाओं के कार्य संचालन का स्वरूप

सामान्यतया ग्राम सभा की बैठक के कार्य संचालन में ये बातें सम्मिलित की जानी चाहिये।

(१) गत ग्राम सभा के विवरण का वाचन

(२) ग्राम सभा की पिछली बैठक में जो निर्णय लिये गये हैं उन पर की गई कार्यवाही का विवरण व सम्पन्न किये गये कार्य पर विचार

(३) ग्राम सभा की बैठक के बाद जो महत्वपूर्ण निर्णय लिए गये हों उनकी जानकारी

(४) प्रश्न करने का समय

(५) आय तथा व्यय का विवरण तथा आडिट आक्षेपों के उत्तर

(६) बजट, करारोपण विभिन्न योजनाएं व कार्यक्रम आदि

(७) ऐसे विषय जो पंचायत समिति जिला परिषद जिला कलेक्टर आदि ग्राम सभा के समक्ष रखना उचित समझें

(८) भूमि वितरण तकावी वितरण व सार्वजनिक योगदान भी ग्राम सभा में ही किया जावे तो ग्राम सभा अधिक प्रभावशाली हो सकेगी।

यह सही है कि राजस्थान पंचायत अधिनियम के अन्तर्गत वर्ष में ग्राम सभा की केवल दो बैठकें बुलाना आवश्यक है। किन्तु लोगों में सहयोग और घनिष्ठता की भावना पैदा करने के लिए ग्राम सभा की अधिक बैठकें होना जरूरी है ग्राम सभा की बैठकें अधिक बार बुलाने से एक बड़ा लाभ यह है कि पंचायतों को अपनी नीति और कार्यक्रम के बारे में ग्रामवासियों को जानकारी देने का मौका बार-बार मिलेगा और परिणाम स्वरूप उन्हें गांव का सहयोग अधिक मिल सकेगा इन ग्राम सभाओं में लोगों को उत्पादन कार्य क्रम की महत्ता बताई जानी चाहिए। आज की सबसे बड़ी आवश्यकता समस्त मानवीय तथा भौतिक साधनों को जुटाने की है। ग्रामीण क्षेत्रों में ग्राम सेवादल निर्मित किए जा रहे हैं। ये सेवा दल ग्राम में उचित वातावरण बनाये रखने, ग्राम लोगों में अनुशासन की भावना बढ़ाने और ग्राम की उत्पादन की क्षमता बढ़ाने में योग दे सकेंगे। ग्राम सभाओं में लोगों को ग्राम सेवा दलों में भर्ती होने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और उत्पादन को सर्वोच्च प्राथमिकता देने पर बल दिया जाना चाहिए। इस दिशा में भरसक प्रयत्न होना चाहिये कि प्रत्येक कुटुम्ब, गांव, खंड, राज्य और देश का उत्पादन बढ़े। इस सम्बन्ध में यह बात खास ध्यान देने योग्य है कि खेती के लिये उपयोगी भूमि सीमित है और इस कारण से हमको मौजूदा भूमि से ही अधिक पैदावार करनी होगी। संक्षेप में, हमारी प्रति एकड़ पैदावार में वृद्धि होना आवश्यक है।

राजस्थान में अधिकतर कृषि प्राकृतिक साधनों पर निर्भर है जिसका परिणाम कभी कभी यह होता है कि कठिन से कठिन परिश्रम करने पर भी उपज का मिलना अनिश्चित सा रहता है। इसके लिए सिंचाई के साधनों द्वारा कृषि के क्षेत्र में स्वावलम्बी होना सबसे पहली आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में राज्य के मुख्य मन्त्री जी के निम्न उद्गार जो उन्होंने पंचायती राज अध्ययन शिविर उदयपुर के उद्घाटन के समय प्रकट किये थे उल्लेखनीय हैं—

पंचायतों व पंचायत समितियों को मदद यह बात ध्यान में रख कर चलना चाहिये कि उनके विकास की जड़ उत्पादन है। उनको यह योजना गावों में क्रियान्वित करनी है। अतः इस कार्य क्रम का सबसे प्रमुख अंग होगा—खेती और पशु पालन। हमारे देश में और हमारे प्रदेश में प्रति एकड़ जमीन में जितनी पैदावार होती है प्रति गाय जितना दूध औसतन होता है या भेड़ों से ऊन पैदा होती है वह दूसरे देशों की अपेक्षा कम है। हम यह देखते हैं कि अपने ही देश में अपनी ही पंचायत अथवा गांव में एक व्यक्ति ज्यादा पैदा करता है जबकि दूसरा कम। आखिर इन सब का कारण क्या है? यदि उत्पादन में भेद है तो अवश्य इसके मायने हैं कि कहीं न कहीं काम करने के तरीकों में कमी है। एक परिवार किस प्रकार अपने साधन व शक्ति के अनुसार उत्पादन बढ़ा सकता है इसको ऊपर बैठा हुआ शासन तय नहीं संभाल सकता। इसके लिये तो जितनी पंचायत या पंचायत समितियां समझदारी और सतर्कता से काम करें उनको उसमें उतनी ही सफलता प्राप्त होगी। मेरी राय में पंचायत राज का प्रमुख कार्यक्रम तो यह है कि उसको अपने गांव के प्रत्येक परिवार की कृषि उत्पादन की योजना बनानी चाहिये जिससे कि जो साधन उस परिवार के पास हैं उनको ध्यान में रखते हुए अच्छे ढंग से खेती करने में कितना उत्पादन बढ़ाया जा सकता है, यह मालूम किया जा सके और इसके अतिरिक्त वहां पर जो सुविधायें उपलब्ध नहीं हैं जैसे सिंचाई के साधन, अच्छे औजार, रासायनिक खाद इत्यादि उसको उपलब्ध किया जाय तो कितना उत्पादन बढ़ा सकते हैं? इस प्रकार की योजना प्रत्येक गांव के लिये बना कर उस पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिये और प्रत्येक वर्ष के लक्ष्य निर्धारित करने चाहिये।'

ग्राम सभा की बैठकें जन प्रशिक्षण कार्यक्रम को पूरा करने में भी सहायक होंगी। वर्ष में कुछ बैठकें केवल जन प्रशिक्षण के उद्देश्य से भी बुलाई जा सकती हैं। इन बैठकों में निम्न विषयों के प्रशिक्षण पर विशेष जोर दिया जाना चाहिए।

(१) पंचायती राज की पृष्ठ भूमि और उसकी स्थापना के कारण

(२) पंचायती राज का स्वरूप अर्थात् पंचायतों, पंचायत समितियों तथा जिला परिषदों का गठन। उनकी सदस्यता कर्त्तव्य और दायित्व।

(३) पंचायती राज की बुनियादी संस्थाएं—पाठशाला, सहकारी समिति और पंचायत में पारस्परिक सम्बन्ध।

(४) ग्राम सभा का महत्व और उसके प्रति पंचायती राज कार्य-कर्ताओं के कर्त्तव्य।

(५) पंचायती राज में स्वैच्छिक संस्थाओं, जैसे नवयुवक मंडल महिला मंडल आदि का स्थान और उनके कर्त्तव्य।

(६) योजना के लक्ष्य।

(७) उत्पादन कार्य क्रम का महत्व, कृषि उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता और उसके उन्नत साधन।

ग्राम सभा और प्रशासनिक अधिकारियों का समन्वय

चूंकि प्रतिनिधि संस्थाएं और प्रशासन दोनों एक दूसरे के पूरक बन गये हैं, इसलिए ग्राम सभा केवल विकास के कार्यक्रमों को कार्य रूप में परिणित करने का माध्यम ही नहीं, बल्कि प्रशासन के स्तर को उन्नत और कुशल बनाने की जनतान्त्रिक पद्धति भी है। अतएव यह आवश्यक है कि जिला स्तर के अधिकारी समय २ पर ग्राम पंचायतों में भाग लेवें। तहसील तथा पंचायत समिति स्तर के अधिकारियों में से तहसीलदार, जंगलात विभाग के रेन्जर, विकास अधिकारी एवं प्रसार अधिकारियों को अधिक से अधिक ग्राम सभाओं में भाग लेना चाहिये। जिला कलक्टर का समय २ पर ग्राम सभाओं में भाग लेना बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। जिला स्तर के अधिकारियों द्वारा ग्राम सभाओं में भाग लेने से जहां प्रशासनिक अधिकारियों को जन मानस के और अधिक समीप आने का अवसर मिलेगा वहां ग्राम सभा को उनकी उपस्थिति में यह लाभ भी होगा कि प्रशासन की कठिनाई के कारण ग्राम सभा के जो कई काम रुक पड़े हैं उन पर भी प्रशासनिक अधिकारी द्वारा शीघ्र निर्णय किया जा सकेगा।

अधिक से अधिक लोगों पर योजना की जिम्मेवारी

यह आवश्यक है कि अधिक से अधिक लोगों पर योजना की जिम्मेवारी डाली जा सके। इसके लिए ग्राम सभाएं अपनी आवश्यकता के अनुसार अलग २ विकास कार्यक्रमों के लिए समितियों का गठन करें। सम्पूर्ण कार्यक्रम के लिए विभिन्न परिवारों के मुखियाओं का कम से कम पांचवा भाग इन समितियों का सदस्य हो जाये। इस प्रकार गांव के अधिक से अधिक लोग किसी न किसी रूप में उत्तरदायित्व ग्रहण कर सकेंगे। इस प्रकार अधिकाधिक जन शक्ति नव निर्माण के लिए संगठित हो सकेगी। ये विभिन्न समितियां ग्राम की आवश्यकताओं और साधनों के आधार पर योजना का निर्माण करेंगी। प्रत्येक परिवार को मानसिक रूप से उसके उत्तरदायित्व का भान करा दिया जायेगा। ग्राम सभा में निर्णय ऐसे लिए जावें, जिनका प्रभाव समस्त सदस्यों की आर्थिक स्थिति पर पड़ता हो और उन भौतिक लक्ष्यों पर विशेष जोर दिया जाये जो स्थानीय साधनों से पूरे हो सकते हों। पंचायत की आय के स्रोत उत्पन्न करने, कर या सामाजिक सेवा आदि के ग्राम साधनों की वृद्धि पर भी विशेष जोर दिया जाय।

जानकारी की सुविधा

पंचायत का काम खुफिया विभाग की तरह गुप्त गति से नहीं चल सकता। पंचायतों को ग्रामीण-जनता का विश्वास सम्पादन करने के लिए यह आवश्यक है कि वे अपनी समस्त कार्यवाही की जानकारी ग्राम सभा के सामने प्रस्तुत करें। पंचायत के निर्णयों का प्रकाशन भली भांति होना चाहिए। पंचायत की कार्यवाही, हिसाब किताब इत्यादि के कागज और रजिस्टर किसी भी ग्राम सभा के सदस्य के निरीक्षण के लिए निश्चित समय व जगह पर उपलब्ध रहने की व्यवस्था होनी चाहिए। कार्यवाही रजिस्टर में सदस्यों के हस्ताक्षर होने चाहिए और उनकी लिखी हुई कार्यवाही को प्रमाणित करना चाहिए। पंचायतों की बैठकों को देखने व सुनने का अधिकार हर व्यक्ति को होना चाहिए। केवल शांति की व्यवस्था ठीक रखने और गुप्त विषयों पर विचार विमर्श के समय श्रोताओं को अलग किया जाय। इस प्रकार पंचायतों को अलग किया जाय। इस प्रकार पंचायतों के कार्यों की अधिक से अधिक जानकारी जनता को कराने का प्रयत्न होना चाहिए।

अनुसरण पद्धति

ग्राम सभाओं में केवल निर्णय लेना ही पर्याप्त नहीं। यह निर्णय किस सीमा तक पंचायतों द्वारा कार्यान्वित किये जाते हैं इस पर ग्राम सभाओं की सफलता निर्भर करती है। इसलिए यह आवश्यक है कि जो निर्णय लिया जाय उसके क्रियान्वयन के लिए समुचित अनुसरण पद्धति (फोलो अप मैथड) अपनाया जाय। ग्राम सभाओं की बैठकों में अनुसरण पद्धति के फलस्वरूप होने वाली कार्य प्रगति की पूरी जानकारी दी जानी चाहिए। पंचायतों द्वारा ग्राम सभा के जो निर्णय पंचायत समिति स्तर पर कार्यान्वित के लिए भेज जायें उनका पूरा करने का दायित्व विकास अधिकारी इस प्रकार के निर्णयों के फलस्वरूप होने वाले कार्यों की प्रगति का विवरण ग्राम सभाओं की बैठकों में स्वयं उपस्थित होकर दे सकते हैं।

ग्राम सभा की बैठकों में लोगों की रुचि कैसे पैदा की जाय

ग्राम सभाओं की औपचारिक बैठकों में अधिकांश ग्रामीणों की रुचि नहीं रहती इस कारण उपस्थिति का बड़ा अभाव रहता है। कई बार तो स्थान का गलत चुनाव भी इसका कारण होता है। इसलिए ग्राम सभा का आयोजन ऐसे स्थान पर किया जाना चाहिए जहां अधिक से अधिक लोग सुविधा पूर्वक पहुंच सकें। सामान्यतया उपस्थिति बढ़ाने के लिए सिनेमा अथवा लाउडस्पीकर पर रिकार्ड इत्यादि बजवाने का प्रयोग किया जाता है। इससे ग्राम सभा अक्सर रंजन या मनोरंजन स्थल के रूप में परिवर्तित हो जाती है और इससे जन मानस को परिवर्तित और प्रेरित करने का उद्देश्य पूरा नहीं हो पाता। यह सावधानी रखना जरूरी है कि न तो ग्राम सभा किसी मेले का रूप ही ले और न एक दूसरे पर कीचड़ उछालने का मंच ही बने। ग्राम सभा को आकर्षक बनाने के लिए उसको सजीव बनाना आवश्यक है और वह सजीव तब ही बन सकती है जबकि गांव वासियों का प्रत्यक्ष लाभ पहुंचाने के लिये उनकी शिकायतों को दूर करने के उपायों पर विचार किया जाय। यह तब ही सम्भव है जब जिम्मेदार अधिकारी मौके पर जाकर उनकी कठिनाइयों का हल उचित तरीके और सहानुभूति पूर्ण ढंग से निकालें। यदि विभिन्न विभागों के जिला अधिकारी और खंड स्तरीय अधिकारी अपने दौरे का कार्य-क्रम सरपंचों से सम्पर्क स्थापित करके बनायें, तो ८० प्रतिशत ग्राम सभाओं में भाग ले सकते हैं। ग्राम सभाओं में जनता को अपनी भावनाएं और विचारों को प्रकट करने की खुली छूट दी जाय और उन्हें प्रश्न करने की पूरी आजादी रहे। ऐसा करने से जब लोगों का ग्राम सभाओं में विश्वास जम जायगा तो फिर वे उसकी बैठकों में लगातार रुचि लेने लगेंगे और उपस्थिति का अभाव नहीं रहेगा।

ग्राम सभाओं का मूल उद्देश्य सामूहिक हितों पर विचार करना होता है। यदि इसके विपरीत लोग ग्राम सभाओं को व्यक्तिगत स्वार्थ निहित प्रश्नों और छिछली आलोचना का मंच बनायें तो एक बड़ी समस्या उठ खड़ी होगी। ग्राम सभा स्थल पर बैठकर ऐसी बातों पर विचार करने में कोई बुराई नहीं है कि किस प्रकार ऋण व अनुदान दिया जाय। तकावी व बीज की सप्लाई कैसे हो। परन्तु उसके साथ ही यदि ग्राम सभा के सभी सदस्यों ने यह नहीं सोचा कि हम और हमारा गांव मिलकर किस प्रकार स्वावलम्बी हो सकते हैं सामूहिक योजना के लिए निर्धारित लक्ष्य कितने कम रुपये में पूरे किये जा सकते हैं तो ग्राम सभाओं का सारा उद्देश्य ही असफल हो जायगा। कई ग्राम सभाओं में सामुदायिक विकास के प्रति

उपेक्षा और निजी स्वार्थो की सर्वोपरि के समाचार भी मिले हैं। जहां स्वावलम्बन का ध्येय था, वहां काश्तकार और अन्य ग्रामीण अब सरकार पर इतने आश्रित हो गये हैं कि जो विकास की शक्ति उनमें पहले थी वह भी खो बैठे हैं। वैसे तो ग्राम सभा में हर एक को अपने विचार व्यक्त करने की स्वतन्त्रता है, हर प्रस्ताव का स्वागत है परन्तु जिन महान् उद्देश्यों के लिए यह सब आयोजन हो रहा है उसके बारे में विचार विमर्श करने में बड़ी विचित्र उपेक्षा देखने को मिलती है। कई बार जो निर्णय ग्राम सभा में लिए जाते हैं उनको भी कार्यान्वित करने का कोई ठोस कदम नहीं उठाया जाता इसलिए यह आवश्यक है कि ग्राम सभा की बैठक में सबसे पहले उन पहलुओं पर विचार किया जाय जिन पर पहले की ग्राम सभा में निश्चय लिया गया था। पंचायत और पंचायत समितियों की एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी यह भी है कि वे ग्राम सभा के निश्चयों को हर माह दोहरायें और क्या प्रगति हुई है इसका विवरण तैयार करें।

ग्राम सभाओं की सफलता की सबसे बड़ी परीक्षा यह होगी कि उसके सदस्यों ने सामूहिक सुविधा के लिए कितने आर्थिक साधन जुटाये और उन साधनों तथा मानव शक्ति का पूरा २ उपयोग सभी परिवारों के बराबर २ लाभ के लिए किस अंश तक हो रहा है।

यदि लोकतन्त्र की इस शक्तिशाली इकाई ग्राम सभा को उचित ढंग से संचालित किया गया तो यह शक्तिशाली संस्था निश्चित रूप से व्यक्ति की गरिमा राष्ट्रीय समृद्धि एवं एकता को अनन्तकाल तक चिरस्थायी बना सकेगी।





ग्राम सभा

ग्राम सभा और उसके दायित्व

—श्री आशुतोष

ग्राम सभा की दृष्टि से विचार करने में यह सम्भव प्रतीत होता है कि १००० से १५०० तक की जन संख्या के द्वारा ग्राम-सभा का गठन आसानी से और सही तरीके से किया जा सकता है और जहां किसी गांव की जन-संख्या अधिक भी है तो ग्राम सभा की मीटिंगें वार्ड वाइज आयोजित की जा सकती हैं। ऐसी वार्ड मीटिंगों को 'उप ग्राम-सभा' नाम दिया जा सकता है। पर अगर कहीं पंचायत के अन्तर्गत कई गांव हैं और उनमें फासला भी अधिक है तो उप-ग्राम-सभा की मीटिंग प्रत्येक ग्राम में अलग से आयोजित की सकती है। पर 'उप ग्राम सभा' की मीटिंग किए जाने का तात्पर्य ग्राम सभा

की मीटिंगें समाप्त कर देना नहीं है बल्कि इसका अर्थ उन सारी कमियों और बुराइयों को दूर कर देना है जो कि ग्राम सभा की मीटिंग में प्राय विशेष ध्यान न दिए जाने के कारण रह जाती हैं।

ग्राम सभा की साधारण अथवा विशेष बैठकों के लिए कोरम

इस बात को ध्यान मे रखते हुए कि अपनी प्रारम्भिक अवस्था मे होने के कारण ग्राम सभा की मीटिंगों म अधिक से अधिक उपस्थिति सम्भव नहीं है ग्राम सभा की साधारण एव आग्रह पर आमन्त्रित विशेष बठक के लिए कोरम के रूप मे एक सामान्य उपस्थिति (सख्या) स्वीकार ली जाये, जो कि पचायत क्षेत्र के वयस्क मतदाताओं का १० प्रतिशत हो सकती है। इससे यह निश्चित हो जाएगा कि ग्राम सभा की मीटिंग स्थगित न होने देने के लिए सरपच उपस्थिति बनाए रखेगा। इसी प्रकार ग्राम सभा की विशेष बठक आयोजित करने के लिए माग करने हेतु भी पचायत क्षत्र के वयस्क मतदाताओं की कुल सख्या का १० प्रतिशत अनिवार्य स्वीकार किया जा सकता है।

ग्राम सभा की ओजस्विता

पचायत को शक्ति सम्पन्न करने का सीधा मतलब अप्रत्यक्ष रूप से ग्राम सभा को शक्ति सम्पन्न करना है। क्योंकि तब ग्राम सभा के सदस्य अपने दनिक जीवन मे अनुभव की जाने वाली बाधाओं और शिकायतों को पचायत के समक्ष रख सकेंगे और उससे पूर्ण सन्तोष प्रद समाधान भी प्राप्त कर सकेंगे। फलत ग्रामवासी ग्रामसभा मे स्वत हो रुचि लने लगेंगे। प्राय ग्रामवासियों का दनिक जीवन म अनुभव का जाने वाली शिकायतें, नौकरशाही के अन्याय, करो सम्बन्धी मुश्किलें, भू आवटन, जगल के उपभोग के अधिकार अथवा विकास योजनाओं की क्रियान्विति जसे कि सिंचाई योजना आदि स सम्बन्धित होती हैं। अत यदि ग्रामवासियों को यह विश्वास हो जाये कि ऐसी किसी भी समस्या या झगडे झझट से छुटकारा दिलान म ग्राम सभा समर्थ है तो निश्चय ही वह अपनी समस्या या शिकायत विचारार्थ ग्राम सभा के समक्ष रक्खेगा भी और परिणामत स्वय उसमे रुचि भी लेगा ही। उधर आज ग्राम सभा में ग्राम वासियों (वयस्कों) द्वारा रुचि न लिए जाने का सबसे बडा कारण भी यही है कि ग्राम सभा उनकी किसी भी तात्कालिक मुसीबत से उनको राहत दने म असमर्थ है। अब तो इतना सा काय करने की आवश्यकता है कि एक तरफ तो पचायत शक्ति सम्पन्न कर दिया जाय और दूसरी ओर ग्रामवासियों को इस विषय की पूर्ण जानकारी प्रदान करके सजग कर दिया जाय, फिर तो वे स्वय ही इस दिशा मे सचेष्ट हो जायेंगे।

ग्राम सभा का निर्णय दातृ-स्वरूप

वसे तो ग्राम सभा की मीटिंगों मे उपस्थित सदस्यो की राय जान कर ही निर्णय लिया जा सकता है। पर जिन राज्यों मे आज 'ग्राम-सभा' का अस्तित्व है उनकी वतमान प्रणाली तो यह है कि व या तो उठे हुए हाथो की गिनती करके, स्थान परिवतन करने या एक मत अथवा कम ज्यादा मतों की जानकारी प्राप्त करके निर्णय लेती हैं। एक सुझाव यह भी है कि यदि एक मीटिंग म राय जानकर निर्णय नहीं लिया जा सके तो मीटिंग स्थगित कर दी जाय जिससे कि हर सदस्य को शान्ति से सोचने का मौका मिल जाय और अगली मीटिंग में सहमति सम्भव हो जाय। पर यदि मतदान द्वारा ही निर्णय

लिया जाता है तो कुल उपस्थिति की दो तिहाई सदस्या का एक मत होना अभिव यत स्वीकार किया जा सकता है।

ग्राम सभा के अधिकार

पंचायत अपने कार्यों और उनका प्रगति के बारे में अपनी त्रैमासिक रिपोर्ट ग्राम सभा के समक्ष प्रस्तुत करे, जिन पर कि ग्राम सभा की मीटिंगो म विचार विनिमय हो तथा किए गए प्रतिवादा व सुझावा का लिखित विवरण हो जिन पर कि पंचायत विचार करे। स्थानीय आवश्यकताओं की दृष्टि से ग्राम सभा को अपनी ओर की तरफ से भी प्रस्ताव रखने की छूट हो। पंचायत को चाहिए कि वह साभार निम्नलिखित मुद्दों पर ग्राम सभा का राय माने और उधर ये ही ग्राम सभा के विचारणीय मुद्दे भी हों —

१ पंचायत द्वारा निर्मित योजनायें और उनका आय व्यय विवरण
२ गाव के लिए उत्पादन वृद्धि-योजना की प्रगति और उसकी क्रियान्विति पर टिप्पणी
३ विभिन्न काय-समितियो की काय प्रगति के बारे म अर्द्ध वार्षिक रिपोर्ट
४ पंचायत की वार्षिक रिपोर्ट और आय-व्यय विवरण
५ पंचायत समिति की वार्षिक रिपोर्ट का संक्षिप्त सार
६ ग्राम स्तरीय कृषि फाम की गतिविधियों के बारे में अर्द्ध वार्षिक रिपोर्ट
७ सामुदायिक विकास के निर्माणाधीन कार्यों की प्रगति पर आधारित अर्द्ध वार्षिक रिपोर्ट
८ मध्यावधि एवं दीर्घावधि ऋणों के उपयोग पर आधारित अर्द्ध वार्षिक रिपोर्ट
९ ग्राम स्वयं सेवक सेना और सुरक्षा श्रम कोष के कार्यों का सर्वेक्षण—

ग्राम सभा पंचायत या पंचायत समिति के किसी विशेष काय की जाच पड़ताल करने अथवा उसका सही समाधान प्रस्तुत करने के लिए भी निवेदन कर सकती है। यह एक नियम हो कि पंचायत या पंचायत समिति अपने क्षेत्र मे कोई भी काय को करने के निमित्त कदम उठाने के पूर्व ग्राम सभा की राय जान लें। संक्षेप म इतना ही कहना काफी है कि पंचायत, प्रत्येक काय के लिए अपने आपको ग्राम सभा के प्रति उत्तरदायी समझे। क्योंकि पंचायत ग्राम सभा की कार्यकारिणी है अत उसके काय और काय प्रणाली निश्चित की जाकर उसे सशक्त बनाने और ग्राम सभा के साथ उसके सम्बन्ध निश्चित कर दिए जाने के प्रतिफल ग्राम सभा को ओजस्विता प्रदान करना होगा।

ग्राम पंचायत की आय व्यय पर ग्रामसभा की स्वीकृति और नियन्त्रण

ग्रामसभा का सबसे महत्वपूर्ण काय पंचायत द्वारा तैयार किए गए वार्षिक आय व्यय विवरण (बजट) पर विचार करना है। जिस किसी राज्य म ग्रामसभा का अस्तित्व कायम हो चुका है वहां आज उनसे इसकी उम्मीद की जाती है। पर पंचायत के द्वारा निर्मित आय-व्यय विवरण कृषि उत्पादन-योजना की भांति ही, सामान्य ग्रामीण व्यक्ति के लिए सुग्राह्य नहीं होता और इसीलिए इसपर विचार करने वाली सभा के लिए यह हर दशा म शास्त्रोक्त या विधि-सम्मत हो गया है। पर यदि किसी भी भांति इस महत्वपूर्ण काय म 'सभा' की रुचि हो ही तो फिर इसे (बजट) सरल से सरल बनाना अनिवाय होगा जिससे

कि ग्रामसभा इसकी यार्थिकता को पूर्ण रूपेण समझ सके और इसपर विचार कर सकें। आय-व्यय विवरण (बजट) पर पहले 'उप ग्राम सभा' की मीटिंग में विचार विमर्श किया जा सकता है तब विचार करने के लिए 'ग्रामसभा' के समक्ष रखा जा सकता है। पंचायत यह भी कर सकती है कि मूल आय-व्यय विवरण के साथ ही साथ उसका सार भी तैयार करले और तब विचार करने हेतु ग्रामसभा के समक्ष रखे। आय व्यय विवरण की प्रतिलिपि सूचना-पट्ट पर भी लगाई जानी चाहिए जिससे कि उसमें रुचि रखने वाले व्यक्ति अथवा समुदाय या अन्य संस्था उसका अध्ययन व मनन कर सकें और सभा की बैठक में विचार करते वक्त अधिक ठोस राय दे सकें। इस प्रकार आय-व्यय को समझ लेना ग्रामसभा सदस्यों के लिए अधिक सहज हो जायगा। इधर वार्ड वाइज की जाने वाली 'उप ग्राम सभा' की मीटिंगों में विचार करने हेतु कृषि-उत्पादन-योजना, सुरक्षा श्रम कोष, ग्राम स्वयं सेवक, सेना तथा स्त्रियों और समुदाय के कमजोर तबकों के उत्थान हेतु योजना आदि रखी जा सकती है।

कार्य-समितियां

कार्य समितियों का मुख्य काम ग्राम सभा को सलाह दाता के रूप का होना चाहिए। इनके सुझाव और राय, विचार विनिमय हेतु पंचायत द्वारा ग्राम सभा के पास अर्पित कर दी जानी चाहिए।

ग्राम सभा में प्रश्न करने के लिए समय

ग्राम सभा के प्राप्त प्रत्येक कार्य ऐसे हैं जिनके बारे में प्रश्न किए जा सकते हैं इसलिए ग्राम सभा की प्रत्येक बैठक में प्रश्न पूछे जाने का एक सुनिश्चित समय हो जब सभा के प्रत्येक सदस्य वहां उपस्थित सरपंच व पंचायताधिकारी अथवा पंचों से प्रश्न पूछ सकने के लिए स्वतन्त्र हो। इस प्रकार ग्राम सभा का विकास समस्या-समाधान कारक संस्था के रूप में हो सकेगा और यदि यह इस प्रकार कुछ ही हल तक सही पर यदि किसी भी समस्या का समाधान प्रस्तुत कर सकी तो यह अपने उद्देश्य को पूर्ण कर लेगी।

ग्राम सभा के अन्य कार्य

ग्राम सभा और कृषि उत्पादन योजना

आज तो देखा यह जाता है कि गांव के लिए कृषि-उत्पादन की जो भी योजना बनती है, न तो उसके बनाने में ही ग्रामीण-जन कोई रुचि लेते हैं और न ही वह योजना सही माने में गांव की कृषि-उत्पादन को बढ़ाने में ही कारगर सिद्ध होती है परिणामतः इस दृष्टि से भी ग्रामीण जन इसमें कोई रुचि नहीं लेते। गांव की कृषि उत्पादन के लिए आज जो ऐसी योजनायें बनती हैं वे किसी भी दृष्टि से गांव के लिए पूर्ण नहीं होती। इन योजनाओं का निर्माण ग्राम स्तरीय कार्यकर्ताओं द्वारा सरपंच व अथवा गांव में नेतागिरी करने वाले कुछ इने गिने लोगों की सलाह के आधार पर कर लिया जाता है।

जहां तक गांव की कृषि-उत्पादन योजना का सम्बन्ध है, ग्राम सभा मुख्य रूप से उन्हीं योजनाओं में रुचि ले सकती है —

१ जो श्रमदान अथवा किसी अन्य विधि से गांव के अतिरिक्त श्रम के उपयोग का मार्ग खोज सके, और

२ साथ ही यह भी देखा जाता रहे कि कृषकों को ठीक समय पर उनकी आवश्यकता के अनुसार, बीज खाद और अन्य साधन उपलब्ध हो रहे हैं [कि नहीं] ।

सहकारी समिति : पंचायत और ग्राम सभा

आज पंचायत और सहकारी समिति जो प्राय प्रत्येक राज्य में अपना अस्तित्व कायम कर चुकी हैं एक दूसरी के साथ मिलकर कार्य नहीं करती हैं। पर यदि पंचायत ग्राम स्तर पर स्थानीय स्वायत्त शासन की इकाई है तो सहकारी समिति भी ग्राम स्तर पर आर्थिक सम्पन्नता प्राप्त कराने व करने हेतु कार्य सम्पादित करने वाली इकाई है। अतः पंचायत और सहकारी समिति के मध्य सहयोग की भावना का होना ही परम अनिवार्य नहीं है बल्कि गांव की सभी योजनाओं और कार्यों के पूर्ण करने में इन्हें एक दूसरी के साथ पूर्ण सक्रिय सहयोग स्थापित करना भी परम अनिवार्य है। इस दृष्टि से ग्राम सभा ही वह कड़ी हो सकती है जो पंचायत और सहकारी समिति के मध्य प्रत्येक कार्य में एक दूसरी से सक्रिय सहयोग लेने की भावना की स्थापना कर सकती है। इसके लिए एक सुझाव है कि पंचायत का सरपंच सहकारी समिति की व्यवस्थापिका का सदस्य हो और उसे ग्राम सभा के प्रतिनिधि के रूप में पक्ष या विपक्ष में अपना मत देने का पूर्ण अधिकार हो।

ग्राम सभा के लिए कार्यपालिका

ग्राम सभा और पंचायत के कार्यों को सुव्यवस्थित रूप देने की दृष्टि से, जिन्हें कि पुनर्रचना के बाद और अधिक कार्य करने पड़ेंगे ग्रामसभा के रेकार्ड की हिफाजत और उसे समुचित मात्रा में सक्रिय रखने के प्रयत्नों को चालू रखने के लिए ग्रामस्तरीय कार्यकर्ताओं और पंचायत सचिव को इस दिशा में भी कार्य करने को कहा जाना चाहिए। यदि हो सके तो ग्राम पंचायत और ग्राम सभा इस हेतु पूरे समय के लिए प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं को नियुक्त भी कर सकती है।

लोक सभा की रचना का आधार ग्राम सभा हो।

—श्री गोविन्दप्रसाद शर्मा

लोकतन्त्र का भवन दृढ़ और अभेद्य हो इसके लिए उसके ऊपरी स्तरों का उसके बुनियादी ढांचे पर खड़ा होना अत्यन्त आवश्यक है। लेकिन इसके विपरीत आज हम देखते हैं कि आधारगत ढांचा केवल जिलास्तर तक ही उठाया जाता है। इसके बाद अथवा राज्य और संघस्तर पर एक बिल्कुल भिन्न ढांचा हमें देखने को मिलता है यह ढांचा अथवा आधुनिक लोकतन्त्र का ढांचा वैयक्तिक और सर्वथा असम्बद्ध मतदाताओं के रूप में बालू के ढेर पर टिका हुआ है। इस स्थिति का परिणाम यह होता है कि देश के मतदाता अपने आपको लोकतान्त्रिक शासन प्रक्रिया से बाहर छोड़ा हुआ समझते हैं। तथा इस प्रकार की धारणा हमारे लोकतन्त्र के लिए ठीक नहीं है। यह किसी भी समय अशुभ स्थिति पैदा कर सकती है। आधुनिक प्रजातन्त्र में लोकसभा की चुनाव प्रणाली के अनुसार देश के मतदाताओं को मतप्रदान करने का अवसर आम चुनावों में अवश्य मिल जाता है वरन् लोकतन्त्र के कार्यान्वयन में उनका कोई योगदान नहीं होता है। अक्सर हम देहात के लोगों से यह सुनते हैं कि हमारे देश में स्वराज्य आया अवश्य, लेकिन अभी वह उनके पास नहीं पहुंच पाया है। उनकी शिकायत है कि उन पर उसी ढंग से और उसी किस्म के लोगों द्वारा शासन किया जाता है जैसा कि ब्रिटिश शासनकाल में हुआ करता था। वे कहते हैं कि स्थानीय स्वायत्त शासन में भी उनका कोई हाथ नहीं है और छोटे से छोटा कर्मचारी भी किसी भी रूप में उनके प्रति उत्तरदायी नहीं है। इसके अलावा वे देखते हैं कि यह छोटे से छोटा कर्मचारी भी ऊपर हुकूमत का रोब मारता है और पुराने शासन की भांति ही उनके साथ व्यवहार करता है। इससे स्पष्ट है कि देश की जनता ने अभी पूर्णरूपेण स्वराज्य को कबूल नहीं किया है। इसके लिए हमारे वर्तमान लोकतन्त्र में लोक सभा की चुनाव प्रणाली जिम्मेवार है। इस प्रणाली के निम्न दोष प्रतिलक्षित होते हैं —

यह प्रणाली अशिक्षित मतदाताओं पर आधारित है इसलिए इस प्रणाली में अनिवार्यतः उच्चस्तर पर सत्ता के केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति आ जाती है। इस प्रकार की प्रणाली में ऐसी कोई शक्ति नहीं होती जो सत्ता का नीचे जनता की ओर खिंचाव कर सके। मतदाताओं के पास, उनकी संख्या चाहे करोड़ों ही क्यों न हो शक्ति का ऊपर की ओर खींचा जाना रोकने के लिए कोई संघटनात्मक साधन नहीं है। कुछ लोगों का मत है कि इसके लिए राजनैतिक दल हैं। यह बात अभी बिल्कुल सही है। लेकिन यह प्रवृत्ति कुछ थोड़े से नेताओं के गुट में सीमित है। इसके अलावा कुछ विशेष स्वार्थ भी होते हैं जिस कारण भी सत्ता का केन्द्रीकरण होना आवश्यक हो जाता है।

२—इस पद्धति के अन्तर्गत कुछेक राजनीतिक दल जो कि संघटित हैं जिनका कि नियंत्रण थोड़े से विशिष्ट लोगों के हाथों में होता है निर्णायक भूमिका होती है।

३—इस पद्धति में मतदाताओं का अपने द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों पर कोई नियन्त्रण नहीं रहता है। इस प्रणाली में मतदाताओं के पास अपने द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों पर नियंत्रण करने का कोई साधन नहीं है। कुछ लोगों का मत है कि यदि नेता लोग उन्हें सन्तुष्ट नहीं करते हैं तो मतदाता उन्हें फिर नहीं चुन सकते हैं। बात सही भी है और नियंत्रण की प्रणाली भी उचित है लेकिन यह बहुत दूरस्थ और प्रभाव हीन ढंग का नियंत्रण है।

इसके अतिरिक्त कुछ व्यक्तियों का कहना है कि जन प्रतिनिधियों के अपने राजनैतिक दल भी उन पर किसी न किसी प्रकार का नियंत्रण रख सकते हैं। लेकिन यहां यह स्पष्ट समझ लेना चाहिये कि दल का नियंत्रण मतदाताओं के नियंत्रण से बिल्कुल भिन्न वस्तु है।

४—इस प्रणाली में देश की जनता का योगदान मत देने तक ही सीमित होता है। दल की कार्यप्रणाली में उनका कोई भाग नहीं होता है जिससे कि उनमें देश की क्रियाओं के प्रति उदासीनता आ जाती है।

५—इस पद्धति में चुनाव अत्यधिक खर्चीले होते हैं तथा चुनाव में विजय प्राप्त करने के लिए बड़े पैमाने पर प्रचार के साधन चाहिए और उस प्रचार में अस्वस्थ मनोवैज्ञानिक और भावात्मक उत्तेजना पैदा हो जाती है जो कि समाज के लिए विषकारक होती है।

६—इस प्रकार की पद्धति का में अधिकांश मतदाताओं के लिए अधिक सम्भावना यही रहती है कि चुनाव के समय में जो प्रश्न उनके सामने रखे जायें उन्हें वे ठीक प्रकार से समझ नहीं पायें। क्योंकि उन प्रश्नों से सम्बधित समस्याओं से उनका कोई सरोकार नहीं होता है।

इस प्रकार उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि हमारा वर्तमान लोकतंत्र अत्यन्त दोषपूर्ण एवं अनुचित ढांचे पर आधारित है। यही कारण है कि अभी तक हमारी जनता को स्वराज्य का सच्ची पूर्ण करने वाली भावना का अहसास नहीं हो पाया है। दूसरे शब्दों में हम यह सकते हैं कि हमारे देश की जनता का हमारी इस राजनैतिक प्रणाली में कोई योगदान नहीं है, हां केवल शिक्षित वर्ग में थोड़े से ही लोगों का और उनमें से भी उनका ही जिनका सम्बन्ध प्रत्यक्ष राजनैतिक क्रिया-कलापों से है कुछ योगदान हमारी लोकतान्त्रिक शासन प्रक्रिया में है।

हमारा आधुनिक लोकतन्त्र जो कि लोक सभा का दोषपूर्ण प्रणाली पर आधारित है एक एक उलट पिरामिड की भांति है, जो सिर के बल खड़ा है। इस उलट पिरामिड से हमारा तात्पर्य ऐसी शासन प्रणाली से है जिसका आधार स्तम्भ तो अत्यन्त कमजोर है और ऊपरी व्यवस्था ज्यादा मजबूत है। इस प्रकार के ढांचे का धराशायी होना कभी भी संभव हो सकता है। इस बात का स्पष्टीकरण यहां एक उदाहरण लेकर किया जा सकता है। मान लीजिए कि कुछ चार या पांच व्यक्ति एक आम के पेड़ से आम खाने के इच्छुक हैं। लेकिन वह पेड़ ऊंचा है। प्रत्येक स्वतन्त्र व्यक्ति उस पेड़ से आम उपलब्ध नहीं कर सकता है। इस कार्य के लिए वे सब एकत्रित होते या सम्मिलित होते हैं या सहयोगी बनते हैं। पेड़ से फल प्राप्त करने का उनकी समझ में केवल एक ही साधन है और वह है एक के ऊपर एक चढ़कर चढ़ने से यानी एक पिरामिड बनाकर वे फल प्राप्त कर सकते हैं। नीचे वाला व्यक्ति कमजोर है और ऊपर वाले मजबूत। ऊपर वाला नीचे वाले व्यक्ति के ऊपर पर रखकर चढ़ जाता है और आम उपलब्ध करके स्वयं ही खाने लग जाता है तथा नीचे वाला व्यक्ति इससे नाराज होकर जरा टेढ़ा पड़ जाता है जिससे कि ऊपर वाला व्यक्ति सभी शक्तियां सहित नीचे आकर गिर जाता है। और इस प्रकार उनका सहयोग का कार्य समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार का बात लोकतन्त्र के साथ भी लागू होती है यदि नीचे वाला व्यक्ति कमजोर है तो ऊपर वाला अवश्य ही एक न एक दिन गिरेगा ही। इसके लिए आधार स्तम्भ अत्यन्त दृढ़ एवं अभेद्य होना चाहिए।

केवल यह तथ्य कि हर वालिग भारतीय को मत प्रदान करने का हक है शासन प्रणाली के पिरामिड को व्यापक आधार नहीं प्रदान कर सकता है। करोड़ों की तादाद में बिखरे हुए व व्यक्तिगत मतदाता बालू कण के एक ऐसे ढेर की भांति हैं जो किसी भी रचना की दृढ़ एवं अभेद्य बुनियाद नहीं बन सकते हैं। इसलिए यदि वास्तविक या कल्याणकारी लोकतन्त्र की स्थापना हमारे देश में करनी है, तो हमें इस बालू के बिखरे हुए कणों को ईंटों का रूप देने के लिए मिलाना होगा या कंकरीट जैसे सांचे में ढालना होगा तभी ये नींव के पत्थर का रूप ग्रहण कर सकेंगे। किसी भी इमारत का उसका रूप कितना ही विशाल क्यों न हो, स्थायित्व उसकी बुनियाद और निचले स्तरों की मजबूती पर निर्भर होता है। यदि इमारत का आधार मजबूत होगा, तो किसी भी ढांचे का किसी साहसिक के धक्के मार से ढहकर गिरने का खतरा नहीं रहेगा। लोकसभा की रचना जोकि वर्तमान लोकतन्त्र का स्तम्भ है ग्राम सभा के आधार पर होनी चाहिए। यह प्रणाली उपरोक्त प्रणाली से बिल्कुल भिन्न है। यह इसलिए कि इस लोकतन्त्र का ढांचा ग्राम सभा के आधारभूत स्तर से शुरू होकर लोकसभा तक कई स्तरों पर होता है और हर स्तर के अधिकार, कार्य कर्तव्य और साधन स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट होते हैं, इसलिए इस पद्धति में सत्ता का विकेन्द्रित होना लाजिमी है। साथ ही ऊपरी स्तर निचले स्तर की संस्थाओं के प्रतिनिधियों का संगठन होने के कारण बजाए ऊपर से नीचे के नीचे से ऊपर की ओर सत्ता लागू किये जाने की सम्भावना रहती है। इस तरह ऊपरी स्तर के प्रतिनिधियों पर निचले स्तर की संस्थाओं की सतत दृष्टि रहती है और इसलिए इन संस्थाओं का उन प्रतिनिधियों पर नियंत्रण भी रह सकता है। यहां यह बात स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि किसी भी स्तर पर ये संस्थाएं तत्वहीन व्यक्तियों का सामूहिक मात्र नहीं होना बल्कि ऐसी सुसंगठित संविधिक संस्था होती है जिनके निश्चित अनुरूप विचार और कर्तव्य होते हैं।

ग्राम-सभा के आधार पर लोक सभा की रचना पर स्थित लोकतन्त्र प्रणाली में निम्नलिखित गुणों का समावेश होता है —

१—इस प्रणाली मे सत्ता के विकेन्द्रीकरण की ओर झुकाव रहता है क्योंकि इस प्रकार के लोकतन्त्र का ढाचा, ग्रामसभा के आधारभूत स्तर से शुरू होकर लोकसभा तक कई स्तरो म होता है और हर स्तर के अधिकार, काय कर्तव्य और साधन स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट होते हैं। इसके अतिरिक्त ऊपरी स्तर निचले स्तर की संस्थाओं के प्रतिनिधियो द्वारा संगठित होने के कारण बजाए ऊपरी स्तर से नीचे नीचे से ऊपर की ओर सत्ता लागू की जाती है।

२—इस पद्धति म प्रथम पद्धति के विपरीत नीचे के स्तर म काम करने वाले समुदाय और सामुदायिक प्रतिनिधि संस्थायें निर्णायक प्रभाव डालती हैं।

३—इस पद्धति म निर्वाचन करने वाली संस्थाए अपने द्वारा ऊपर भेजे गये प्रतिनिधियो पर लगातार नियन्त्रण रखती हैं क्योकि निम्न स्तर की संस्थाओ की सतत दृष्टि उच्चस्तर के प्रतिनिधियो पर रहती है।

४—इस पद्धति मे ग्राम सभा के द्वारा पूरी जनता का प्रत्यक्ष योगदान रहता है और उच्च प्रतिनिधि संस्थाओं द्वारा भी काफी घनिष्ट योगदान रहता है।

५—चुनाव खर्चीले नहीं होते हैं तथा बुराइया कम से कम होने की संभावना रहती है।

६—इस प्रणाली म यह आशा की जाती है कि जो प्रश्न चुनावकाल मे मतदाताओ के सम्मुख प्रस्तुत किये जायें, उनको वे ठीक प्रकार से समझें क्योकि भविष्य म उनको उन प्रश्नो से सम्बन्धित समस्याओ का समाधान करने का प्रयत्न करना पड़ता है।

उपरोक्त दोनों प्रकार की पद्धतियो की तुलना करने के बाद यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि विधान सभा [redacted] आधार पर क्या विधि अपनाई जानी चाहिए जिससे कि लोकतन्त्र की नींव को दृढ एवं अभेद्य बनाया जा सके। इस प्रश्न के उत्तर में हम म निम्न विधि का विवेचन किया गया है —

प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र म प्रत्येक ग्राम सभा नियमित रूप से आयोजित साधारण बैठक में निर्वाचक मंडल के लिए, जिसे निर्वाचन परिषद् भी कहा जा सकता है, इस विधि से दो प्रतिनिधि चुने। इस बैठक म उम्मेदवारी के लिए नाम मांगे जाए और प्रस्तावित तथा समर्थित नामो की सूची यथेष्ट रूप से बैठक रखे श्यामपट्ट पर अंकित की जाए। यदि दो नामो से अधिक का प्रस्ताव न हो तो वे आप से आप निर्वाचित प्रतिनिधि बन जाते हैं। अन्य स्थिति मे प्रत्येक नाम पर मतदान होना चाहिए। यह मतदान हाथ उठाकर होना चाहिए। हर उम्मीदवार द्वारा प्राप्त मतो को श्यामपट्ट पर अंकित किया जाना चाहिए। दो से अधिक उम्मीदवारो की स्थिति म ऐसा मतदान बारम्बार होना चाहिए। और सब से कम मत पाने वाले उम्मीदवारों को छांटते जाना चाहिए। यह विधि चुनाव की अपेक्षाकृत कम खर्चीली विधि है। ज्यों ज्यों ग्राम सभायें बैठकें आयोजित करने बजट पास करने और अन्य सामूहिक निर्णय के रूप म अनुभव प्राप्त करती जायेंगी यह चुनाव पद्धति उनके लिए आसान बात हो जायगी। निर्वाचन कराने म आरम्भ म जो कठिनाइया आयें वे भी पंचायत अध्यक्ष के नेतृत्व मे किए गए पूर्वाभ्यास द्वारा दूर की जा सकती हैं।

यह चुनाव हो जाने के बाद निर्वाचन परिषद आयोजित की जानी चाहिए। क्षेत्र के किसी केन्द्रीय स्थान में विधानसभा या लोकसभा के सम्बद्ध निर्वाचन क्षेत्र की ग्रामसभाओं द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों की बैठक की जानी चाहिए। निर्वाचन परिषदों को निर्वाचन के लिये उम्मीदवारों का मनोनयन करना चाहिए। इसके लिए निम्नलिखित पद्धति अपनानी चाहिए —

सब प्रथम उम्मीदवारों के नाम मांगे जाएं और तब हर प्रस्तावित और समर्थित नाम पर मत (वोट) लिए जाएं। एक निर्धारित प्रतिशत—उदाहरणतया ३० प्रतिशत से अधिक—मत पाने वाले व्यक्ति विधानसभा या लोकसभा के लिए उस निर्वाचन क्षेत्र के उम्मीदवार घोषित किये जाने चाहियें।

लोकतन्त्र की सफलता के लिए, यह लोकतन्त्र चाहे किसी भी प्रकार का क्यों न हो, इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि उसकी प्रविधि में जितना कम मत विभाजन हो उतना ही अच्छा है। अधिक स्पष्ट शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जहां जहां तक सम्भव हो सके, एकतामूलक हो इसलिए विविध शिक्षात्मक और वैधानिक उपायों द्वारा निर्वाचन-परिषदों को एक सीट के लिए एक उम्मीदवार से ज्यादा न खड़े करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाए। आखिरकार अन्तिम रूप में पूरे निर्वाचन-क्षेत्र का प्रतिनिधित्व एक व्यक्ति ही करता है उम्मीदवारों की संख्या चाहे जितनी हो और चुनाव की विधि कोई भी क्यों न हो। यहां अपना तात्पर्य एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र प्रणाली से है। लोकतन्त्र में यह बात बहुत खराब है कि एक बार जो प्रतिनिधि चुन लिया गया और उसका चाहे कितना ही प्रबल विरोध क्यों न हुआ हो, वह पूरे निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। ऐसा मान लिया जाता है कि वह उनकी भी सेवा करता है, जिन्होंने उसका विरोध किया था। यदि निर्वाचन परिषदों को केवल एक ही उम्मीदवार का चयन करने के लिए राजी किया जा सके, तो यह असंगति और व्यय की उत्तेजना तथा बल और पैसे की बर्बादी बचायी जा सकती है। यदि कुछ क्षेत्रों में यह व्यावहारिक न हो, तो ऊपर बताए ढंग से चुने गए व्यक्तियों के नाम उम्मीदवारों के रूप में घोषित कर दिए जाएं और अन्तिम निर्वाचन निम्नलिखित ढंग से किया जाना चाहिए —

निर्वाचन परिषद द्वारा चुने गये उम्मीदवारों के नाम सम्बद्ध निर्वाचन क्षेत्र की सभी ग्राम सभाओं के पास भेज दिए जाएं। फिर हर सभा ग्राम बैठक का आयोजन करे और हर उम्मीदवार के नाम पर मतदान कराया जाए। उसके बाद निम्नलिखित दो विकल्पों में से एक अपनाया जाना चाहिए —

(१) सबसे अधिक संख्या में वोट पाने वाले की घोषणा—ऐसे व्यक्ति के रूप में, जिसे सम्बद्ध 'ग्रामसभा' अपने प्रतिनिधि के रूप में उच्च 'सभा' में भेजना चाहती हो। ऐसे सब व्यक्तियों में से जिसे सभी ग्राम सभाओं में सबसे अधिक मत मिलें उस निर्वाचन क्षेत्र से विधानसभा या लोकसभा (जिसके लिए भी चुनाव हो) का सदस्य घोषित किया जाए।

(२) विकल्पतः प्रत्येक उम्मीदवार द्वारा प्रत्येक ग्रामसभा की साधारण सभा में पाए गए मतों को एकत्रित कर लिया जाना चाहिए। तब प्रत्येक उम्मीदवार द्वारा पूरे निर्वाचन क्षेत्र की विभिन्न ग्रामसभाओं की बैठकों में प्राप्त मतों को जोड़ लिया जाए। इस प्रकार सबसे अधिक मत पाने वाला उम्मीदवार निर्वाचन-क्षेत्र का सदस्य हो जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ग्राम सभा के आधार पर लोकसभा की रचना की चुनाव प्रणाली के द्वारा स्वराज्य की सनसनी की भावना देश के छोटे छोटे गांवो तक पहुच जायगी और हमारे लोकतन्त्र की नींव अत्यधिक ठोस हो जायगी तथा पश्चिम के लोकतन्त्रो से यह भिन्न एवं श्रेष्ठतम होगा। इस तरीके द्वारा हमारी कई मनचाही बातें पूरी हो जायेंगी। प्रथमत यह है कि लोकतन्त्रीय ढांचे के ऊपरी स्तर को रचनात्मक ढग से नीचे के स्तर से सम्बद्ध कर देना और ग्रामसभाओ को स्थानीयता के दलदल से उठा कर उसमें प्रतिष्ठा शक्ति और सोद्देश्यता प्रदान कर देगी। दूसरे यह कि प्रत्येक वालिग नागरिक को लोकतन्त्र की ऊंची से ऊंची संस्थाओ के निर्वाचन मे योगदान करने का अवसर मिलता है और वे यह कार्य संगठित रूप मे ग्राम सभाओ और निर्वाचन परिषदो द्वारा करते हैं जिससे वे अपने प्रतिनिधियो पर उपयुक्त प्रभाव डाल सकते हैं। सर्वोदयी नेता श्री जयप्रकाशनारायण ने इस सम्बन्ध मे कहा है 'कि इस रूप मे व्यक्तिगत मतदान बालू के कणो की तरह बिखरे हुये और असहाय न होकर पत्थर के दृढ़ खण्ड बन जाते हैं। पत्थर के खण्डो की नींव पर बना हुआ मकान बालू पर बने मकान से भिन्न होता है।"



सुड-५



पंचायती राज की वित्त-व्यवस्था



संथानम् समिति के संदर्भ में पंचायती राज की वित्तीय व्यवस्था का सिंहावलोकन

—श्री हरिपाद आर० सुब्रमण्य अय्यर

★

● बलवन्तराय मेहता समिति की नियुक्ति पिछले वर्ष इस बात के लिए हुई थी कि पंचायती राज के कामकाज का विस्तृत अध्ययन कर के ऐसे उपाय सुझाए जाएं जिससे पंचायती राज संस्थाओं की ईमानदारी भी बनी रहे और उनकी वित्तीय स्थिति भी मजबूत हो जाए। समिति कानून में संशोधन करने के सुझाव भी दे सकती थी। यदि समिति की सिफारिशों पर सही ढंग से अमल किया गया तो उनका देश में पंचायती राज के विकास पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। इस समिति की दो महत्वपूर्ण सिफारिशें इस प्रकार थीं—

(क) राज्य सरकार और पंचायती राज संस्थाओं के वित्तीय सम्बन्ध ऐसे ही होने चाहिएं जैसे कि आजकल केन्द्रीय और राज्य सरकारों के हैं।

ख) राज्यों में लगान से जितनी भी आमदनी हो, वह पंचायती राज्य संस्थाओं के लिए रख दी जाए।

उपर्युक्त सिफारिशों में जिस दिशा की ओर इंगित किया गया है उनसे के० सन्थानम् अध्ययन टोली की सिफारिशों को ही बल मिलता है। इस टोली की नियुक्ति पंचायती राज के वित्तीय साधन बढ़ाने के प्रश्न पर विचार करने के लिए की गई थी।

यह देखना अभी बाकी है कि केन्द्रीय सरकार इन सिफारिशों को कहाँ तक और किस रूप में स्वीकार करती है परन्तु इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि वित्तीय साधनों की कमी के कारण पंचायती राज संस्थाओं के कामकाज में बहुधा बाधा पहुँचती है।

भारत में, और खास कर गावों में स्थानीय स्वशासन की संस्थाएँ सदा से ही गरीब रही हैं। पंचायती राज संस्थाओं के कामकाज का पंचायतों की वित्त व्यवस्था से घनिष्ट सम्बन्ध है। इसलिए उनकी वित्त समस्या पर विचार करते समय उनके कामकाज पर विचार करना भी जरूरी हो जाता है। भारतीय संविधान की एक खास बात यह है कि उसमें केन्द्रीय और राज्य सरकारों के वित्तीय सम्बन्धों का स्पष्ट वर्णन है। इसके अनुसार केन्द्रीय राजस्व के साधनों का केन्द्र और राज्यों में बटवारा किया गया है। परन्तु स्थानीय निकायों का उल्लेख कहीं नहीं है। इसलिए इन निकायों को भी अधिकांशतया उन्हीं साधनों पर निर्भर रहना पड़ता है जो राज्यों के लिए निर्धारित हैं। इसके अतिरिक्त पहले इन स्थानीय निकायों को कर लगाने के बहुत से अधिकार प्राप्त थे। परन्तु उन्हें अब राज्य सरकारों ने छीन लिया है। स्थानीय वित्त जांच आयोग ने सिफारिश की थी कि करों से कुछ निश्चित साधनों से प्राप्त आय तो पूरी तरह स्थानीय संस्थाओं को ही सौंप दी जाय या उन्हीं के लिए तय कर दी जाए। दूसरे शब्दों में हमें संयुक्त राज्य अमरिका में प्रचलित प्रणाली अपनानी चाहिए जहां स्थानीय संस्थाओं के अपने ही अलग साधन होते हैं।

लोकतन्त्री विकेन्द्रीकरण के बारे में एक प्रमुख सिफारिश यह थी कि पंचायती राज संस्थाओं को सच्चे अर्थों में सत्ता और उत्तरदायित्व सौंपे जाएं और साथ ही उन्हें पर्याप्त वित्तीय साधन भी सौंपे जाएं ताकि वे अपनी जिम्मेदारियां ठीक से निभा सकें। परन्तु ऐसा अब तक भी नहीं किया गया। हर राज्य में पंचायती राज संस्थाओं के वित्तीय साधनों का ढांचा भिन्न भिन्न है। पंचायती राज योजना लागू होने से कई समस्याएं पैदा हो गई हैं और इनमें सबसे बड़ा है वित्तीय साधनों का अपर्याप्त होना। पंचायती राज के श्रीगणेश के साथ ही देहाती इलाकों के अधिकांश विकास कार्यक्रम पंचायती राज संस्थाओं को सौंप दिए गए हैं। यह दोहराने में कोई फायदा नहीं कि पंचायती राज संस्थाओं के साधन बहुत सीमित और अनमनीय हैं। इनके अतिरिक्त स्थानीय संस्थाएं भी मकान कर व्यवसाय कर वाहन कर आदि लगाने में बहुत हिचकिचाती हैं यद्यपि इन्हीं से ही स्थानीय संस्थाओं की आमदनी बढ़ती है। यह स्थिति वास्तव में निराशाजनक है परन्तु मोटे तौर पर इसका कारण यही लगता है कि गांव वाले आर्थिक दृष्टि से बहुत पिछड़े हुए हैं। गरीबी के कारण गांव वाले भी इस स्थिति में नहीं होते कि कर दे सकें और स्थानीय संस्थाएं भी कर लगा कर अपनी आमदनी नहीं बढ़ा सकतीं। धन एकत्र करने के अन्य साधन भी थोड़े से ही हैं। इसलिए पंचायती राज संस्थाएं चक्कर में पड़ जाती हैं कि अपनी भारी जिम्मेदारियों को किस तरह निबाहें। इनके अतिरिक्त कई और भी कठिनाइयां होती हैं। पंचायती राज संस्थाओं के गैर सरकारी अधिकारियों में ईर्ष्या और होड़ की बहुत भावना रहती है जिसका बुरा प्रभाव उनके कामकाज और विचारों पर पड़ता है। कर निर्धारण करने और लगाने में भेदभाव के वृत्त-से मामले आते रहते हैं। परन्तु सब से बुरी बात यह है कि निर्धारित कर को वसूल नहीं किया जाता। इसी कारण देश की स्वायत्त शासन की प्राय समस्त संस्थाओं की बकाया करों की भारी रकम पड़ी रहती है। भारी मात्रा में करों के बकाया रहने का एक कारण तो यह है कि बकाया कर वसूल करने वाले कर्मचारी समय पर कर वसूल करने में ढील दिखाते हैं और दूसरे ऊंचे अधिकारी दोषी लोगों को सजा

दन म हिचकिचाते है। इसके अतिरिक्त कर्मचारीगण आमतौर पर अकुशल होते हैं और उच्च अधिकारी प्रभावकारी ढग से उनकी देखभाल नहीं करते। इसका परिणाम यह होता है कि पचायती राज सस्थाम्रा म कर वसूल करने का काम बडे असतोष जनक ढग से होता है। फिर कर निर्धारण की वतमान प्रणाली भी दोष पूर्ण है। कर निर्धारण का काम तकनीकी होता है और यह काम अपने विषय का अच्छी तरह समझन वाले विशेषज्ञ ही कर सकते हैं। साथ ही ऊचे अफसरो को भी बडी देखभाल रखनी चाहिए। दुर्भाग्यवश आज इन सभी बातो का अभाव है। इस स्थिति मे सुधार तभी हो सकता है जब कार्यकारी अधिकारी खुद व्यक्तिगतरूप स कर उगाहने का जिम्मेदारी उठाए और बकाया वसूल करन के लिए भी कड़े कदम उठाए जाए और तत्काल कार्रवाई की जाये।

सथानम समिति की एक मुख्य सिफारिश यह थी कि पचायती राज वित्त निगम की स्थापना की जाए जो आमदनी देने वाले कामो के लिए कर्ज दे जसे मण्डी दुकानो थियेटरो होटलो आदि का निर्माण। परन्तु कुछ राज्य सरकारें और जीवन बीमा निगम प्रस्तावित निगम से सम्बन्ध जोडन म हिचकिचा रहे हैं। हाल मे केन्द्रीय सरकार न दो या तीन राज्यों मे प्रयोग के तौर पर पचायती राज निगम बनान का फसला किया है। जब ये सफलतापूवक कामकाज करन लगेंगे तो अन्य राज्यो म भी इनकी स्थापना की जायगी। यद्यपि सथानम समिति न सिफारिश की थी कि मकान कर व्यवसाय कर और वाहन कर पचायतो द्वारा लगाए जान वाले अनिवार्य कर होने चाहिए परन्तु हमने देखा है कि दुर्भेक राज्यो म अधिकारीगण ये अनिवार्य कर लगान मे हिचकिचाते हैं क्योकि उनके गाव वालो का आर्थिक दशा बहुत पिछडी हुई होती है। इस तरह वतमान परिस्थितियो में यह बहुत सदेहजनक ही है कि स्थानीय अधिकारी सथानम समिति की इस सिफारिश को मान लेंगे। दूसरे आमतौर पर गाववालो की मनोवृत्ति यही रहती है कि कर न चुकाए जाए क्योकि उन्हे कर चुकाने और बदले म होने वाले लाभो म कोई सम्बन्ध दिखाई नही दता। इसलिए जब तक गाववाल कर चुकाने का विरोध करते रहेंगे तब तक सथानम समिति की सिफारिश से उक्त समस्या सुलझेगी नहीं। जब तक इस विरोध को दूर नहीं किया जाएगा तब तक कर न तो प्रभावकारी ढग से वसूल ही किये जा सकेंगे और न ही उनस पचायती राज सस्थाम्रो के वित्तीय साधनो म कोई वृद्धि होगी। जो लोग कर चुकाते हैं उन्हे उनका प्रत्यक्ष लाभ मिलना ही चाहिए। जब ये प्रत्यक्ष लाभ मिलन लगेंगे तब लोग कर चुकात समय इतनी हील हुज्जत नहीं करेंगे। ऐसा तभी होगा जब कुछ खास कामो के लिए कर लगाए जाए और करो से प्राप्त रकम उन्ही खास कामो पर खर्च की जाए। स्थानीय वित्त व्यवस्था की यह एक खास बात होती है।

सच बात तो यह है कि यदि स्थानीय अधिकारी गाववालो स कर वसूल नहीं कर पाएंगे, तब पचायती राज सस्थाए भी कुशलतापूवक और प्रभावकारी ढग से काम नहीं कर सकेंगी। सरकार का यह उद्देश्य होना चाहिए कि पचायती राज सस्थाओ के हाथ मजबूत करे ताकि गाववालो की आर्थिक और सामाजिक दशा सुधारी जा सके। इस परिस्थिति म महता-समिति कि यह सिफारिश देखकर प्रसन्नता होती है कि केन्द्रीय सरकार को ही पचायती राज सस्थाओ की मदद करनी चाहिए क्योकि आजकल राज्य सरकारों की वित्तीय स्थिति ऐसी नहीं है कि व पचायती राज सस्थाम्रो को समुचित अनुदान दे सकें।



पंचायती राज वित्त निगम

संगठन, स्वरूप और दायित्व

※

—श्री रेवाशङ्कर

आज देश के लगभग सभी राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं का जन्म हो चुका है और अपने अपने तरीके से ये सभी आगे बढ़ रही हैं किन्तु सभी राज्यों में आज इन संस्थाओं के समक्ष वित्तीय साधनों का अभाव एक प्रश्न चिह्न बना हुआ है और सरकारी अनुदान तथा ऋणों के पोषण से यह संस्थायें किसी तरह अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं। यद्यपि संबंधित कानूनों में पंचायतों पंचायत समितियों तथा जिला परिषदों के लिए अपने अपने क्षेत्रों में नए कर लगाकर वित्तीय साधन जुटाने के प्रावधान रखे हुए हैं किन्तु अपने ही क्षेत्र में कर लगाकर लोगों की तीखी आलोचना तथा असंतोष का खतरा मोल लेकर साधन जुटाने के लिए बहुत ही थोड़े जन प्रतिनिधि तैयार हो पाते हैं। नए कर लगाने की तो बात ही दूर रही मौजूदा करों की वसूली भी उतनी कड़ाई से नहीं की जाती जितनी अपेक्षित है और इसी का परिणाम है कि पंचायतें तथा पंचायत समितियां सदा ही साधनों की कमी का रोना रोती रहती हैं। राजस्थान में तो अनेक पंचायत समितियों के समक्ष अपने कर्मचारियों को समय पर वेतन चुकाने में भी कठिनाइयाँ उपस्थित होती रहती हैं। उधर जो भी रकम राज्य सरकार से पंचायत समितियों को अपने

क्षेत्र म पचायतो की मारफत खच करने के लिए अनुदान अथवा कर्जो के रूप म मिलती हैं उन्हे वितरित करन मे राजनीतिक दृष्टिकोण अपनाये जाने तथा पक्षपात से काम लेने के कारण स्थिति और भी बदतर हो जाती है। कहीं आवश्यकता से भी अधिक रुपया पहुँच जाता है, तो कभी अनिवाय खर्चों के लिए भी रुपया नहीं होता। परिणाम यह होता है कि साधनो का वितरण न्यायपूर्वक नहीं होता और विकास की प्रगति समान रूप से नहीं हो पाती है।

समस्या का एक पहलू और भी है। राज्य सरकारो द्वारा जिला परिषदो पचायत समितियो तथा पचायतो को दी जाने वाली रकमों की भी आखिरकार अपनी मर्यादा होती है। सीमित रकम को समूचे राज्य की इन सस्थाओं मे वितरित करने पर प्रत्येक लोकतान्त्रिक इकाई के हिस्से मे इतनी थोड़ी राशि आती है कि उससे सबधित क्षेत्र के विकास की योजनायें आशिक रूप से भी पूरी नहीं हो पाती हैं। इस प्रकार वित्तीय साधनो की कमी तथा उपलब्ध राशियो के असमान एव पक्षपात पूर्ण वितरण की जो स्थितियाँ पिछले वर्षों मे सामने आई हैं उन्होने पचायती राज की सफलता को ही सदिग्ध बना दिया है, ऐसा कहना अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा। यही कारण है कि भारत सरकार ने पचायती राज की उपलब्धियो के अध्ययन के लिए जो समिति नियुक्त की थी उसने अपनी रिपोर्ट (१९६३) म यह महत्व पूर्ण सिफारिश की है कि इन स्वशासन सस्थाओ को ऋण और अनुदान दिय जान का काम किसी ऐसे स्वतन्त्र वित्तीय सगठन को सौंपा जाना चाहिए जिसके पास अपने भरपूर साधन भी हो और जो इस काम को निष्पक्षता पूर्वक भी कर सके। समिति ने अपनी रिपोर्ट (पृष्ठ सख्या ३७) मे कहा है —

'हमारी यह दृढ धारणा है कि पचायती राज सस्थाओ को अपनी योजनाओ के लिए दिए जाने वाले ऋण राज्य सरकार के विभागो द्वारा पूरी तरह नहीं दिये जा सकते हैं, और जहाँ यह पर्याप्त मात्रा म दे भी दिये जात हो वहा भी यह उपयुक्त होगा कि ऋण वितरण का यह काम किसी स्वतन्त्र वित्तीय सस्था की मारफत किया जाय जो शुद्ध रूप से वित्तीय सगठन के रूप मे काम करे और किसी भी तरह के राजनीतिक दबाव से भी मुक्त रह सके।

पचायती राज वित्त निगम

समिति ने अपनी रिपोर्ट मे केवल यह सुझाव देकर ही अपने कर्तव्य की इति श्री समझ ली हो ऐसी बात नहीं है। उसने कहा है कि प्रत्येक राज्य मे एक पचायती राज वित्त निगम का गठन किया जाना चाहिए जिसके लिए पूँजी की व्यवस्था राज्य सरकारो तथा इन सस्थाओ के मिले जुले साधनो से की जानी चाहिए। उक्त निगम की अधिकृत पूजी के सबध म राज्य सरकार को निर्णय करना होगा और यह एक करोड से पाँच करोड रुपयो के बीच म निर्धारित की जा सकती है, इस पूँजी को जुटाने के लिए सौ सौ रुपये के हिस्से जारी किए जा सकत हैं जो निम्न प्रकार खरीदने के लिए दिए जा सकते हैं —

	प्रतिशत
(१) पचायतें, पचायत समितियाँ तथा जिला परिषदें	२०
(२) राज्य सरकार	२०
(३) केन्द्रीय सरकार	२०
(४) रिजर्व बैंक आफ इंडिया, जीवन बीमा निगम	२०
(५) सहकारी बैंक अनुसूचित बैंक, बीमा कपनियाँ तथा राज्य म काम कर रही अन्य वित्तीय सस्थायें	२०

यदि प्रत्येक पचायत को एक शेयर तथा पचायत समिति और जिला परिषद के लिए १० से १०० हिस्से रखे जावें तो वे आसानी से यह खरीद सकती है। राज्य सरकार को इस बात की गारटी तो लेनी ही पड़ेगी कि निगम मे लगाई गई मूल रकम तथा न्यूनतम डिवीडेंड निश्चित समय पर मिल सकेंगे। निगम के हिस्सो को स्वीकृत प्रतिभूतियो (सिक्यूरिटीज) की सहम दी जाए। निगम को यह भी अधिकार दिया जाए कि वह अपनी कार्यशील पूजी को बढाने के लिए समय समय पर बांडस तथा डिबेंचर भी जारी कर सकेगा और सरकार इनको गारटी करेगी।

सचालक मडल

निगम के सचालक मडल का गठन निम्न प्रकार से होना चाहिये —

(१) प्रबन्ध सचालक की नियुक्ति रिजर्व बैंक की सलाह से राज्य सरकार करेगी।

(२) राज्य सरकार केन्द्रीय सरकार तथा रिजर्व बैंक द्वारा एक एक सचालक (कुल तीन) नाम जद किये जायेंगे।

(३) दो सचालक, एक तो जिला परिषदो के अध्यक्षो द्वारा तथा एक पचायत समितियो के प्रधानो द्वारा निर्वाचित होंगे।

(४) एक सचालक उन अन्य सस्थाओं द्वारा चुना जायगा जिनका उल्लेख पाचवी श्रेणी मे किया गया है।

निर्वाचित सचालकों का कार्यक्रम जहा चार वर्ष का होगा वहा नामजद किये गये सचालक उस समय तक बने रहेंगे जब तक कि उन्हें नामजद करने वाली सस्थाये जारी रखना चाहे।

सचालक मडल का अध्यक्ष राज्य सरकार द्वारा नामजद किया जायगा पर वह प्रबन्ध सचालक से भिन्न होगा।

निगम पचायत पचायत समिति अथवा जिला परिषद को उन सभी कामो के लिए ऋण दे सकेगा जिनका उल्लेख पहले किया जा चुका है इसकी अवधि ५ से २५ वर्ष तक सम्बन्धित योजना के लिए आवश्यक समय के अनुसार हो सकती है। निगम को ऐसे विशेषज्ञो के प्रशिक्षण का काम भी हाथ मे लेना चाहिए जो पचायत राज सस्थाओ द्वारा समय समय पर हाथ मे ली जाने वाली उन योजनाओ के सम्बन्ध मे तकनीकी मार्ग दर्शन दे सकें जिनके लिए इस निगम से ऋण लिए गये हैं।

उक्त निगम के गठन की योजना का सुझाव सभी दृष्टियो से सर्वथा उपयुक्त तो है ही पचायती राज की सफलता के लिए यह अनिवार्य भी है। यही कारण है कि सभी राज्य सरकारो ने इसे न केवल सिद्धान्त रूप से स्वीकार ही किया है बल्कि इसका स्वागत भी किया था किन्तु निश्चय ही यह बात निराशाजनक ही मानी जायगी कि अभी तक कहीं से भी इस योजना को कार्यान्वित किये जाने के सकेत नहीं मिले हैं।

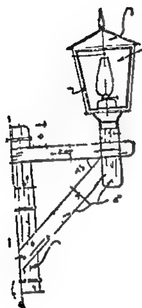
लाभ देने वाली योजनायें

अपने अपने क्षेत्र मे आमदनी वाली अनेक योजनायें पचायतों द्वारा हाथ म ली जा सकती हैं इस प्रकार के प्रयोग उडीसा म किये गये हैं, किन्तु इनके लिए वित्तीय साधन जुटान का काम भी कम कठिन नहीं है। राज्यो के स्तर पर अथवा केन्द्रीय सरकार में, ऐसा कोई वित्तीय सस्था दिखाई नहीं देती जो इस प्रकार की योजनाओ के लिए पचायती राज सस्थाओ को रुपया दे सके। इस जिम्मेदारी को उपरोक्त निगम ही उठा सकता है। राज्य सरकारें इस निगम को जन्म देने के लिए राज्य वित्त निगम अधिनियम की तरह ही कानून बनाकर इस दिशा म आगे बढ सकती हैं।

सस्थाए पहल करे

यह तो सही है कि राज्य सरकारा ने इस दिशा म अभी तक कोई पहल नहीं की है किन्तु इसस भी अधिक आश्चर्यजनक बात तो यह है कि अध्ययन दलकी स्पष्ट सिफारिश और उसके पूरे स्वरूप पर प्रकाश डाले जाने के बाद भी स्वय उन सस्थाओ की ओर से भी ऐसा कोई पुरजोर प्रयत्न इस दिशा म नहीं किया गया जान पडता है जो इस योजना के कार्यान्वित होने पर लाभान्वित होन वाली है। यह बात असदिग्ध रूप स कही जा सकती है कि यदि पचायती राज सस्थाये तथा उनके सघीय सगठन इस दिशा म सक्रिय होकर सरकार पर दबाव डालें तो इस प्रकार के निगम अथवा वित्तीय सस्था का गठन शाघ्र ही अस्तित्व म आ सकता है।





पंचायती राज के आय के साधन और व्यय के प्रावधान

भारत के संविधान में राज्यों के लिए स्पष्ट रूप से इस बात का उल्लेख किया गया है कि वे ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर होंगे तथा उन्हें ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान करेंगे जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में सफलतापूर्वक कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों। स्पष्ट है कि इस निर्देशक सिद्धांत के अनुसार पंचायतों को कम से कम इतना समर्थ बनाने की कल्पना तो की ही गयी थी कि वे गांव की स्वतन्त्र प्रशासनिक इकाई के रूप में खड़ी हो सकें गांव की विकास योजना बना सकें तथा उसे अपने ही बल पर क्रियान्वित भी कर सकें। गांव की योजना के आकार और स्वरूप के लिए सरकार के निर्णयों की प्रतीक्षा तथा उन्हें मूर्त रूप देने के लिए सरकार की कृपा पर निर्भर रहने की स्थिति जो दुर्भाग्यवश आज भी बनी हुई है, असंदिग्ध रूप से उपरोक्त निर्देशक तत्व के प्रतिकूल है यह सभी स्वीकार करेंगे। इस पृष्ठभूमि में पंचायतों की आय के साधनों तथा व्यय के प्रावधानों सम्बन्धी पहलुओं का अत्यधिक महत्व है क्योंकि लोकतन्त्र की इस बुनियादी इकाई को आत्म निर्भर बनाने के लिए यही मुख्य मुद्दे हैं।

विभिन्न राज्यो की स्थिति

पचायतों की आय के साधनो को मुख्य रूप से चार भागो मे विभाजित किया जा सकता है —(१) अपने साधन (२) सरकार से प्राप्त राजस्व (३) अनुदान तथा (४) ऋण। पचायतो के अपने साधनो को भी चार भागो म बाटा जा सकता है—(अ) अनिवार्य कर (ब) ऐच्छिक कर (स) शुल्क तथा (४) अन्य आय जसे कि लाभ के लिए किये जा रहे धधो से प्राप्त रकम आदि। यद्यपि आयके साधनो का स्वरूप सभी राज्यो म लगभग एक सा ही है फिर भी कहीं कहीं एक राज्य की स्थिति दूसरे से थोडी भिन्न होती है। लगभग सभी राज्या म पचायता को भू राजस्व मे से कुछ भाग मिलता है या कहीं कही लगान पर सस लगाये जाने की भी व्यवस्था की हुई है। पचायता को अनेक प्रकार के अनिवार्य तथा ऐच्छिक कर लगाने के भी अधिकार प्राप्त हैं। अनिवार्य करा म मुख्यत सम्पत्ति तथा व्यवसाय पर लगाये जाने वाले कर उल्लेखनीय हैं। वाहनों पर लगाये जाने वाले कर लगभग सभी राज्यो म ऐच्छिक ही हैं। अन्य साधनों की श्रेणी मे वे सभी रकमे आती हैं जो आवारा पशुओ को बन्द करने के बाडा बाजारा कसाईखाना आदि से प्राप्त होती हैं। सिवाय चक की जमीनो तथा मछली पालन सम्बन्धी कार्यों से होने वाली आमदनी भी पचायता के विभिन्न आय स्रोतो म से मुख्य होती है। कानून के अन्तगत विभिन्न प्रकार के लाइसेंस जारी करके भी पचायतें कुछ राशिया प्राप्त कर लेती हैं। कुछ राज्या मे पचायतो के लिए आय के और भी अतिरिक्त साधन रख गये हैं उदाहरण के लिए मद्रास तथा आन्ध्र म सम्पत्ति के हस्तातरण पर अधिकार का प्रावधान है जो पचायता को मिलता है। मद्रास म पचायता को गृह-कर द्वारा एकत्रित राशि के बराबर राज्य सरकार से अनुदान दिये जाने का प्रावधान है। कहीं कहीं मनोरंजन कर म से भी पचायता को अनुदान दिये जाने का प्रावधान रखा गया है। राज्य सरकारें केवल विकास योजनाओ के लिए ही पचायता को अनुदान नहीं देती बल्कि उनकी उपलब्धियो तथा कुशल काय संचालन को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से भी कुछ रकमे देती हैं। राजस्थान तथा पजाब मे उन पचायतो को विशेष अनुदान दिये जाते हैं जिनके अधिकाश सदस्य निर्विरोध चुनकर आते हैं। महाराष्ट्र म पचायतो को राजस्व वसूली म विशेष योगदान पर भी अनुदान दिये जाने का प्रावधान रखा गया है।

राजस्थान मे आय के स्रोत

राजस्थान मे पचायतो की आय के साधन मुख्य रूप से तीन भागा मे बाँटे जा सकते हैं जो निम्न प्रकार हैं —

(अ) राज्य सरकार से अनुदान—

२० पसे प्रति व्यक्ति के हिसाब से पचायत को सरकार से अनुदान मिलता है पर यह राशि अधिक से अधिक ४००) रुपये होती है। इसका उपयोग सामान्य व्यवस्था खच म किया जाता है।

(ब) पचायतों द्वारा लगाये जाने वाले कर—

(१) गृह-कर

विभिन्न राज्यो मे अनेक कर

ऊपर बताये गए कर जहाँ लगभग सभी राज्यो म लिये जाते हैं वहाँ कुछ कर केवल कुछ ही राज्यो म ही वसूल किये जात हैं। आन्ध्रप्रदेश के कुछ जिलो की पचायतें अपने क्षेत्र मे बिकने वाली चीजो पर तोल और नाप के आधार पर कर वसूल करती हैं। मसूर गुजरात, महा राष्ट्र तथा राजस्थान म पचायतो को चुगी लेने का अधिकार प्रदान किया हुआ है, पर यह पचायतों की इच्छा पर है कि वे इसे लगायें या न लगायें इसी प्रकार महाराष्ट्र गुजरात जम्मू और काश्मीर, राजस्थान तथा बिहार मे पचायतो को तीर्थ यात्री कर लगाने का अधिकार भी दिया हुआ है, पर यह केवल उन्ही स्थानो पर लगता है जहा धार्मिक तीर्थ स्थान हैं। जम्मू और काश्मीर म पचायतो को जान-वरो पर भी कर लगाने का हक प्राप्त है। जलपूर्ति नालियाँ बनाने सड़को की रोशनियाँ तथा सफाई कार्य के लिए भी पचायतें शुल्क लगा सकती हैं। यद्यपि यह ऐच्छिक ही हैं क्योकि पचायतो का काम है कि व अपने इलाके म इन सभी बातो का इन्तजाम करें पचायतो को यह भी हक है कि वे (१) अनाधिकृत कब्जा (२) लाइसेंस न लेने तथा निर्धारित नक्शो के विपरीत मकान बना लेने पर जुर्माना भी कर सकती है। गावो म स्थित बारहमासी तालाबो म मछली पालन की व्यवस्था करके पचायत इस काम म लगे हुए लोगो से भी कर वसूल कर सकती है। गाव के बाजारो को पचायत तथा पचायत समिति क्षेत्रो के अधिकार क्षेत्रो म विभाजित करके अपने इलाके की दुकानो से कर लगा कर भी पचायत अपनी आय बढ़ा सकती है। आन्ध्र तथा मद्रास की तरह ही अन्य राज्य भी जायदादो के हस्तान्तरण तथा बिक्री के समय ली जाने वाली फीस के एक अश को पचायत के लिए सुरक्षित रख सकते हैं। अदालतो म बिकने वाले न्याय विभाग सम्बन्धी टिकटो की बिक्री पर भी अधिभार लगाया जा सकता है, जो सम्बन्धित क्षेत्र के ग्राम विकास के लिए खर्च किया जा सकता है एक प्रश्न यह भी उठता है कि टिकटो की बिक्री का कर केवल पचायतो को ही दिया जाय अथवा पचायत समिति तथा जिला परिषदो को भी इस मे से हिस्सा दिया जाय।

मनोरजन कर

अपने क्षेत्र म होने वाले मनोरजन सम्बन्धी आयोजनों मेलो तथा प्रदर्शनियो से होने वाली आय पर भी पचायतें कर लगा सकती हैं। उडीसा म केन्दु के पत्त की बिक्री से होने वाली सारी की सारी आय पचायतो तथा पचायत समितियो को जाती है।

करो की पूरी वसूली तथा ठीक ढग से कर लगाने के काम म प्रोत्साहन देने की दृष्टि से मद्रास सरकार की तरह ही अन्य राज्य भी बराबर की रकमे पचायतो को अनुदान के रूप में दे सकती हैं कुशल कार्य सचालन एव राजस्व की पूरी वसूली पर भी कई राज्य सरकारें पचायतो को इनाम देती है।

सरकारी सहायता

इन सभी करों के बावजूद पचायतों की आमदनी बहुत ही थोडी होती है और इतनी सी रकम से वे अपनी प्रशासनिक व्यवस्था भी ठीक ठीक नहीं कर सकती हैं। अत हर पचायत के लिए राज्य

सरकार की ओर से कम से कम एक रुपया प्रति व्यक्ति के हिसाब से अनुदान की व्यवस्था होनी चाहिये और यह भार राज्य सरकारें तथा केन्द्रीय सरकार को आधा आधा अपने ऊपर लेना चाहिये, अभी हमारे देश म पचायतो की आय अन्य राष्ट्रो की तुलना मे बहुत ही कम है, अत आने वाले कई वर्षों तक राज्य सरकारो को यह भार वहन करना ही होगा।

सामुदायिक विकास सस्थाओ ने अन्य क्षेत्रो मे भले ही अभी तक पर्याप्त प्रगति न भी की हो, पर इतना तो मानना ही होगा कि क्षेत्रीय योजनाओ के लिए जैसे स्कूल भवन सडकें अस्पताल, सार्वजनिक शौचालया, प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रो पचायत घरो आदि के लिए स्थानीय लोगो से श्रम अथवा धन के रूप म सहयोग प्राप्त करने में इन सस्थाओ की जो उपलब्धियाँ सामने आई हैं उनका महत्व कम नहीं माना जा सकता है। अत सभी राज्य सरकारो को कानून बनाकर पचायतो को यह अधिकार देने चाहिये कि वे अनिवार्य श्रम के रूप म स्थानीय लोगो से किसी भी सार्वजनिक काम के लिए जन सहयोग प्राप्त कर सकें।

व्यय के प्रावधान

आय के साधनो की तरह ही खर्च की मदें भी पचायती राज की उपयोगिता को प्रमाणित करने के लिए प्रमुख आधार हैं। मोटे तौर पर तो प्रत्येक पचायत पर इस बात की जवाबदारी है कि वह अपने क्षेत्र के लोगो और पशुओ के लिए पीने के पानी की व्यवस्था करे, सडको का निर्माण तथा मरम्मत कराये तालाबो और नहरो का इन्तजाम करे, सफाई रोशनी तथा प्रारम्भिक चिकित्सा आदि की देख भाल करे। पचायत समितियो द्वारा निर्धारित विकास कार्यों के सचालन की जिम्मेदारी भी पचायत पर ही है और पचायत घर की व्यवस्था भी पूर्णत पचायत को ही करनी पडती है।

इन मदो को ध्यान म रखते हुए ही पचायत के सदस्यो को यह निर्णय लेना होगा कि आय की मदो म से कुल कितना भाग वे प्रशासनिक खर्च पर तथा कितना विकास कार्यक्रमो पर खर्च कर सकते हैं। मोटे तौर पर कुल आय का २५ प्रतिशत भाग ही पचायत को अपने प्रशासनिक ढाचे पर खर्च करना चाहिये। जिन पचायतो की आय बहुत कम हो वे पाच सात मिलकर भी अपनी सयुक्त प्रशासनिक व्यवस्था कर सकती हैं।

लगान वसूली की जिम्मेदारी

इस प्रसग म यह सवाल उठता है कि लगान वसूली की जिम्मेदारी पचायतो को सौंपना उचित होगा अथवा नहीं। आम तौर पर यह माग काफी जोर शोर के साथ उठाई जा रही है कि पचायतो को आत्म निर्भर बनाने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि राजस्व वसूली का काम पचायतों को सौंप दिया जाना चाहिये। इससे एक ओर जहाँ गाँव के स्तर पर दुहरी प्रशासनिक व्यवस्था समाप्त हो सकेगी वहाँ पचायतो की आय भी बढ सकेगी। इस सम्बन्ध म यही उचित रहेगा कि जहाँ-जहाँ राजस्व अधिकारी इस बात के लिए आश्वस्त हो कि पचायतें यह काम कर लेंगी और पचायतें यह जिम्मेदारी लेने को सहमत हो वहाँ लगान वसूली का काम पचायतो को सौंप देना उचित ही होगा। इस पर से यह प्रश्न

उठता है कि ग्राम सेवक पटवारी तथा पचायत के सेक्रेटरी के बीच क्या स्थिति होगी ? इस सम्बन्ध म उचित यही होगा कि हर पचायत का अपना सक्रेटरी अलग हो जो लगान सहित सभी कर वसूल करेगा और ग्राम सवक का काम केवल विकास कार्य क्रमो की देखभाल करना रहेगा।

पीने के पानी की समस्या

गाँवों म पीन के पानी की व्यवस्था करना पचायतों की प्राथमिक जिम्मेदारी है। राजस्थान मे तो ग्रामीणों को मीलों चलकर पानी लाना पड़ता है और इस समस्या को केवल गाँवों म पानी के कुए खुदवा कर तथा नल लगा कर ही दूर किया जा सकता है। राज्य सरकारों को चाहिए कि पचायतों को इस काम के लिए काफी रुपया ऋण और अनुदान के रूप म दे।

गाव की सफाई का काम पचायत को ठेके पर देना चाहिए तथा जो भी कूडा करकट इकट्ठा हो उसका खाद बनाये जान की व्यवस्था करनी चाहिए। गाँव की सडको की मरम्मत तथा नई सडकें बनान का काम भी पचायत को ही करना है। गाँव म नालियाँ बनाकर गदे पानी को गाव से बाहर निकालन की व्यवस्था भी पचायत को ही करनी चाहिए क्योकि इनके बिना गाँव म सफाई नहीं रह सकती। सफाई न रहने पर गाँव म कई प्रकार के रोगो का खतरा रहता है। गावो म रोशनी की व्यवस्था भी पचायत की जिम्मेदारी है। जहाँ बिजली न पहुँची हो वहाँ मिट्टी के तेल से ही लालटेनें लगाई जानी चाहिए। गाव के लिए सामूहिक रेडियो पचायत घर का निर्माण तथा देखभाल बच्चों के लिए पार्क तथा खेल कूद के मदान की व्यवस्था भी पचायत की ही जिम्मेदारी है पचायत को ऐसी स्थायी सपत्ति बनाने के लिए भी सचेष्ट रहना चाहिए जिससे पचायत की स्थायी आमदनी हो सके। ऐसा होने पर पचायत को बार बार कर लगाने के सिर दर्द से थोडी बहुत मुक्ति मिल सकती है।

स्वावलम्बन पर जोर

ऊपर पचायतो के आय के साधनों तथा व्यय के प्रावधानो पर सक्षेप म प्रकाश डाला गया है पर हम यह नहीं भूलना चाहिए कि पचायतो की स्थापना का लक्ष्य एक ओर जहाँ ग्रामीणो को स्वशासन के अधिकार देना है वहाँ साथ-साथ उन्हे आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी बनाने की योजना भी इस व्यवस्था मे अन्तर्निहित है। गाँव जब तक शहरो की ओर देखते रहेंगे गाव के पढे लिखे नौजवान जब तक रोजगार के लिए शहरो की ओर भागते रहेंगे, गावो की माली हालत सदियो तक भी ठीक नहीं हो सकेगी। अत सबसे अधिक जोर इस बात पर दिया जाना चाहिए कि अपने दैनिक जीवन की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए गाँव को बाहर की ओर बिलकुल न देखना पडे।

इस व्यवस्था के लिए सबसे पहले हर पचायत को अपने अपने क्षेत्र का आर्थिक सर्वेक्षण करना चाहिए ताकि उस इलाके के लोगो की आवश्यकताओ का तथा साधनो क्षमताओ तथा लक्ष्यो का स्पष्ट चित्र सामने आ सके। इसके बाद पचायत तथा ग्राम सभा के प्रमुख लोगों को मिलकर यह सोचना चाहिए कि गाँव म ऐसे कौन कौनसे काम हैं जिन्हें हाथ म लेने से गाँव का नक्शा बदल सकता है उनके लिए साधनो की व्यवस्था कसे कसे कहा से की जा सकती है और इस जिम्मेदारी को गाँव के कौन कौनसे लोग

भली-भांति पूरा कर सकते हैं। पचायत को यह भी देखना चाहिए कि गाव के जो अत्यधिक पिछड़े हुए लोग हैं उन्हें विशेष रूप से राहत पहुंचाने के लिए क्या क्या काम किये जा सकते हैं?

जसा कि हम ऊपर भी सकेत कर चुके हैं गाव के विकास के लिए कुछ ऐसे साधन भी जुटाने पड सकते हैं जिन पर किसी व्यक्ति का अधिकार न होकर समूचा पचायत का अधिकार हो। पचायत के लिए स्थायी आमदनी का जुगाड ऐसे साधनो से ही सम्भव होगा। उडीसा सरकार ने अपने क्षेत्र म अनेक पचायतो को छोटे छोटे उद्योग चालू करने के लाइसेंस दिये थे ताकि उनकी आय से पचायतो की आर्थिक स्थिति मजबूत हो सके।

अपना महत्त्व समझें

पचायतो और ग्राम सभाओं को अपना महत्व समझना चाहिये। लोकतत्र का सारा महल इन्हीं पर टिका है। जब तक यह अपनी जगह निश्चल खडा है लोकतत्र के लिए कोई खतरा नहीं है पर ज्योंही क्षणमात्र के लिए भी इन्हें अपनी बेबसी का अहसास हुआ, लोकतत्र के प्रति इनकी आस्था डगमगाई तो हमारा सारा लोकतन्त्र ही लडखडा सकता है। अत पचायतो और पचों को चुनौती पूर्वक अपने कर्णधारो से यह बात कहनी होगी कि वे अनिश्चित समय तक अपने राजनीतिक एव आर्थिक शोषण को बर्दाश्त करने को तैयार नहीं हैं। उन्हें हनुमान की तरह अपने पौरुष को पहचानना होगा केवल तभी ऊपर बैठने वाले सत्ताधारी पचायत की परवाह करेंगे। देश में राजनीतिक स्वराज के बाद आर्थिक स्वराज का सपना साकार करने का काम पचायतो को ही पूरा करना है, यह बात हमें नहीं भूलनी है। इसके लिए यदि आवश्यकता पडे तो हम सरकार के साथ लोहा लेने की तैयारी भी करनी पड सकती है, पर लोकराज की सच्ची स्थापना के लिए यह करना ही पड़ेगा।

•

खंड–६

पंचायती राज और राजकीय नियंत्रण



[अमर कवि वाल्ट व्हिटमन]

मैं सौगध खाता हूँ कि मेरे लिए
वह सब निरर्थक है,
जिसम व्यक्ति उपेक्षित हो।
मुझे लोगो के चेहरे, और
सडक देखने दो।
हजारो की तादाद में
साथी और प्रेमी दो।
वही नगर महान् है,
जिसमे महानतम नर-नारी हैं,
चाहे उसमे कुछ टूटी फटी
झोपडिया ही क्यो न हो।
वह सारे ससार का
सब से महान् नगर होगा
वहा नागरिक ही
सदैव प्रधान और आदर्श हैं।
और प्रेसिडेंट, मेयर और
गवर्नर वेतन पाने वाले
चाकर मात्र हैं,
वही है वह महान् नगर।

पचायती राज के प्रति सरकार की उपेक्षापूर्ण नीति

—श्री जयप्रकाशनारायण

पचायती राज व्यवस्था देश के सम्पूर्ण प्रशासन का एक आधार बन जाए इस हेतु कुछ वर्ष पहले उदयपुर मे एक सेमिनार आयोजित किया गया था। जिसमे केन्द्र के सामुदायिक विकास मत्रालय के मत्री श्री एस० के० डे उपमत्री श्री बी० एस० मूर्ति, दो राज्यो के मुख्य मत्रियो एव अनेक राज्यो के पचायत मत्रियों ने भी हिस्सा लिया था। इस सेमिनार ने सर्वसम्मति से यह सिफारिश की थी कि पचायती राज सस्थाए अर्थात् ग्राम पचायतें जनपद अथवा ब्लाक पचायतें और जिला परिषदें अपने अपने स्तर मे स्वशासन की इकाई हैं। भले ही कुछ कार्यों मे केन्द्र और राज्य सरकारों की एजेंसियो के रूप में कार्य करें किन्तु पचायती राज का जो चित्र हमारे मस्तिष्क मे रहा है वह पचायतो को ऐजेसी के रूप मे नहीं वरन् स्वशासन की सस्थाओं के रूप मे स्वीकार करता है। सेमिनार की सिफारिश यह भी थी कि इस परिसकल्प का इस स्वरूप को केवल स्वीकार करने से ही नहीं वरन् सविधान मे इस तरह का सशोधन करना चाहिए कि इन सस्थाओ को एक पाँच स्तरीय राज्य के अगो के रूप मे सविधानिक मान्यता प्राप्त है। और जैसे आज केन्द्र और प्रदेश के मध्य अधिकार और दायित्व का बटवारा किया गया है, वैसे ही केन्द्र, प्रदेश, जिला, ब्लाक, और ग्राम सभा के मध्य बटवारा किया जाय। परन्तु आज की स्थिति देखकर ऐसा महसूस होता है कि उदयपुर के परिसकल्प को मौखिक रूप मे ही स्वीकार किया गया था। मैंने सुना है कि मसूर विधान सभा मे पेश किये गये पचायती राज से सम्बन्धित बिल मे पचायती राज सस्थाओ को प्रदेश सरकार की एजेन्सियो के रूप मे परिभाषित किया गया है। यह तो उदयपुर सेमिनार के बाद हुआ और सेमिनार मे श्री हेडगे भी मौजूद थे।

नेहरूजी जब तक जीवित रहे पचायती राज प्रणाली के वे हामी थे, और इस ओर उन्होंने शासन की नीतियों को निरन्तर प्रभावित किया था। उनके जाने के पश्चात् जहाँ तक शासन अथवा शासकीय नीतियों का झुकाव था उसमे कमी कुछ हद तक स्पष्ट गोचर हुई। यद्यपि शास्त्रीजी के बारे में यह नहीं कह सकते कि पचायतो के प्रति उनका झुकाव कुछ कम था किन्तु नेहरूजी जिस दिशा में सोचते

आज ऐसा लगता है कि सरकार पचायती राज की दिशा से कुछ मुह मोड लेना चाहती है। पचायती व्यवस्था के विषय मे उसका सक्रियात्मक झुकाव सामने नही आ रहा है।

पिछले कुछ दिनो केन्द्रीय व राज्य सरकारे पचायती राज के विषय में निरन्तर शिथिल एव उत्साहहीन नीति पर चल रही है, और यह परिवर्तन बडी तेजी से हो रहा है, साफ दिखाई दे रहा है। ऐसा क्यो हो रहा है यह कहना मेरे लिये मुश्किल है।

थे उसका स्पष्ट रूप या प्रक्रिया शास्त्रीजी काल में परिलक्षित नहीं हो सकी। यद्यपि वे बलवन्त भाई के निकट के सहयोगी रहे हैं। और बलवन्त भाई का इस सस्था से गहरा सम्बन्ध रहा है। फलस्वरूप जो भी कार्य शास्त्री जी के सामने आया बलवन्त भाई के परस्पर विश्वास एव स्नेह की वजह से वह बराबर साथ देते रहे सहयोग देते रहे। किन्तु आज ऐसा लगता है कि सरकार पचायती राज की दिशा से कुछ मुँह मोड लेना चाहती है। पचायती व्यवस्था के विषय म उसका सक्रियात्मक झुकाव सामने नहीं आ रहा है। यद्यपि केन्द्र अथवा राज्यो मे, जो नतृत्व है वह कोई नया नहीं है नहरू काल से ही वह चला आ रहा है। केन्द्र म अथवा राज्यो म सरकार मे अथवा काग्र स पार्टी में वही लोग हैं जो नेहरू जी के पुराने साथी हैं। उनकी नीतियों को उन्होंने स्पष्ट समझा है। इन्दिरा जी तो स्वय उनकी पुत्री हैं। ये दोनो लोग नहरू जी की नीतियो से पचायती राज के विषय म नहरू जी की भावनाओ से अपरिचित हो ऐसा नही कहा जा सकता। इनके नतृत्व मे पंचायती राज की गति मद हो, नई पचायती राज व्यवस्था में आस्था न हो ऐसा नहीं लगता और न ही लगना ही चाहिए, किन्तु यह हो रहा है। पिछले कुछ दिनो केन्द्रीय व राज्य सरकारें पचायती राज के विषय म निरन्तर शिथिल एव उत्साहहीन नीति पर चल रही है और यह परिवर्तन बडी तेजीस हो रहा है साफ दिखाई दे रहा है। ऐसा क्यो हो रहा है यह कहना मेरे लिए मुश्किल है। इसका सही उत्तर तो काग्रेस के नता ही दे सकते है। उनकी आलोचना करना मेरे जसे व्यक्ति के लिए जो कि राजनीति छोड चुका है कुछ अजीब सा लगेगा और वह भी एक दल विशेष की-काग्र स पार्टी की। किन्तु काग्रेस एक बडा दल है अखिल भारतीय स्तर का व्यापक सगठन है केन्द्र और राज्यो मे इसकी सरकारें हैं जनतन्त्र म विश्वास रखता है। अत पचायती राज के विषय म दूसरो की अपेक्षा उसका अधिक उत्तरदायित्व है। यद्यपि जहाँ जहाँ मन राज्य अथवा केन्द्र सरकारो से सम्पर्क किया पचायती राज व्यवस्था के विषय म मुझ सहयोग मिला है। उस सीमा तक सहयोग मिला है जिस सीमा तक म उसका पात्र नहीं हूँ। किन्तु समग्र रूप से पचायती व्यवस्था को हतोत्साहित करन का, उसकी उपयोगिता को कम आकन का आरोप सरकार पर लगाया जा सकता है।

अनक राज्यों न अपन यहा त्रिस्तरीय प्रणाली अभी तक लागू नहीं की है। पचायतो का क्या स्थान है, यह राज्य सरकार के सचालको के सम्मुख स्पष्ट नही है। कुछ राज्य सरकारें तो पचायती

सस्थाओ का एक ऐजेन्ट के रूप मे मानती हैं। कुछ मुख्य मन्त्रियो न तो मुझे इस विषय मे स्पष्ट लिखा था कि पचायतो का स्थान हमारे राज्यो म एक ऐजेन्ट अथवा एजेंसियो के रूप मे है। न केवल केन्द्रीय अथवा राज्य म मन्त्रियो ने पचायती व्यवस्था के विषय मे अनुत्साह-वर्धक रुख अपनाया है बल्कि विधायको एव ससद सदस्यो का रुख भी आश्चर्यजनक रहा है। वे अब तक इसलिए सघर्ष करते रह कि पचायती सस्थाओ म उन्हे भी सदस्यो के रूप मे ग्रहण किया जाए। उनकी सारी शक्ति इसी तथ्य के ऊपर आधारित रही और वह प्रयास करते रह कि कहीं पचायती राज सस्थाओ म उनका कोई अधिकार न रहे। हमारे विधायक एव ससद सदस्य विधान सभाओ और ससद की सदस्यता के साथ साथ पचायती राज सस्थाओ के सदस्य भी बने रहना चाहते हैं। मुझे यह प्रसन्नता होती यदि इसका कारण पचायती राज व्यवस्था के रचनात्मक पक्ष से सम्बन्धित होता या इन समस्याओ को सुलझाने म अपना योगदान देने के लिए वे ऐसा कहते। उसका कारण तो दूसरा ही है और वह परिपक्वता एव परिमार्जिता की स्थिति को पोषित नहीं करता। पचायती राज सस्थाओ के सदस्यो ने ससद अथवा विधान सभाओ के सदस्य होने की माग नहीं की ह। यदि परिवर्तन मे वह भी ऐसी माग करें तो स्थिति क्या होगी ? हम पचायती राज के सदस्यो के लिए एक सहिता तैयार करना चाहिये कि यदि कुछ राजनीतिक दलो के कार्यकर्ता पचायती राज सस्थाओ मे सदस्य ह तो उनके लिए छूट होनी चाहिए—निर्णय लेने की। पार्टी अनुशासन उन पर लागू नहीं होना चाहिए पार्टी आदेश उनके लिए प्रसारित नहीं किया जाना चाहिए तभी पचायती राज व्यवस्था दलगत राजनीति से ऊपर उठ सकेगी।

पचायती राज प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किये गये। जिनका उद्देश्य था पचायती राज सस्थाओ के सदस्यो को प्रशिक्षण देना ताकि वह पचायती राज के लिए उपयोगी सिद्ध हो एव ग्रामीण नेतृत्व प्रदान करें और ग्रामीण क्षेत्र मे विकास ग्रामोद्योगीकरण के मार्ग म सहायक हो। किन्तु खेद है कि इतनी उपयोगी सस्थाओ को भी सरकार समाप्त करने जा रही है। ऐसा ज्ञात हुआ ह कि कुछ राज्य सरकारें पचायती राज प्रशिक्षण केन्द्रो की उपयोगिता को नहीं मानती और उन्हे समाप्त करने का निर्णय ले चुकी हैं। कुछ लेने जा रही हैं। उसके अनुदान म कटौती की जा रही है। इसका परिणाम क्या होगा, पचायती राज प्रणाली को उचित नेतृत्व जो कि उचित प्रशिक्षण के अभाव म सभव नहीं है प्राप्त नहीं हो सकेगा। जिसका तत्काल प्रभाव ग्रामीण समाज पर पड़ेगा। ग्रामीण समाज के उन्नतशील होने की आशा मद हो जायेगी। ग्रामीण उद्योगीकरण की आशा धूमिल पड़ जायेगी। एक ओर जहाँ ससद सदस्यो एव विधायको के प्रशिक्षण की बात प्रारम्भ हो रही है जो घटनायें विधान सभाओ एव ससद के पटल पर घटित हो रही हैं उनको देखते हुए उनके प्रशिक्षण की बात अस्वाभाविक नहीं लगती। किन्तु इन विधायको एव ससद सदस्यो की तुलना मे पचायती राज सस्थाओ के सदस्यो का प्रशिक्षण तो और भी आवश्यक है। इनका प्रशिक्षण तो इसलिए और अधिक महत्वपूर्ण तथा आवश्यक है क्योंकि इन्ही प्रशिक्षित गैर सरकारी सदस्यो की भूमिका से ग्रामीण समाज एव ग्रामीण उद्योगीकरण की दिशा को निर्णायक सहयोग प्राप्त होगा।

लोकशाही बनाम नौकरशाही

—श्री कुम्भाराम आर्य

सत्ता विकेन्द्रीकरण के अन्दर विधायक और नौकर को रखा जाये अथवा नहीं यह एक महत्व का प्रश्न है। इस प्रश्न पर विचार किये बिना सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा मे आगे बढ़ना खतरे से खाली नहीं है।

सत्ता के विकेन्द्रीकरण का अर्थ लोकशाही की स्थापना तथा उसके द्वारा देश और समाज की उन्नति करना है। लोकशाही राजनीति के स्थान पर लोकनीति की स्थापना चाहती है। राजनीति मे पक्ष विवाद और विरोध मुख्य रूप से काम करता है। लोकशाही मे सर्वहित सद्भावना और सहयोग मुख्य रूप से काम करता है। दोनों का कही मेल दिखाई नहीं देता। राजनीति भय चिन्ता और दूसरे के विनाश की तरफ खींचती रहती है। इस कारण इसमे निर्भयता विश्वास और दूसरे के हित की सम्भावना बहुत कम रहती है। लोकनीति निर्भयता सद्भाव तथा विश्वास के साथ सर्वहित मे विश्वास रखती है। इसलिए सत्ता के विकेन्द्रीकरण में राजनीति को पृथक रखा जाना चाहिये। विधायकजन जो राजनीति के प्रतीक हैं लोकनीति से जितनी दूर रखे जाए गे उतना ही सत्ता का विकेन्द्रीकरण सफल होगा। देश मे आज केन्द्र और प्रान्त के नाम से दिल्ली तथा प्रान्तीय राजधानियो में राजनैतिक लोग अपने अपने पक्ष के लिए अखाड़े मे उतरते हैं। इसके अतिरिक्त यह दगल और कही नहीं। सत्ता के विकेन्द्रीकरण मे इन विधायको को प्रवेश मिल गया तो देश में इस प्रकार से सकडों हजारो राजनीति के अखाड़े खुल जायेंगे जहा पर पक्ष विपक्ष की भाषा के दौर चलेंगे और देश तथा समाज की सेवा गौण हो जायेगी।

प्रशासनिक इकाइयो को राजनीति का केन्द्र बना देना शासन और सेवा दोनों दृष्टियो से अनुचित है। प्रशासनिक इकाई की कमजोरी सुरक्षा और शान्ति कायम नही रख सकती जिनका रखना अत्यत आवश्यक है। सुरक्षा व शान्ति के बिना सेवा तो सोची ही नहीं जा सकती। इसलिए सुरक्षा और शान्ति के बिना आजादी किस काम की। राजनीति और लोकनीति का मेल विरोधी भाव उत्पन्न करने वाला होगा

लोकशाही के क्रांति-स्तंभ
श्री कुंभाराम आर्य
अध्यक्ष राजस्थान पंचायतराज मंच

जिससे शासनिक इकाइयां मजबूत होने के स्थान पर कमजोर होंगी। इसमें देश और समाज का हित नहीं बन सकेगा। इस कारण राजनीतिक जनो का लोकनीति संघा में प्रविष्ट नहीं होना चाहिए। प्रशासनिक इकाइयों में विधायकों के प्रविष्ट होने से दूसरा स्वाभाविक विरोध यह और उत्पन्न हो जायगा कि किसी इकाई में शासन करने वाली पार्टी के विरोधी आ गए तो दोनों तरफ खिंचाव आयेगा। ध्वजधारी को ध्वजधारी नहीं भाती। इसी भांति एक राजनीतिक दूसरे विरोधी राजनीतिक को देख नहीं सकता। दोनों एक दूसरे को कमजोर करने में अपनी शक्ति लगायेंगे और समाज सेवा दोनों भूल जायगे। राजनीति विरोधी को बल प्रदान नहीं कर सकती, विरोधी का बल क्षीण करती है। इसलिए जिस किसी इकाई में शासन करने वाली पार्टी से विरोध करने वाले विधायक आ गये वहां तो निश्चय ही एक दूसरे को कमजोर बनाने में शक्ति का प्रयोग करेंगे। देश भक्ति और समाज सेवा का स्थान उस समय पार्टी हित हो जायेगा। सत्ता के विकेन्द्रीकरण में ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं होने देने के लिए यही उचित है कि विधायक इसमें प्रवेश न करें।

कर्मसत्ता और जिम्मेदारी

विधायकों के साथ ही नौकर का प्रश्न आता है। आज कर्मसत्ता जिसे हम अधिकार कहते हैं नौकरों के पास है। जन प्रतिनिधियों के पास कर्मसत्ता की भारी कमी है। जन प्रतिनिधियों के पास जिम्मेदारी और नौकर के पास अधिकार, यह अजीब प्रकार की स्थिति है। जिसके पास जिम्मेदारी है उसके पास अधिकार नहीं। जिसके पास अधिकार है उसके पास जिम्मेदारी नहीं। परिणाम यह दिखाई दे रहा है कि जनता जिनसे आशा लगाये बैठी है वे कर्महीन हैं। सत्ता के उपासक बने बैठे हैं। इसलिए जनता की आशा पूरी नहीं कर सकते। जिनके पास कर्मसत्ता है वे जनता के प्रति उत्तरदायी नहीं अर्थात् वे जनता के प्रतिनिधि नहीं। अधिकार और जिम्मेदारी को पृथक् पृथक् बांटने की भूल सत्ता विकेन्द्रीकरण में कभी नहीं होना चाहिए क्योंकि केवल जिम्मेदारी लाद देने से काम नहीं चल सकेगा, जब तक कि इसे पूरा करने का अधिकार उसके पास नहीं होगा।

लोकशाही व नौकरशाही

सत्ता के विकेन्द्रीकरण में कर्मसत्ता (अधिकार) नौकर के हाथ में अधिकाधिक रखी गयी तो विकेन्द्रीकरण की योजना असफल होगी। नौकर का हित लोकशाही में नहीं नौकरशाही में है। वह अपने हित के विरुद्ध कम चल सकेगा? इसलिए सत्ता विकेन्द्रीकरण में जिम्मेदारी और अधिकार दोनों समान रूप से देने की आवश्यकता है। नौकरशाही और लोकशाही में रात दिन का अन्तर है। नौकरशाही हमारी आजादी की रात है जिससे हमारा वर्तमान अन्धेरे से घिरा है। लोकशाही हमारी आजादी का दिन है जिसमें हमारा वर्तमान और भविष्य दोनों प्रकाशमय हैं। दिन और रात का समन्वय सन्ध्या वेला कहलाती है। राजनीति और लोकनीति का मेल सन्ध्या काल बनेगा। हम सन्ध्या वेला के इच्छुक नहीं। सन्ध्याकाल की स्थिति अच्छी नहीं होती वह बड़ी विचित्र होती है। उसमें कोई वस्तु नहीं दिखाई देती। किसी वस्तु के सही दिखाई न देने का दोष न आंख का दिया जा सकता है और न बुद्धि को। इसका दोष सन्ध्याकाल को है। सन्ध्या काल की स्थिति ऐसी ही है। उसमें न पूरा अंधेरा होता है और न पूरा प्रकाश। धुंधला धुंधला रहता है, कहीं सांप रस्सी दिखाई देता है तो कहीं रस्सी सांप। इस सन्ध्या काल में कितनी ही साव-

धानी बरती जाय फिर भी रस्सी समझकर साप के हाथ लगने वाले के प्राणो की रक्षा हो सकना बहुत कठिन है। लोकशाही और नौकरशाही का मेल जिस स्थिति को उत्पन्न करेगा वह इस सध्या वेला से कम घातक नहीं होगी। इसलिए नौकर के हाथ म अधिकार की अधिकता खतरनाक है।

अधिकार वही रहना चाहिए जहाँ जिम्मेदारी है। बिना अधिकार के जिम्मेदारी पूरी नहीं की जा सकती। इसलिए सत्ता के विकेन्द्रीकरण के अन्दर इस बात का खास ध्यान रखने की जरूरत है कि जनता को जितनी जिम्मेदारी दी जाय उतना ही अधिकार भी उसे मिल जाना चाहिए। जिम्मेदारी को निभाने के लिए अधिकार की भारी आवश्यकता है।

अधिकारी और सेवक

सत्ता के विकेन्द्रीकरण म जन प्रतिनिधियो को नौकरशाही की दया पर नहीं छोड़ा जाना चाहिए। सत्ता के विकेन्द्रीकरण म सत्ता और अधिकार दोनों जन प्रतिनिधियो के पास रहना चाहिए। नौकर के पास केवल सेवा रहनी चाहिए। सेवा की साधना के लिए जितने अधिकार की आवश्यकता पड़े उतना अधिकार नौकर के पास रहना चाहिए।

सत्ता विकेन्द्रीकरण के अन्दर नौकर अधिकारी बन कर नहीं आना चाहिए। सेवक बनकर आना चाहिए। इसके लिए वर्तमान सेवा आयोग द्वारा निर्मित सेवाए उपयुक्त नहीं क्योंकि वह अधिकार की प्रतीक हैं। सत्ता का विकेन्द्रीकरण अधिकार के स्थान पर सेवक चाहता है। इसलिए सत्ता के विकेन्द्रीकरण के सिलसिले म काम करने के लिए पृथक सेवा आयोग नियुक्त होकर उसके द्वारा सेवको (नौकरों) का चुनाव होना चाहिए। प्रशासनिक इकाइये नौकरो से प्रभावित न हो सकें इस बात का पूरा ध्यान रख बिना सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा म आगे कदम रखना सफलता की सूचक नहीं। सत्ता के विकेन्द्रीकरण में शासनिक इकाइयें (जन प्रतिनिधि मण्डल) नौकरो से प्रभावित होने लगी तो फिर नौकरशाही का बोलबाला हो जायेगा, लोकशाही का नहीं।

सत्ता विकेन्द्रीकरण के अन्दर जितना अधिकार और जिम्मेदारी जन प्रतिनिधियो को दी जा सकेगी उतनी ही सफलता मिलने वाली है। इसलिए लोकशाही को स्थापित करने के लिए सत्ता के विकेन्द्रीकरण में विधायक को पृथक रखा जाय तथा जिम्मेदारी और अधिकारी जन प्रतिनिधियो के हाथ मे रहने चाहिए। नौकर के पास केवल सेवा रहे और सेवा को सफल बनाने के लिए जितने आवश्यक अधिकार की आवश्यकता हो उससे अधिक अधिकार न रहें।

पंचायत राज के प्रशासन की समस्या एक प्रश्न – एक उत्तर

—श्री मथुरादास माथुर

पंचायती राज आज विशेष चर्चा का विषय बना हुआ है। वास्तव में पंचायती राज का जन्म ही विशिष्ट प्रकार से हुआ था। यह प्रशासन की ऐसी पद्धति नहीं है जिसे जनता के अनुरोध पर लागू किया जा रहा है पंचायती राज को प्रशासन की पद्धति के रूप में अपनाने के लिए ग्रामीण जनता द्वारा कभी कोई प्रयास भी नहीं किया गया। प्रारम्भ में तो यह एक राजनीतिक आवश्यकता भी नहीं थी।

वास्तव में पंचायती राज योजना के मूल में प्रशासनिक सुविधा ही मानी जानी चाहिए। पंचायती राज का वास्तविक स्वरूप क्या हो, इस पर विचार करने के लिए महान् राजनीतिज्ञ व नेता स्व० श्री बलवन्तराय मेहता की अध्यक्षता में जो दल नियुक्त किया गया था उसकी रिपोर्ट पर देश भर में व्यापक रूप से चर्चा की गई। अन्त में देश के विभिन्न राज्यों में विद्यमान सामाजिक व राजनीतिक परिस्थितियों के अनुरूप विभिन्न रूपों में पंचायती राज की स्थापना की गई।

फिर भी प्रत्येक राज्य द्वारा कुछ मौलिक सिद्धान्तों का अनुसरण अवश्य किया गया जिनमें पंचायती राज का मूलभूत सिद्धान्त यह था कि ग्रामीण भारत के लोगों को अपने प्रतिनिधि संगठनों द्वारा राष्ट्र के सामाजिक उद्देश्यों के अनुसार अपने ग्राम समुदायों का विकास करना चाहिए।

त्रि-स्तरीय व्यवस्था

राजस्थान में पंचायती राज की त्रि स्तरीय पद्धति को अपनाया गया है तथा भारत में बहुत से राज्यों ने भी इसी को अपनाया है। कुछ राज्यों ने द्विस्तरीय पद्धति को अपनाया है तथा वहां जिला परिषद को जिला प्रशासन के प्रशासकीय साधन के रूप में संगठित किया गया है। लेकिन किसी भी राज्य ने ग्राम पंचायतों को पंचायती राज की प्रशासकीय इकाई के रूप में मान्यता नहीं दी है।

राजस्थान सामन्तवाद की प्राचीन परम्परा के कारण पिछड़ा हुआ हो सकता है, लेकिन जहाँ तक पचायती राज का सम्बध है यह उत्तर-भारत में इसी प्रकार से पहला राज्य है जिस प्रकार दक्षिण मे आध्र राज्य है। लकिन लोगो की जनतत्र मे अगाध श्रद्धा एव विश्वास होने के कारण हमने पचायती राज को एक नए कदम के रूप मे अपनाया था न कि प्रशासन म एक नए प्रयोग के रूप म।

भारतीय सविधान के निर्देशक तत्वा म ग्राम पचायतो को समृद्ध करने का उल्लेख है लेकिन जब तक इसम पचायती राज को प्रशासन की पद्धति के रूप म मान्यता प्रदान करने के लिए विशेष रूप से सशोधन नहीं किया जाता तब तक इसका स्थान प्रशासन के अन्य स्तरो की अपेक्षा गौण ही रहेगा। पचायती राज प्रशासन का एक भाग है तथा किसी भी प्रजातन्त्री शासन मे प्रशासन का लोकतान्त्रिक आधार होना जरूरी है। जब तक ऐसा नहीं होता इस पद्धति की सफलता म सन्देह ही रहेगा और हो सकता है देश मे आने वाली नयी क्राति की चपेट म यह समाप्त ही हो जाये।

पुराने प्रशासन से भिन्नता

प्रशासन की परम्परागत पद्धति एव वर्तमान पचायती राज के बीच केवल इतना
कि प्रथम प्रकार का प्रशासन केवल कर्मचारियो द्वारा ही चलाया जाता है जो या तो चुने जाते हैं या निर्वाचित किए जाते हैं जबकि दूसरे प्रकार के प्रशासन म जिला प्रशासन के उत्तरदायित्व को निर्वाचित प्रतिनिधि भी बाट लेते हैं। इस प्रकार प्रशासन की इस पद्धति मे विशिष्ट रूप से जिला प्रशासन म जन प्रतिनिधियो एव सेवाओ दोनो का समन्वित रूप होता है। मेरे मन म आज प्रशासक के रास्ते म जो एक मात्र कठिनाई आती है वह यह है कि वह जनता के प्रतिनिधियों के साथ मिल कर कार्य करने म अपनी मन स्थिति को ठीक प्रकार से विकसित नहीं कर पाता जो कि हमारे समाज मे प्रजातत्र के नए विचारो की अभिव्यक्ति के लिए जनता म से चुन कर आते हैं। राज्याधिकारी और कर्मचारी यद्यपि अपने आपको इस नए परिवर्तन के अनुरूप ढाल रहे हैं लकिन उन्हें उन लोगो के साथ अच्छी तरह सतुलन कायम करने म अभी समय लगेगा।

उन लोगो के लिए, विशेषकर सेवा के पुराने सदस्यो के लिए जिनको कि भिन्न प्रकार की सामाजिक पद्धतियो के अनुसार प्रशिक्षण दिया गया था अब समाज की नयी आवश्यकताओ तथा प्रशासन के वर्तमान तरीको के अनुसार प्रशिक्षण करना एक बडा भारी परिवर्तन है जिसस कि उनके व्यक्तित्व म एक तरह से पूर्ण परिवर्तन आ जाये। नव नियुक्त नवयुवको में जो गाव में काम करने जाते हैं उचित दृष्टिकोण पदा करना आवश्यक है। यह अनिवार्य है कि हमारा प्रशासन सामाजिक विचारो म प्रवृत्त *नये निर्देशो के अनुसार पूर्णतया सुसज्जित हो।*

यदि वे लोग वास्तव म यह सोचें कि वे इस प्रजातन्त्र के कमचारी हैं यदि प्रशासक गण सही मन स्थिति का विकास कर लें तथा लोगों म विश्वास करना शुरु कर दें तो मुझे विश्वास है कि वे लोगों का हित कर सकेंगे। परन्तु यदि इसके विपरीत उनमें यह धारणा हो कि जनता अशिक्षित है और वे (प्रशासकगण) ही स्थिति के मालिक हैं तो वे किसी भी प्रकार से अपनी ओर से हित साधन नहीं होंगे।

विश्वविद्यालय शिक्षा एव प्रशिक्षण कमचारियो को कुछ पृष्ठाधार अवश्य प्रदान करती है

लेकिन जो मनुष्य गावो मे रहते है वे ही समस्याओ तथा उनके हल को अच्छी प्रकार से जान सकते है। प्रशासन समस्याओं के हल को शीघ्रतापूर्वक निपटान के लिए परिवर्तनकारी सहायक साधन की तरह काय कर सकता है तथा उसका वैज्ञानिक हल भी प्रदान कर सकता है। गाव मे रहने वाला मनुष्य सभी दृष्टि से अर्थात् सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक दृष्टि से अपनी समस्या को समझता है। उसे केवल सहायक हाथ की जरूरत होती है।

हम इस समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए कि यदि देश की नीति सही है तो ये योजनायें इतना फलप्रद परिणाम क्यो नहीं दे रही हैं? हमारा लक्ष्य बडा ही स्पष्ट है। समाजवादी उद्देश्य लोकतांत्रिक तरीका एव कल्याणकारी सिद्धान्त इन सबको हमने अपने सामाजिक कार्यक्रमो म सम्मिलित कर लिया है तथा कोई भी यह नहीं कह सकता कि इस समस्या को हल करने म भारत का प्रयास अवज्ञानिक है। लेकिन इन वर्षों म समाज म धनवान व्यक्ति अधिक सम्पन्न हुए हैं। तथा गरीब व्यक्ति यदि वह अधिक गरीब नहीं हुआ है तो करीब करीब उसकी स्थिति म कोई उल्लेखनीय सुधार भी नहीं हुआ है (यदि इस स्थिति म एक प्रतिशत लोगो का दर्जा इधर से उधर हो जाय तो उसका कोई महत्व नहीं है)

प्रशासन द्वारा कुठाराघात

पचायती राज म लोगो को अपने स्वय के अनुभव के प्रकाश म अपने गाव के निर्माण का अवसर एव शक्ति प्रदान की गई थी अत उन्हें उस क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण राय अदा करना चाहिए था लेकिन आज पंचायती राज प्रशासन की भीषण आंधियो के द्वारा अपने माग म अवरोधो का सामना कर रहा है।

जिला प्रशासन अभी तक पूर्ण रूप से एकीकृत दृष्टिकोण को विकसित नहीं कर पाया है क्योकि देश म दो समानान्तर प्रशासनिक सगठन काय कर रहे है जिनम एक का काय सामन्तशाही प्रकृति का है तो दूसरे का आधुनिक प्रकृति का। इस तरह जिला स्तर पर दो विभिन्न ऐसी धाराए चल रही है जिन्होन अपने अस्तित्व को एक दूसरे म नहीं मिलाया है।

उदाहरण के लिए विकास खण्ड के समानान्तर स्तर पर उपखण्ड अधिकारी, तहसीलदार या सहायक तहसीलदार तथा राजस्व निरीक्षक एव पटवारी है। इन सबको मिलाकर ग्रामीण राजस्व प्रशासन का सगठन होता है। यह पद्धति सम्पूर्ण देश भर म है। यह राजस्व वसूल करने की व्यवस्था का एक ढाचा है क्योकि जिला प्रशासन प्रारम्भिक रूप से दो काय करने के उपयोग म लाया जाता था— एक तो शान्ति एव व्यवस्था बनाये रखने के लिए तथा दूसरे राजस्व का सग्रह करने के लिए।

राजस्व सग्रह

डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट, जो कलेक्टर के नाम से अधिक लोकप्रिय है, पुराने दिनो म केवल रेवेन्यू कलेक्टर (राजस्व सग्रहकर्त्ता) था, एव राज्य का प्रमुख कार्य उस समय राजस्व सग्रह ही था इसलिए यह स्वाभाविक था कि उस समय वह जिले का मुख्य अधिकारी समझा जाता था। लेकिन आज कलेक्टर को राजस्व सग्रह करने के अलावा एव अन्य अनेक कार्य करने पडते है जिनकी तुलना मे राजस्व वसूली का महत्व बहुत ही नगण्य है। विशेष कर राजस्थान में तो भू राजस्व की वसूली बहुत ही सीमित है तथा लोगों के अभाव अभियोग राजस्व सग्रह की अपेक्षा अधिक ध्यान आकर्षित करते है।

अत राजस्व कलेक्टर (संग्रहकर्ता) को एक नया नाम देना चाहिए क्योंकि उसे राजस्व संग्रह के बनिस्पत आयोजना एव विकास की ओर अधिक ध्यान देना होगा। कलेक्टर से लेकर पटवारी तक के इन अधिकारियों के वतमान नामकरण में परिवर्तन करने की आवश्यकता है। जब पंचायती राज अपना लिया गया है तो हम सभी तर्क सगत प्रशासनिक राजनतिक एव सामाजिक परिणामों को भी स्वीकार करने के लिए तयार होना चाहिए।

लेकिन हम इससे सामन्ती पृष्ठ भूमि म सगठित राजस्व संग्रह के इस व्यवस्था यन्त्र को या नौकरशाही को जो कि पुराने दिनों में सगठित की गई थी समाप्त करना नहीं चाहते। पटवारी के पद को हटाया जाय या उसे गाव के विकास का अतिरिक्त काय दिया जाय उसे पंचायत का सचिव बनाया जाय, उसके लिए यह सब विचारणीय विकल्प हो सकते हैं।

वतमान मे पटवारी को जो हमने महत्व दे रखा है वह इतना अधिक है कि उसके बारे म विचार करने के लिए एक बहुत उच्च स्तरीय समिति बनानी होगी जिसम राज्य के मन्त्रिमण्डल का एक मन्त्री अध्यक्ष हो तथा उसमें विकास आयुक्त, मुख्य सचिव या अतिरिक्त मुख्य सचिव, अध्यक्ष राजस्व मडल आदि उच्चस्तरीय अधिकारी सदस्य हों। इनको इस प्रश्न पर विचार करने के लिए देश का भ्रमण करना होगा।

आज हमारी अर्थ-व्यवस्था को विकसित करने के लिए हमारे पास पर्याप्त साधन नहीं हैं। योजना आयोग का कहना है कि नान-प्लान व्यय नहीं होना चाहिए और कमी करने के लिए सबसे पहले हमे यही मद आकर्षित करती है। मध्य प्रदेश सरकार ने विकास अधिकारी के पद को समाप्त कर दिया है तथा कहा है कि इस प्रकार का काय करने वाली सत्ता की आपत्कालीन स्थिति में बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। तब पंचायती राज की हत्या करने के बदले क्यो नहीं हम राजस्व प्रशासन, पटवारी, तहसीलदार को समाप्त करना चाहिए।

राजस्थान म विकास अधिकारी राज्य स्तरीय सेवा का सदस्य है। राजस्थान ही केवल एक ऐसा राज्य है जिसम विकास अधिकारी को यह स्तर दिया गया है। वह तहसीलदार का काय तथा भू राजस्व संग्रह करने का काय भली प्रकार कर सकता है तब फिर भू राजस्व संग्रह करने का कार्य पंचायतों को क्या नहीं सौंप दिया जाय ?

नौकरशाही का उन्मूलन

हम राजस्व संग्रह करते हैं तथा इसके बाद इसमें स निधियाँ पंचायती राज प्रशासन एव पंचायती राज संस्थाओं को देते हैं। प्रश्न उठता है कि आप पंचायतों को सीधे भू राजस्व संग्रह करने का कार्य क्यो नहीं सौंप देते जिससे कि पंचायतें अपने हिस्से की निर्धारित रकम अपने पास रख लें तथा शेष को राज्य सरकार को लौटा दें ? राजस्व संग्रह जसे साधारण काय के लिए सगठित की गई इतनी बडी नौकरशाही के संधारण पर फिर हमे इतना अधिक व्यय क्या करना चाहिये ?

जब तक कि पटवारी से लगाकर कलेक्टर तक के क्रमिक पदों को समाप्त नहीं किया जाता है। तब तक पंचायती राज सच्चे अर्थों म आगे नहीं बढ सकता।

गावों म ग्राज पटवारी चीते से भी ग्रधिक भय का प्रतीक है। यदि गाँव मे कोई चीता ग्रा जाय तो गाव वाले सीधे उसे गोली मार सकते हैं लेकिन पटवारी को नहीं। यहाँ तक कि गाव की राजनीति भी इस महान् पटवारी के इशारे पर नाचा करती है।

मेरा प्रतीत होता है कि ऊपर से लगा कर नीचे तक पचायती राज के बारे मे हम संदेह ग्रस्त हैं। यदि पचायती राज विकास का नया यन्त्र है तथा राज्य के कल्याणकारी कार्यों को करने के लिए है तो फिर सम्पूर्ण कार्यक्रम को पचायती राज पर ही ग्राधारित किया जाना चाहिए। पचायती राज सस्थायें स्थानीय स्वशासन सस्था एव विकास की एजेंसी के रूप म स्थिर हो चुकी हैं क्योंकि यह स्वय की नीति ग्रौर स्वय की ग्राय के साधन सृजित करती हैं।

सविधान मे मान्यता

हमारे यहा तीन सूचियां हैं —एक समवर्ती सूची दूसरी सघ सूची ग्रौर तीसरी राज्य सूची। लेकिन ग्रब इसमे एक चौथी सूची पचायत सूची भी जोडी जानी चाहिए। जब तक कि पचायती राज सस्थाग्रो के बारे म भारत के सविधान के ग्रन्तगत शक्तियो का उचित रूप से उल्लेख नहीं किया जाता है तब तक य सस्थाय उन उद्देश्यो को पूरा करने में सफल नहीं होंगी जिनकी कि हम उनसे ग्रपेक्षा करते हैं।

दुर्भाग्य से भारत म योजना को केन्द्रीकृत कर लिया गया है। देश म राज्य योजना ग्रौर राष्ट्रीय योजनायें ह। लेकिन ग्रब पचायती राज की स्थापना हो गई है ग्रत प्रशासन के मामले मे जनता के चुने हुए प्रतिनिधियो की ग्रावाज का सम्मान करना होगा। जिस स्तर का व प्रतिनिधित्व करते हैं उस स्तर पर उन्हें योजना बनानी चाहिए। यह उनकी उचित माग है तथा केन्द्रीय योजना एव राजकीय योजना मे कुछ ऐसे खण्ड मौजूद हैं जिनम कि ग्राम ग्रायोजनाग्रो या पचायती राज सस्थाग्रो के सहयोग की ग्रावश्यकता होती है। इसलिए प्रत्यय गाव की ग्रपनी एक योजना होनी चाहिए तभी राष्ट्रीय लक्ष्या को प्राप्त किया जा सकता है।

पंचायती राज आयोग

देश म पचायती राज व्यवस्था के श्री गणेश को सात वर्ष पूरे होने को हैं। राजस्थान से प्रारम्भ कर सत्ता के विकेन्द्रीकरण का यह प्रयोग गुजरात, महाराष्ट्र, आन्ध्र उत्कल, बिहार, उत्तरप्रदेश और पजाब आदि राज्यों तक फैल गया है। यद्यपि विभिन्न राज्यों म पचायती राज संस्थाओं के स्वरूप व कतव्य विधान की व्यवस्था भी भिन्न भिन्न ही है किन्तु एक भय जो सवत्र व्याप्त है वह यह कि क्या ससदीय शासन पद्धति के अन्तर्गत विभिन्न बहुमत वाले राजनीतिक दल की सरकारें निस्वाथ और निलिप्त भाव से पचायती राज संस्थाओं को आगे बढन म योग द सकेंगी ? क्या कोई भी कदम उठाने से पूर्व ये सरकारें उस कायवाही का उनके अपने दल पर क्या प्रभाव पडेगा यह नहीं सोचेंगी ? यदि इसे और भी सकीर्ण दायरे में लेकर सोचा जाय तो क्या सरकार म बठने वाला राजनीतिक दल का प्रतिनिधि या उच्च प्रशासनिक अधिकारी खुशी खुशी सत्ता किसी अन्य क हाथ म सौंपने को तैयार हो जायेंगे ? माना कि पचायती राज व्यवस्था का सारा कानूनी ढांचा विधान मडलों द्वारा पारित अधिनियमों की सीमा में होता है जिसमे विरोधी दल के सदस्य भी सम्मिलित रहत हैं। पर व्यवहार म उन अधिनियमों के आधीन नियमो या नियम बनान तथा उनके प्रासंगिक अर्थ और व्याख्या देन का काम शासन तंत्र म लगे राजनीतिक दल क प्रतिनिधियों तथा उच्च प्रशासनिक अधिकारियों के ही हाथ म रहता है। अत इसे बात की क्या गारन्टी है कि वे इन नियमों की व्याख्या अपन दल या अपन वर्ग के हित म नहीं करेंगे।

यह अच्छी बात ही रही कि हाल में पचायतों के चुनावों म न तो प्रत्याशियों को दलीय आधार पर टिकिट ही दिये गये और न उन्हें इस आधार पर चुनाव चिन्ह ही प्रदान किये गये। किन्तु फिर भी इस सभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता कि चुनाव लडने वाले व्यक्तियों को अप्रत्यक्ष या प्रत्यक्ष रूप से किसी न किसी राजनीतिक दल का समथन या सहयोग अवश्य मिला हो और निर्वाचन म सफल होन पर वह व्यक्ति उस दल के साथ अपनी सहानुभूति अवश्य रखगा। ऐसी भी शिकायतें सामने आई हैं कि एक गुट विशेष के हाथ म पचायत या पचायत समिति की सत्ता आ जान पर विपक्षियों को विकास कार्यों के लिए सहायता या अनुदान प्राप्त करना असभव हो गया। इस प्रकार गाव का समिति क्षत्र का विकास एकांगी ही रह जायेगा। इसके अतिरिक्त इस व्यवहार से जो प्रतिक्रिया पदा होगी वह कटुता, वमनस्य, ईर्ष्या और द्वेष का प्रसार करेगी और इसका परिणाम हम यादवों के छोटे छोटे गणों के इतिहास की याद दिलाता है। वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत इस प्रकार की बुराइयों का प्रतीकार कहीं भी नहीं है।

वर्तमान परिस्थितियों में हम पंचायती राज संस्थाओं से बहुत अधिक की उपेक्षा भी नहीं कर सकते। एक तो यह गांवों में स्वायत्त शासन का प्रारम्भ मात्र है और गांवों में अभी इसकी स्वस्थ परम्पराओं का निर्माण नहीं हुआ है। दूसरे ऊंचे स्तरों पर भी सार्वजनिक जीवन के गिरते हुए नैतिक स्तर को देखकर उनसे यह अपेक्षा करना कि वे निस्वार्थ और दलगत संकीर्णता से ऊपर उठकर ग्राम समुदाय की सेवा कर सकेंगे, बहुत अधिक होगा। इसलिए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि पंचायती राज के लिए चुने हुए जन प्रतिनिधियों तथा कर्मचारियों दोनों को ही मार्ग निर्देशन देने और उनके कार्यों की देख रेख के लिए एक राज्यस्तरीय संस्था का होना आवश्यक है।

अब प्रश्न उठता है कि इस संस्था का स्वरूप और संगठन कैसा हो? अब अब भी इन संस्थाओं तथा इनके कर्मचारियों की अनियमितताओं पर सरकारी तंत्र का अंकुश है। ऐसी अनियमितताओं की जांच होती है और अपराधियों को दण्ड देने की व्यवस्था है। पर यह सब सरकार की नौकरशाही के अधिकार में है। नौकरशाही चाहे कितनी ही निष्पक्ष होने का दम क्यों न भरे वह नौकरों या कर्मचारियों का पक्ष लेने लगी ही। फिर अधिकार सम्पन्न अधिक होने पर जन प्रतिनिधियों की स्वायत्तता और स्वतन्त्रता में भी बाधक हो सकती है। भले ही, प्रत्यक्ष रूप से यह उनके काम में बाधा न डालता हो पर जन प्रतिनिधियों में प्रच्छन्न भय तो विद्यमान रहता ही है और इस प्रकार वे स्वयं को नौकरशाही से हीन मानने लगते हैं।

इसलिए संस्था भी पूर्णतः स्वायत्त होनी चाहिए और काफी व्यापक अधिकार इसके पास होने चाहिये। वास्तव में इसे हम पंचायती राज कमीशन कह सकते हैं। यह संस्था लोक सेवा आयोग निर्वाचन आयोग विश्वविद्यालय अनुदान आयोग सतर्कता आयोग जैसी सर्वाधिकार सम्पन्न संस्था होनी चाहिये। यह संस्था इस बात का प्रयत्न करेगी कि पंचायती राज संस्थाएं अपने वैधानिक कर्तव्यों और दायित्वों का भली प्रकार पालन करती है। इन संस्थाओं पर निगरानी रखने के लिए यदि स्वायत्त संस्था को ही उत्तरदायी बनाया जायगा तो उनके लोकतांत्रिक स्वरूप को भी कोई विक्षति नहीं पहुँचेगी और न इससे उनकी स्वायत्तता में ही किसी प्रकार कमी आयगी। किन्तु इस संस्था में कोई अवकाश प्राप्त न्यायाधीश या सार्वजनिक क्षेत्र का ऐसा तपा हुआ व्यक्ति होना चाहिये जिसके नैतिक व चारित्रिक पक्ष पर किसी को अंगुली उठाने की हिम्मत न हो। इस प्रकार यह आयोग पंचायती राज संस्थाओं की श्रद्धा व सम्मान का भाजन भी बन सकेगा।

यह आयोग यह भी ध्यान रखेगा कि राज्यों व केन्द्र से जो धनराशि पंचायती राज संस्थाओं को अपने कार्यक्रम व योजनाएं पूरी करने के लिए दी जाती है वह समय पर उपलब्ध हो जाती है। अच्छा तो यह होगा कि यह धनराशि इस आयोग को ही सौंप दी जावे और फिर आयोग विभिन्न कार्यक्रमों व योजनाओं की लागत, जन सहयोग की मात्रा और उन कार्यक्रमों से होने वाले लाभ को देख कर उपयुक्त धनराशि पंचायती राज संस्थाओं को बांट दे। लाभकारी योजनाओं के ऊपर होने वाले व्यय पर यह आयोग इन संस्थाओं से ब्याज भी वसूल कर सकता है। इसी प्रकार जीवन बीमा निगम वित्त निगम, रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया तथा इसी प्रकार की अन्य संस्थाओं से भी यह आयोग रुपया प्राप्त कर पंचायती राज संस्थाओं का मार्फत विकास कार्यों में लगाये। इससे न केवल विकास की गति में ही तीव्रता आयगी बल्कि आर्थिक और वित्तीय मामलों में भी पंचायती राज संस्थाएं सरकार या नौकरशाही का मुंह न ताकेंगी और अपने पांव में स्वतन्त्र रहेंगी।

पर यह आयोग केवल इन संस्थाओं को धनराशि उपलब्ध कराकर ही अपने कर्तव्य की इतिश्री नहीं समझ लेगा। उसका यह भी दायित्व होगा कि संस्थाएं प्राप्त धनराशि का उचित ढंग से तथा उचित मद में ही प्रयोग करती है या नहीं यह देखे। यदि इस बात की निगरानी नहीं रखी गयी तो पंचायती राज वरदान देने के स्थान पर अभिशाप बन जायेगा।

आयोग को यह भी ध्यान रखना होगा कि जैसे इन संस्थाओं के सरकारी हस्तक्षेप तथा आश्रितता से मुक्त रखना आवश्यक है उसी प्रकार इन्हें एक दूसरे पर आश्रित छोड़ना भी खतरनाक है। कहीं 'मत्स्य न्याय' के अनुसार बड़ी संस्थाएं छोटी संस्थाओं पर अनुचित रूप से हावी होकर उन्हें समाप्त ही न कर दें। बल्कि होना यह चाहिए कि बड़ी संस्थाएं निचले स्तर की संस्थाओं को आवश्यक मार्ग दर्शन और सहायता देकर आगे बढ़ने और ऊंचा उठने में योग दें। इसलिए पंचायती राज के त्रिस्तरीय ढांचे का स्वरूप ऐसा हो कि एक संस्था दूसरे का आधार तो हो पर वह उसमें आत्मसात् न हो सके। इससे प्रत्येक संस्था का अपना स्वतन्त्र दायरा बन जायेगा और इस प्रकार की शिकायत का मौका न मिल सकेगा कि समिति में एक पक्ष का बहुमत हो जाने पर दूसरे पक्ष की पंचायतों को विकास के लिए साधन सुविधाएं नहीं दी जाती।

जिस प्रकार संसदीय लोकतन्त्र व्यवस्था के संचालन के लिए जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों व प्रशासनिक अधिकारियों व कर्मचारियों के बीच आपसी सौमनस्य और समन्वय आवश्यक है उसी प्रकार निचले स्तर की लोकतान्त्रिक संस्थाओं के लिए भी यह अनिवार्य है। जन प्रतिनिधियों का काम नीति निर्धारण करना होता है। उन नीतियों को असली जामा पहनाने का काम प्रशासनिक तन्त्र का है।

यदि प्रशासन के ये दोनों पक्ष एक रसता व सामञ्जस्य से काम नहीं करते तो सरकार की नीतियाँ चाहे कितनी ही सुदृढ़ व सोच विचार और नव-नीयता पर आधारित हों उनसे जन कल्याण नहीं हो सकता कारण कि उनका क्रिया न्वयन व अनुपालन उसी भावना के साथ नहीं किया जाता। इसलिए पंचायती राज की शीर्ष संस्था का यह भी दायित्व होना चाहिए कि वह नीचे का लोकतान्त्रिक संस्थाओं में जन प्रतिनिधियों व प्रशासनिक कर्मचारियों में आपसी समन्वय व सौमनस्य बनाये रखे। इसके लिए इन दोनों वर्गों के दायित्व व अधिकारों के बीच स्पष्ट सीमा रेखा खींचनी होगी। इस प्रकार के नियम निर्धारित करने होंगे जिससे दोनों के बीच किसी भी मुद्दे को लेकर आपसी खींच तान व मन मुटाव की गुंजाइश न रहे। इन नियमों का उल्लंघन करने पर चाहे वह राज्य कर्मचारी हो या जन प्रतिनिधि सबके लिए आयोग द्वारा कड़े दण्ड का विधान होना चाहिए।

दण्ड विधान के साथ ही उनके हितों के संरक्षण का भी इस शीर्ष संस्था को पूरा ध्यान रखना होगा। कर्मचारियों में अनुशासन बनाये रखने के लिए यह भी आवश्यक है कि उनके हितों की पूरी तरह देखभाल की जाये। उन्हें जन प्रतिनिधि गण दलबन्दी का शिकार कर व्यर्थ में परेशान न करें। ऐसा भी न हो कि निर्वाचित प्रतिनिधि समिति की बैठक में तो उन नीतियों को अमली रूप देने की सिफारिश करें और बाद में अपने अपने क्षेत्रों में उन्हें कार्यान्वित करने में बाधा उत्पन्न करें। कर्मचारी जनों को निर्धारित नीतियों को क्रियान्वित करने का पूरी छूट होनी चाहिए और मार्ग में आने वाली बाधाओं से निपटने के लिए पूरे अधिकार भी उनके पास होने चाहिए। उन्हें बात बात के लिए निर्वाचित प्रतिनिधियों का मुंह न

ताकना पड़े । ताकि निर्धारित नीतियों व कार्यक्रमों की क्रियान्विति में यदि कमी रहे तो कर्मचारियों से ही इसके लिए उत्तरदायी ठहराया जा सके । इससे एक ओर जन प्रतिनिधियों को नीति निर्धारण के लिए पूरी स्वतन्त्रता प्राप्त होगी तो दूसरी ओर उनका क्रियान्वयन भी तत्परता व क्षमता के साथ हो सकेगा ।

इस प्रकार पंचायती राज का यह ऐसी शीर्ष संस्था होगी जो उन्हें आवश्यक मार्ग दर्शन व सहायता तो देगी ही आवश्यकता के समय वित्तीय साधन भी उपलब्ध करेगी । जन प्रतिनिधियों व प्रशासनिक कर्मचारियों को अनुशासन बद्ध रखेगी तथा उनकी पूर्ण स्वायत्तता की रक्षा भी करेगी । अभी जो अपील और निगरानी के अधिकार राज्य सरकारों के पास हैं उनसे इन्हें बहुत हद तक अपयश का भागीदार बनना होता है । राजनीति विरोधी पक्ष इन्हीं बातों को लेकर सरकार को कोसा करते हैं । इस स्वायत्त शीर्ष संस्था के अधिकार क्षेत्र में इन अधिकारों के दे दिए जाने पर सरकार इस प्रकार की आलोचना से बच सकेगी ।





निष्क्रिय ग्राम पचायतों को क्रियाशील कैसे बनाया जा सकता है?

—श्री गोपीनाथ गुप्ता

पचायती राज की त्रिसूत्री योजना चालू हुए लगभग सात साल का अर्सा हो गया है। या तो किसी भी राष्ट्र के जीवन म सात साल कोई विशष लम्बी अवधि नहीं होती। लेकिन विकासो मुख देश क लिए सात साल का समय कम अवधि भी नही मानी जा सकती। इसलिए अब समय आ गया है जबकि हम पचायती राज सस्थाओं द्वारा प्राप्त की गई उपलब्धिया के सदर्भ म यह विचार करना है कि पचायती राज का आधार-ग्राम पचायतें किस सीमा तक लोकतत्र का सदेश घर-घर पहुँचाने म सफल हुई हैं और ग्रामाण जीवन के पुनरुत्थान म उनका योगदान किस सीमा तक असरकारी नतीजे लाने म सफल हुआ है? साथ ही हमे पचायत राज की दूसरी सस्थाओ-पचायत समितिया एव जिला परिषदो के कार्य एव उनके द्वारा प्राप्त उपलब्धिया के सदर्भ म उन्हे भी अधिक सक्षम और सक्रिय बनाने के उपाय सोचते हैं।

अब यह बात किसी से छिपी नहीं रही है कि प्रस्तावित पचायत राज योजनायें सर्वाधिक महत्वपूर्ण सस्था पचायत समितियाँ रही हैं। उनके पास विकास योजनाओ के सचालन के लिए धनराशि रही है इसलिए सबकी दृष्टि उधर केन्द्रित होकर रह गई है। ग्राम पचायतो की यदा कदा कोई बठक हो जावे और पचायत समितियो से प्राप्त गश्ती-पत्रों पर कोई चर्चा हो जाये तो और बात है। गाँव म स्वैच्छिक जन सहयोग या श्रमदान प्राप्त करने अथवा गाँव की आर्थिक एव सामाजिक समस्याओ के समाधान के बारे में उनम प्राय नही के बराबर चर्चा होती है। ग्राम सभाओ की बठको म भी औपचारिकता

कता ज्यादा रहती है। उनमें बहुत कम उपस्थिति रहती है और वहाँ होने वाली चर्चाओं को सुनकर ऐसा महसूस होता है मानो ग्राम ग्रामीणों को पचायती राज की इस महत्वपूर्ण इकाई से कोई सरोकार नहीं है, उसके कामकाज मे कोई दिलचस्पी नहीं है।

जब तक ग्राम सभाओं एव पचायतों को प्राणवान एव आत्म निभर नहीं बनाया जायेगा तब तक देश के बहुसख्यक लोगो म लोकतत्र के प्रति निष्ठा पदा नहीं हो सकेगी। इसलिए इन सस्थाओं म व्याप्त निष्क्रियता दूर करने के लिए उपाय सोचना जरूरी है। इस दिशा म सबसे पहला कदम है पचायतो की आय बढान के लिए नये साधन पदा करना। आय बढान का सबसे आधारभूत साधन आज की परिस्थिया म लगान है। यदि पचायतों को अपने क्षेत्र की भूमि पर पूरा अधिकार हो जाये एव उस भूमि से प्राप्त होने वाले लगान को प्राप्त करने एव उसे खच करने का अधिकार मिल जाये तो न केवल पचायत आत्म-निभर बन सकता है बल्कि ग्राम सभा एव पचायत के सदस्य सभी की उसके कार्यों म दिलचस्पी बढ सकती है। आय बढने पर प्राथमिक शिक्षा चिकित्सा नये कूप निर्माण पुराने कुओं की मरम्मत, रास्ता का निर्माण ग्रामीण वन एव उद्यान की व्यवस्था आदि दायित्व उस पर डाले जा सकते हैं। जहाँ उक्त दायित्व पचायत पर पडे कि ग्रामवासियो की उसमें प्रति रुचि बढी। जाहिर है कि केवल लगान की आय मे उक्त सभी मदा पर होने वाले खर्च की पूर्ति नहीं हो सकेगी। इसलिए पचायत एव ग्रामसभा को ग्रामीण समाज की उदार भावनाओं को जागृत करके श्रमदान एव आर्थिक दान प्राप्त करने का प्रयास करना होगा। इस काय के निमित्त उन्हे हर महीने पद्रह दिन म गाँव के सब लोगो को एकत्र करना पडेगा और उनके सामने अपनी माँगें एव सुझाव पेश करने होंगे। ग्रामीण समाज को उस समय पचायत की कमिया एव खामिया पर चर्चा करने का अनुकूल अवसर मिलेगा और पचायत के सदस्यो को अपना आचरण सुधारने के लिए मजबूर होना पडेगा। आय बढाने के लिए पचायतो को कुछ कृषि भूमि आबादी म भी परिवर्तित करनी पडेगी। यह काय सब की सहमति से ही हो सकता है इसलिए गाँव सभा को इस सिलसिले म भी अधिक अधिकार हो जायेंगे।

आज सरपच पचायत का अध्यक्ष नहीं, पचायत समिति का एजेण्टमात्र है। वह अकलमद ग्रामीणों की दरख्वास्तें सिफारिश करके पचायत समिति के कार्यालय तक पहुँचाता है और पचायत समिति से जो कुछ कर्जा या अनुदान मिल जाये, उसे सबधित लोगो तक पहुँचाकर अपने कत्तव्य की इति मान लेता है। लेकिन ज्योंही पचायत को अपने क्षेत्र की भूमिपर अधिकार मिला कि उसकी पचायत समिति का एजेन्सी समाप्त हो जायेगी। उसका अधिकाश समय गाँव म बीतेगा और उसे वहाँ के दुख सुख के साथ एकाकार होना पडेगा। सरपच का महत्व बढाने की दृष्टि से यह तरीका भी अपनाया जा सकता है कि पचायत समिति की हर बठक के लिए ग्राम सभा द्वारा निर्वाचित व्यक्ति वहाँ जायें। इस व्यवस्था से हर तीन महीने म ग्राम सभा को कम से कम एक बार मिलने का मौका मिलेगा और अधिक सक्षम एव कुशल व्यक्ति को पचायत समिति म भेजने का अवसर मिलता रहेगा।

पचायत को अपने क्षेत्र मे मकानों, वाहनों, व्यवसायों एव उद्योगो पर कर लगाने का भी अधिकार दिया जाना चाहिए। ग्राम की सहकारी क्रय विक्रय समिति की आय का एक अश भी उस दिलाया जा सकता है। मेला से भी कुछ आय की जा सकती है लेकिन चुगी आदि भ्रष्टाचारी व्यापक स्रोत पचायतो से वापस ले लिये जाने चाहिये क्योंकि इनमे बेईमानी की ज्यादा गुजाइश रहती है। पचायतें विवाह एव अन्य सामाजिक उत्सवों पर कुछ दान प्राप्त करने की भी अधिकारिणी बनाई जा सकती है

लेकिन उस दान का स्वरूप अनिवार्य लाग-बाग नहीं होना चाहिए। गांव में कोई व्यक्ति बिना वारिस के मर जाये अथवा कोई व्यक्ति विरासत में अपनी सम्पत्ति पंचायत को देना चाहे तो यह अधिकार भी उसे दिया जाना चाहिये।

इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि कानून के द्वारा पंचायतों को जो कर लगान के अधिकार दिये गये हैं व कर भी अधिकांश पंचायतों ने नहीं लगाये हैं लेकिन आज की अनुत्तरदायित्वपूर्ण स्थिति में यह बात अवश्यंभावी है। यदि पंचायतों को कुछ ऐसे कार्य सौंप दिये जावें लेकिन पूरा करने के लिए रुपया जुटाना उनके लिए अनिवार्य हो जाये तो वे कर लगाने में कभी विलम्ब नहीं करेंगे। आज तो वे जानते हैं कि अनिवार्य कार्यों के लिए पंचायत समिति से पैसा मिल ही जायेगा। तब फिर वे कर लगा कर अपनी लोकप्रियता क्यों खोवें? आज गांव में जो काम होते हैं उसका पूरा श्रेय पंचायत को नहीं मिलता। यदि पंचायत अपने काम का पूरा श्रेय अपनाना प्रारम्भ कर दे तो पंचायत स्वतः ही अपनी आमदनी बढ़ा कर खर्च करने लग जायगा।

पंचायत समितियों का नियन्त्रण

आज पंचायत समिति को यह कानूनी अधिकार प्राप्त है कि वे ग्राम पंचायतों को ऐसे कार्य सम्पन्न कराने के लिए आदेश दे सकती हैं जिन्हें पूरा करने का दायित्व कानून द्वारा उन्हें सौंपा गया है लेकिन वे काम किस सीमा तक पूरे होते हैं यह किसी से छिपा हुआ नहीं है। पंचायत समितियों को ग्राम पंचायतों द्वारा लिये गये निर्णयों की अपीलें सुनने का भी अधिकार है लेकिन उनका नतीजा केवल मात्र पंचायतों की शक्ति कम होने के रूप में ही हमारे सामने आया है। यदि पंचायतों को वास्तव में क्रियाशील बनाना है तो इसके लिए पंचायत समितियों को सौंपे गये उक्त अधिकार सीमित करने पड़ेंगे। उन्हें स्वयं सोचने की प्रेरणा देनी होगी और प्रेरणा देने का काम-अथवा मार्ग दर्शन का जिम्मा पंचायत समितियों पर डाला जा सकता है। आज तो पंचायत समितियों में अफसरशाही का बोलबाला है और सरपंच अपना काम कराने के लिए सदैव अफसरों की ओर देखता रहता है। उसके लिए अक्सर लोग प्रधान से भी ज्यादा हैसियत रखते हैं क्योंकि पंचायत समिति के निर्णयों को क्रियान्वित करने की सारी शक्ति उनमें सन्निहित होती है। वे चाहे तो एक न एक अड़ंगा डाल कर पंचायत समिति के किसी भी निर्णय को बेकार कर सकते हैं। इसलिए सरपंच उन लोगों की हां में हां मिलाने में अपना लाभ देखता है। इस वातावरण में न तो वह क्रियाशील हो सकता है और न उसकी पंचायत एवं ग्राम सभा में जान आ सकती है। इसका एक मात्र रास्ता पंचायत समिति को सौंपे गये अधिकारों को सीमित करना है।

पंचायत समितियों को अधिक कार्यक्षम एवं कुशल बनाये जाने की आवश्यकता है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रसार अधिकारियों की संस्था के कर्तव्यों एवं दायित्वों पर गौर करना होगा। आज ये अधिकारी पंचायत समिति के प्रशासनिक नियन्त्रण में भले ही हों लेकिन वे अभी भी अपने सम्बन्धित विभागों से सम्बद्ध हैं। वे दोहरी व्यवस्था के अन्तर्गत काम करते हैं। इसलिए उनकी स्वामिभक्ति विभाजित रहती है। वे अपने कार्य में लापरवाही बरतें तो उनकी रोकथाम की कोई व्यवस्था नहीं है। केवल मात्र नवाचला करवा देने से उनमें कर्तव्य निष्ठा पैदा नहीं की जा सकती। इसलिए पंचायत समितियों को प्रसार अधिकारियों पर पूर्ण नियन्त्रण रखने के व्यापक अधिकार दिये जाने चाहिए।

इसका एक परिणाम सरपचों म अधिक आत्म विश्वास के रूप में हमारे सामने आयेगा जिससे वह अपनी पंचायत को अधिक क्रियाशील बनाने की प्रेरणा मिलगी।

पंचायत समितियों में कार्यविधि के जो नियम बनाये गये हैं उन्हें सरल किये जाने की भी जरूरत है। इन नियमों के कारण पंचायत समितियों की बैठकों में लिये गये निर्णय देरी से क्रियान्वित हो पाते हैं। निर्णय देरी से अमल में आने का परिणाम यह निकलता है कि अपने सरपंच की कार्यकुशलता एवं सामर्थ्य के प्रति ग्रामवासियों का विश्वास एक सीमा तक डिग जाता है जिसका असर उसकी क्रियाशीलता पर पड़ता है। गांव वाले भी यह समझ लेते हैं कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एक ढकोसला है। आज भी वास्तविक ताकत सरकारी कर्मचारियों के हाथ में है तब फिर बेकार मगजमारी करने में क्या लाभ है? फलत: वह पंचायत एवं ग्राम सभा दोनों के प्रति उदासीन हो जाता है और उनके कार्यों में सक्रिय दिलचस्पी नहीं लेता।

जिला परिषद

मौजूदा कानून में जिला परिषदों के जिम्मे पंचायत समितियों के कार्य में समन्वय बैठाने एवं उनकी देखरेख करने का कार्य सौंपा गया है। उनकी बैठकों में विकास कार्यों के बारे में चर्चा हो सकती है विभिन्न विकास कार्यक्रमों के लक्ष्य निर्धारित किये जा सकते हैं लेकिन उन लक्ष्यों को पूरा कराने का कोई तरीका उनके पास नहीं है। इसलिए अधिकांश जिलों में जिला परिषदें निष्क्रिय संस्थायें हैं। बैठकों के अलावा बाकी के दिनों में उनके कार्यालयों में दो चार बाबू बैठे बैठे गपशप किया करते हैं। इसलिए जिला परिषदों को अधिक सक्षम इकाई बनाये जाने की जरूरत है। यह तभी संभव है जब कलक्टर को जिला प्रमुख का सेक्रेटरी बना दिया जाय। विकास कार्यक्रमों में समन्वय बैठाने का दायित्व तभी जिला परिषदें सही माने में अंजाम दे सकती हैं। आज जिला प्रमुख के सीधे नियंत्रण में ऐसे अधिकारी नहीं हैं जो उसे अपने को सौंपे गये कर्तव्यों को पूरा करने में मदद दें। वे जिला परिषद् की बैठक में भले ही भाग ले लें लेकिन वे उसके निर्देशों के अनुसार काम करने के लिए बाध्य नहीं हैं। या तो अपने संबंधित विभागाध्यक्षों का नियंत्रण मानते हैं या एक अमुक सीमा तक कलक्टर का। जब तक वे निर्वाचित जिला परिषद के प्रति अपने कर्तव्यपालन के लिए कानूनन बाध्य नहीं किये जाते तब तक विकास कार्यक्रमों में समन्वय बैठाने का जो कार्य जिला परिषदों के सुपुर्द किया गया है उसे वे किस प्रकार पूरा कर सकती हैं?

पंचायती राज संस्थाओं पर राजकीय नियन्त्रण

—प्रो० मदनगोपाल शर्मा

(१) सत्ता का विकेन्द्रीकरण : उद्देश्य और नीति

पंचायती राज संस्थाओं के निर्माण के पीछे मूल उद्देश्य सत्ता का विकेन्द्रीकरण है। सत्ता के विकेन्द्रीकरण से ही सच्चे अर्थों में जन शासन अथवा लोकशाही संभव है और अन्ततः उसी से एक बृहत् जनसंख्या और विविध संस्कृतियों वाले देश की नित नयी बढ़ती ज्वलंत समस्याओं के समाधान की आशा की जा सकती है। एक बांध में चाहे कितनी ही अथाह जल-राशि संचित हो जब तक नहरों और उप नहरों द्वारा खेत खेत में जल धारा नहीं पहुँचाई जाती वह बांध केवल एक अनुपयोगी दिखावा मात्र है। किसी पावर हाउस में चाहे कितनी ही शक्ति का जेनरेटर या अणु रिएक्टर लगा हो जब तक घर घर में बिजली नहीं पहुँचा दी जाती नगर का अन्धकार दूर होने वाला नहीं है। ठीक इसी प्रकार समर्थ से समर्थ केन्द्रीय सत्ता भी एक अवरुद्ध बांध अथवा अनुपयोगी बिजली घर की तरह बेकार है जब तक उससे विकेन्द्रीकरण की प्रणाली द्वारा जल अथवा विद्युत शक्ति को खेत खेत और घर घर में नियोजित कर कर्म-लोक को सिंचित और ज्ञानलोक को आलोकित नहीं कर दिया जाता।

ऐसा नहीं है कि सत्ता के विकेन्द्रीकरण की यह मूल प्रेरणा हमारे नेताओं और नीति निर्माताओं की दृष्टि से ओझल रही है। योजना आयोग की समिति द्वारा नियुक्त अध्ययन दल ने जन तान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में जो सुझाव प्रस्तुत किये थे और जो राष्ट्रीय विकास परिषद् (नेशनल डेवेलपमेंट कौंसिल) द्वारा सन् १९५८ में स्वीकार कर लिए गये थे, उनमें स्पष्ट निर्देश है कि—

(१) देश में जनतन्त्र की रचना का मूल आधार ग्राम-जनतन्त्र होना चाहिए। ग्राम आधारित जनतन्त्र की सफलता मुख्यत तीन संस्थाओं—ग्राम पंचायत, ग्राम सहकारी समिति तथा ग्राम पाठशाला पर निर्भर है।

(२) राज्य सरकारें क्रमश कानून बनाकर स्थानीय योजनाओं के निर्माण और उन्हें अमल में लाने का उत्तरदायित्व, स्थानिक पंचायती राज संस्थाओं को हस्तान्तरित करेंगी।

(३) राज्यों की पंचवर्षीय योजनाएं और वार्षिक योजनाएं भी जिला तथा खण्ड स्तरों में विभक्त की जाएंगी। इसी श्रृंखला में प्रत्येक ग्राम की अपनी स्वतन्त्र विकास योजना होगी जो स्थानीय आवश्यकताओं और साधनों पर आधारित होगी।

इसी प्रकार सन् १९६६ में स्वायत्त शासन की केन्द्रीय परिषद् ने हैदराबाद की अपनी पांचवीं बैठक में राज्यों द्वारा राष्ट्रीय विकास परिषद की नीतियों के क्रियान्वयन का लेखा जोखा लेते हुए इस बात पर जोर दिया कि सबसे महत्वपूर्ण बात है लोगों को सत्ता का वास्तविक हस्तान्तरण। यदि इसे हम सही ढंग से कर लेते हैं तो विभिन्न राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं के स्वरूप और प्रणाली में परिस्थितिगत विभिन्नता कोई विशेष अर्थ नहीं रखती। कमेटि ने इस उद्देश्य के लिए जो मोटी मोटी सिफारिशें राज्य सरकारों को की उनमें स्वायत्त शासन की त्रिस्तरीय रचना प्रणाली (थ्री टायर स्ट्रक्चर) के अतिरिक्त अन्य सिफारिशों में जोर देकर स्पष्ट कहा गया है कि—

(१) स्वायत्त संस्थाओं को अधिकार और दायित्व का वास्तविक हस्तान्तरण होना चाहिए।

(२) इन नव निर्मित स्वायत्त शासी संस्थाओं के लिए पर्याप्त साधन जुटाए जाने चाहिए जिनसे वे अपने उत्तरदायित्वों का ठीक से निर्वाह कर सकें।

(३) समस्त विकास योजनाएं इन्हीं के सुपुर्द की जानी चाहिए तथा

( ) सत्ता के हस्तान्तरण की जो पद्धति अपनाई जाय वह ऐसी होना चाहिए कि जिससे भविष्य में भी सत्ता के अधिकाधिक विकेन्द्रीकरण की गुंजाइश रहे।

जिला स्तर तक की प्रशासनिक समस्याओं पर दी गई श्री वी० टी० कृष्णमाचारी की रिपोर्ट में भी स्पष्ट रूप से कहा गया है कि "राज्य और जिला स्तरीय प्रशासन की नई व्यवस्था में पंचायती राज संस्थाओं के गठन और कार्य को एक मुख्य कड़ी समझा जाना चाहिए क्योंकि संविधान में निर्धारित आर्थिक सामाजिक नीतियों के उद्देश्यों की सिद्धि उन्हीं पर निर्भर है।

इन समस्त नीति निर्देशक घोषणाओं के अधिकृत उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि सत्ता के वास्तविक न कि नाममात्र के दिखावे के हस्तान्तरण की आवश्यकता न केवल राजनीतिक नेताओं के चिन्तन भाषण तक सीमित रही है वरन् पदासीन और अधिकार सम्पन्न प्रशासनिक अधिकारियों तथा संस्थाओं द्वारा भी उनका समावेश मान्य दस्तावेजों में हो चुका है। अत कायदे से सत्ता के वास्तविक विकेन्द्रीकरण की दिशा में कोई बाधा नहीं रह जाना चाहिए थी। किन्तु आइए हम देखें कि क्या सत्ता

का वास्तविक विकेन्द्रीकरण और लोकतन्त्रीकरण हुआ भी है ? सत्ता के मुख्य क्षेत्र दो ही हैं (१) वित्तीय तथा (२) प्रशासनिक। वर्तमान पचायती राज सस्थाओं का देशव्यापी अध्ययन हमे इस निष्कर्ष के लिए विवश करता है कि इन दोनों ही क्षेत्रों में आज पचायती राज सस्थाओं पर राजकीय नियन्त्रण सुदृढ है। उसकी पकड ढीली नहीं हुई है। जो स्वराज्य की गंगा शिव की जटाओं से निकल कर बही है उस मार्ग में ही राजकीय नियन्त्रण के नागपाश ने अवरुद्ध कर लिया है।

(२) राजकीय नियन्त्रण वित्तीय क्षेत्र

वित्तीय मामलों की मूल कुंजी है बजट बनाने और स्वीकृत करने का अधिकार। यही वह चाबी है जिससे अधिकारों का तिलस्मी खजाना खुलता है। पचायती राज सस्थाओं के आर्थिक साधन जुटाने के प्रश्न में हम विस्तारमय से नहीं जाएंगे। वह एक पृथक प्रश्न है जिसका सम्बन्ध साधन से अधिक है सत्ता से कम। जसे भी साधन हो और जिस किसी भी क्षेत्र से जुटाए जाए अन्तिम प्रमुख प्रश्न बना ही रहेगा कि उन साधनों को व्यय करने का अधिकार किसे है ?

इस दृष्टि से हम देखते हैं कि इस त्रैस्तर रचना प्रणाली पर आधारित देशव्यापी पचायती राज सस्थाओं के लिए इस तनिक सी बात पर चार पृथक मापदण्ड निर्मित हैं जिन्हें हम विकास के क्रमिक सोपानों के रूप में इस प्रकार रख सकते हैं—

(१) पहला वर्ग उन राज्यों का है जहां ग्राम पचायत का बजट भी राज्य सरकार अथवा उसके द्वारा नियुक्त प्रतिनिधि अधिकारी द्वारा स्वीकृत किया जाता है — इसमें जम्मू कश्मीर मसूर पश्चिम बगाल दिल्ली और हिमाचल प्रदेश के राज्य हैं। मसूर में तालुका बोर्ड का चीफ एक्जीक्यूटिव अफसर दिल्ली में डिप्टी डाइरेक्टर ब्लाक पचायत समिति हिमाचल प्रदेश में डिस्ट्रिक्ट पचायत अफसर तथा जम्मू कश्मीर और पश्चिम बगाल में राज्य द्वारा समय-समय पर नियुक्त अधिकारी यह कार्य करता है।

(२) दूसरा वर्ग उन राज्यों का है जहाँ ग्राम पचायत का बजट राज्य सरकार अथवा उसके द्वारा नियुक्त किसी अधिकारी द्वारा नहीं बल्कि ग्राम पचायत से बडी किसी पचायती राज सस्था की इकाई द्वारा स्वीकृत किया जाता है। इस वर्ग के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश आंध्र प्रदेश असम बिहार, महाराष्ट्र उडीसा तथा राजस्थान राज्य हैं जिनमे ग्राम पचायत के बजट को स्वीकार करने का अधिकार क्रमश क्षेत्र समिति पचायत समिति, आंचलिक पचायत तथा पचायत समिति को है। सक्षेप में इन सभी राज्यों में ग्राम पचायत का बजट उससे ऊपर की बडी स्वायत्त शासन इकाई करती है।

(३) तीसरा वर्ग उन राज्यों का है जहां ग्राम पचायतें स्वय अपना बजट स्वीकार करती हैं। इसके अन्तर्गत केरल मध्य प्रदेश मद्रास और गोवा दमन और दीव के राज्य हैं।

(४) चौथे वर्ग का प्रतिनिधि अकेला पजाब राज्य है जहां ग्राम पचायत का बजट ग्राम सभा स्वीकार करती है। यह ग्राम सभा ग्राम पचायत को चुनने वाले क्षेत्र के समस्त मतदाताओं की वध और मान्य सस्था है। यही आदर्श स्थिति है। इसके प्रत्येक करदाता स्वय तय करता है कि वह अपने द्वारा दिये गये पसे का उपयोग कसे करे। वह अपने पसे को खर्च करने के लिए पात्र कुपात्र के चुनाव के चक्कर

म पड़कर भुलाव और पछताने की स्थिति म नहीं पड़ता। वह स्वय अपने उपभोग का चुनाव करता है। दूसरे शब्दा म वह अपनी पूजी खचने या लगाने क लिए राजनीतिक मुनीम गुमाश्ते को नहीं चुनता बल्कि खुद अपनी इच्छा स अपनी पूजी खचता है। वह ऊपर से आरोपित उपभोग के लिए बाध्य नहीं है बल्कि स्वय एच्छिक उपभोग का स्वतन्त्र अधिकारी है। इसलिए पैसे की वसूली और खच म अनिच्छा असन्तोष, बेईमानी, उपेक्षा अथवा मजबूरी जस समस्त दुगुणो का इस एक ही व्यवस्था स काफी हद तक सफाया हो जाता है। क्या हम आशा करें कि अन्य राज्य भी इस विषय म यही पद्धति यथाशीघ्र अपनाएगे?

इसी प्रकार पचायत समितिया स्वय अपना बजट स्वीकार करती हो एस राज्य सिफ महाराष्ट्र और राजस्थान हैं। गुजरात उत्तर प्रदेश तथा असम की भी इससे मिलती-जुलती स्थिति है जहा पचायत समिति की समस्तरीय सस्थाए क्रमश तालुका पचायत, क्षत्र समिति तथा मोहकमा परिषद अपना बजट स्वय स्वीकार करती ह। पचायत समिति से बड़ा स्वायत्त इकाई जिला परिषद् जहा पचायत समिति का बजट स्वीकार करती हैं ऐसे राज्यों म आंध्र बिहार मध्य प्रदेश उड़ीसा राजस्थान और पश्चिम बगाल हैं। मद्रास और मसूर भी इसी वग मे हैं जहा इकाई उसी स्तर की है किन्तु नाम मे अन्तर है। मद्रास म य पचायत यूनियन कौंसिल और मसूर म डिस्ट्रिक्ट डेवलपमण्ट कौंसिल कहलाती है। हिमाचल प्रदेश म डिस्ट्रिक्ट पचायत अफसर को ही पचायत समिति का बजट स्वीकार करन का भी अधिकार है। इस प्रकार पचायत समिति की वित्त व्यवस्था म भी सत्ता के विविध मानदण्ड हैं। यह स्थिति उचित नहीं है। प्रथम वग के राज्यो के समानान्तर ही अन्य राज्यो म भी व्यवस्था हो जानी चाहिए जहाँ पचायत समिति अथवा भिन्न नाम वाली समस्तरीय स्वायत्त सस्था स्वय अपना बजट स्वीकार करन की अधिकारी हो।

इस त्रस्तर रचना की सबसे ऊची सीढ़ी जिला परिषद् स्वय अपना बजट स्वीकार करन म समथ केवल गुजरात मध्य प्रदेश महाराष्ट्र उड़ीसा, पजाब राजस्थान उत्तर प्रदेश राज्यो म है। दूसरा वर्ग उन राज्यो का है जहा जिला परिषदो का बजट राज्य सरकारें स्वीकार करती हैं। इस वग म आध्र प्रदेश बिहार तथा पश्चिम बगाल है। तृतीय वग ऐसे राज्यो का है जहाँ जिला परिषदो का अपना कोई बजट ही नहीं है। इस वग म असम, मद्रास, मसूर तथा हिमाचल प्रदेश की गिनती है। स्पष्ट है कि एकरूपता के लिए प्रथम वग क समकक्ष लाते हुए सभी राज्यो म जिला परिषदो को अपना स्वतन्त्र बजट बनान तथा उसे स्वीकार करने का अधिकार दिये जान की आवश्यकता बनी हुई है।

(३) राजकीय नियन्त्रण प्रशासनिक क्षेत्र

न केवल वित्तीय क्षेत्र में, प्रशासनिक क्षत्र में भी पचायती राज सस्थाओ पर राजकीय नियन्त्रण आवश्यकता से कहीं अधिक है। प्रशासनिक मामलो म कर्मचारियो की नियुक्ति पदच्युति व्यापक योजनाए (भावर प्लान मुख्य योजना) निलयो को बदलने का अधिकार पचायती राज सस्थाओ को भग करने का प्रावधान इत्यादि प्रश्न प्रमुख रूप से हमारे सम्मुख आते हैं। इन्हें हम एक-एक करके और विचार करें।

(१) कर्मचारियो की नियुक्ति पदच्युति अनुशासन एव दण्ड सम्बन्धी मामलों म अलग अलग राज्यों म अलग अलग प्रकार की व्यवस्था है। उदाहरण के लिए राजस्थान में जिला परिषदों तथा पचायत समितियो के कर्मचारियों के पदों के लिए भर्ती। इस कार्य के लिए गठित एक राज्यस्तरीय चुनाव

कमीशन द्वारा होती है जिसमे दो सदस्य राज्य द्वारा मनोनीत होते हैं तथा तीसरा सम्बन्धित जिले का प्रमुख। यह कमीशन योग्यता के आधार पर केवल उम्मीदवारो मे से चुनाव कर केवल पात्रता सूचि (मिरिट लिस्ट) बनाता है। वास्तविक नियुक्ति का कार्य तो एक पृथक सगठन जिला इस्टेब्लिशमेंट कमेटी के जिम्मे है जिसम जिले का कलक्टर जिला प्रमुख तथा एक पचायत सर्विस चुनाव कमीशन का सदस्य-ये कुल तीन सदस्य होते हैं। इस प्रकार पचायत राज सस्थाओ मे कमचारियो के चुनाव के लिए पृथक तीन सदस्यीय इकाई है और उनकी नियुक्ति का काय दो पृथक सगठन करें जिससे व्यय ही समय और साधन का अपव्यय और काय म विलम्ब और शिथिलता हो। वास्तविक उद्देश्य तब समझ म आ जाता है जब हम इन दोनो सगठनो के रचना स्वरूप पर विचार करते हैं। चुनाव कमीशन म एक सदस्य चुनाव कमीशन के तथा एक जिला प्रमुख—इस प्रकार एक निर्वाचित जन-प्रतिनिधि तथा दो राज्य कमचारी होते हुए भी अपेक्षाकृत स्वतन्त्र शक्ति वाले सदस्य हुये जिसमे राजकीय नियन्त्रण के लिये खतरे की घण्टी के आसार हो सकते थे। अत वास्तविक नियुक्ति के त्रिगुट म राज्य के सर्वाधिक अधिकार सम्पन्न कर्मचारी-कलेक्टर को प्रविष्ट कर प्रत्यक्ष राजकीय नियन्त्रण के लिए अवसर प्रस्तुत कर लिया गया है। यह जन-प्रतिनिधि तथा कथित अपेक्षाकृत निष्पक्ष और स्वतन्त्र राज्य कर्मचारी में या तो अविश्वास का द्योतक है या इसम अपनी मनमानी करने की इच्छा का सूचक। अन्यथा कौनसा कार्यकुशलता या न्याय सगतता का आधार इसके पीछे खडा जा सकता है? कमचारियो म स अपनो पसन्द के पात्र को चुन के स्थान पर नियुक्ति के लिए कलेक्टर की कृपाकाक्षा पर निभर रहना होगा। यह लोकशक्ति म अविश्वास का ही सूचक है। गुजरात म कुछ पदो के लिए राज्य पचायत सर्विस सिलेक्शन बोर्ड तथा कुछ छोटे स्तर के पदो के लिए जिला पचायत सर्विस सलेक्शन कमेटी कमचारियो का चयन और नियुक्ति करती है। महाराष्ट्र म तकनीकी सवाओ के लिए चयन और नियुक्ति डिवीजनल चुनाव बोड द्वारा की जाती है तथा गर तकनीकी कर्मचारियो का चुनाव और भर्ती जिला चुनाव बोड द्वारा। आन्ध्र प्रदेश तथा अन्य दूसरे कई राज्यो म चुनाव जिलास्तरीय कमेटी या बोड द्वारा किया जाता है।

इस सारे विश्लेषण के बाद हमारा सुझाव यह है कि चयन तथा नियुक्ति के लिए पृथक सगठन न होकर एक ही हो जो राज्यस्तरीय हो। इसम जिला प्रमुख चुनाव कमीशन के सदस्य हो तथा सम्बन्धित विषयो के विशेषज्ञों को भी आमन्त्रित किया जाय जिससे तकनीकी सलाह भी मिल सक तथा विषय के विशेषज्ञ का अनुभव भी प्राप्त हो सके।

(२) कमचारियो के अनुशासन और नियन्त्रण की दृष्टि से, आन्ध्र प्रदेश को छोड शेष राज्यो म पचायत समिति के एक्जीक्यूटिव अफसर के कार्यो की गोपनीय रिपोर्ट किसी सरकारी अधिकारी-अधिकांशत कलेक्टर और कहीं-कहीं डिप्टी कमिश्नर और यहा तक कि जिला कृषि अधिकारी द्वारा तयार की जाती है। केवल आन्ध्र प्रदेश म ही यह अधिकार पचायत समिति के अध्यक्ष या प्रधान को है। मद्रास मैसूर उडीसा राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश मे कलेक्टर यह रिपोर्ट तयार करते समय पचायत समिति के प्रधान की राय को भी मध्य-नजर रखता है। इस प्रकार मुख्य रूप से पचायत समिति के अधिकारी को दण्ड देने का अधिकार राज्य सरकार या उसके किसी अधिकारी म निहित है। सिर्फ पजाब ही ऐसा राज्य है जहाँ पचायत समिति को अपने अधिकारी की निंदा करने और वेतन वृद्धि रोकने का अधिकार दिया गया है। इस प्रकार यहाँ की त्रिविध प्रचलन है राजकीय निर्वाचित जन प्रतिनिधीय तथा सम्मिलित। इन तीनों प्रणालियो के कार्य के परिणाम को देखते हुए इस विषय मे कोई ऐसा हल खोजा जाना चाहिये जिसम

सभी के हित रक्षित हों। कोई एक दूसरे के दबाव या मान के लिए विवश न हो। न नौकरशाही का प्रतिनिधि कर्मचारी से जड़ खरीद गुलाम की तरह बर्ताव कर सके और न ही नौकरशाही के विसात की एक अदना प्यादा तिरछे चलकर जन प्रतिनिधि को शह या मात दे सके। एक ओर नया सत्ता-मद है दूसरी ओर पुराना सत्तामोह। एक नया चढ़ता नशा है, दूसरी ओर खुमार जो उतरना नहीं चाहता। अब इन दोनों की टक्कर का बचाव के लिए बहुत कुशलता और सूझ-बूझ की व्यवस्था की आवश्यकता है।

जिला परिषद् के मुख्य अधिशासी अधिकारी की गोपनीय रिपोर्ट तैयार करने का अधिकार केवल आन्ध्र प्रदेश में जिला परिषद् के अध्यक्ष का है। अन्यत्र यह अधिकार राज्य सरकारें अथवा उनके द्वारा नियुक्त अधिकारी में निहित है। उड़ीसा और राजस्थान में मिला-जुला व्यवस्था है। जहां राजकीय अधिकारी जिला परिषद् के प्रमुख अथवा अध्यक्ष की राय को गोपनीय रिपोर्ट तैयार करते समय निगाह में रखेगा ऐसी व्यवस्था है। हमारा सुझाव इस विषय में यही है कि पंचायत राज संस्थाओं के तीनों स्तरों—ग्राम, समिति तथा जिलास्तर के लिए एक-सी व्यवहार्य और सब हित साधक और समाधान कारक व्यवस्था होनी चाहिये। मुख्य अधिकार जन प्रतिनिधियों में निहित रहें किन्तु कर्मचारी को भी उसका सही दृष्टिकोण सुनाने के लिए कोई निष्पक्ष मञ्च सुलभ रहना चाहिए।

(३) जिला परिषदों के गठन और उनके कार्य क्षेत्र तथा अधिकारों के सम्बन्ध में भी विभिन्न राज्यों में परस्पर विरोधी और असंगत रचना दीख पड़ती है। जिला स्तर की यह पंचायती राज इकाई आन्ध्र बिहार महाराष्ट्र उड़ीसा पंजाब राजस्थान उत्तर प्रदेश, और पश्चिम बंगाल में जिला परिषद् के नाम से जानी जाती है तो गुजरात में डिस्ट्रिक्ट पंचायत मध्य प्रदेश में जिला पंचायत और मैसूर व मद्रास में डिस्ट्रिक्ट डवलपमेंट कौंसिल के नाम से। नाम में अन्तर कोई बड़ी बात नहीं है। किन्तु कार्य क्षेत्र और रचना-स्वरूप में भी बड़ा भिन्नता है। सभी अन्तर्राज्यीय इकाइयों में पंचायत समिति के स्तर की संस्थाओं के प्रतिनिधि चुन कर आते हैं लेकिन उनकी संख्या और चुने जाने का ढंग राज्यों में पृथक पृथक है। स्त्रियों तथा परिगणित जातियों और वन जातियों के प्रतिनिधियों के विशेष प्रतिनिधित्व की व्यवस्था में भी एकरूपता का अभाव है। मद्रास में स्त्रियों के विशेष प्रतिनिधित्व तथा पश्चिम बंगाल, मद्रास और उड़ीसा में परिगणित जाति तथा वन जाति के प्रतिनिधित्व के लिए व्यवस्था नहीं है। यह आचरण का दोहरा मानदण्ड कहां तक समीचीन है? क्या मद्रास में स्त्रियाँ इतनी शिष्ट हैं कि उन्हें विशिष्ट प्रतिनिधित्व की आवश्यकता ही नहीं है तथा क्या मद्रास, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा इन सभी राज्यों में परिगणित जातियों की संख्या का अभाव है अथवा वे परिगणित जातियों से उठकर स्वतन्त्रता के प्रभाव से सुखी सम्पन्न वर्ग में परिणत जातियाँ हो गयी हैं?

(४) जिला परिषदों के गठन के अतिरिक्त उनके कार्य और अधिकार क्षेत्र में भी विषमता है। मैसूर तथा मद्रास में जिला परिषदें केवल पंचायत समितियों के कार्य की देखभाल करने और उनके और राज्य सरकार के बीच की कड़ी का काम देने वाली संस्थाएं हैं जबकि आन्ध्र प्रदेश में इस कार्य के अतिरिक्त जिला परिषदों पर निश्चित प्रशासनिक उत्तरदायित्व भी है जैसे माध्यमिक शिक्षा का प्रसार प्रसार और व्यवस्था, औद्योगिक तथा व्यावसायिक स्कूलों का प्रबन्ध आदि। यही नहीं, पर विभिन्न विकास खण्डों में वे ही पंचायत समिति का भी कार्य करती हैं। महाराष्ट्र में जिला परिषदें, पंचायती राज संस्थाओं की

सबसे शक्तिशाली और सुदृढ कडी है और वे योजना बनाने विकास कार्यों को पूरा करने तथा राज्य सरकार को परामर्श देने का कार्य भी करती हैं। गुजरात उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में भी ये प्रशासनिक कार्य सम्पन्न संस्थाएं हैं जबकि असम, मद्रास मैसूर और हिमाचल प्रदेश में उनके लिए पृथक बजट प्रावधान तक नहीं हैं। मद्रास और मैसूर में तो प्रशासकीय कर्मचारी की भी सेवाएं उन्हें सुलभ नहीं है जबकि दूसरी ओर गुजरात और महाराष्ट्र जैसे राज्यों में एक वरिष्ठ भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिकारी-आई० ए० एस० उनके काम को देख भाल करता है। अन्य राज्यों में सब डिवीजनल अफसर के स्तर का कर्मचारी नियुक्त किया गया है।

इस सम्बन्ध में विचारणीय यही है कि क्या इस विषमता को किसी सीमा तक घटाया नहीं जा सकता और यदि महाराष्ट्र और गुजरात में जिला परिषदों को व्यापक अधिकार और दायित्व दिये जाने का अनुभव प्रतिकूल नहीं है तो अन्य राज्यों में इस व्यवस्था को अपनाना क्या उचित नहीं होगा?

(५) वेतन भोगी कर्मचारियों के नियमन नियन्त्रण की भांति ही निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा कर्तव्य भंग अथवा अपकर्म की स्थिति में उनकी पदच्युति इत्यादि का प्रश्न भी उठता है। इस विषय में भी भिन्न भिन्न राज्यों में भिन्न भिन्न व्यवस्थाएं हैं। प्रथम सोपान अर्थात् ग्राम पंचायत के स्तर पर पंचों की पदच्युति का अधिकार असम बिहार केरल, मध्य प्रदेश उडीसा और हिमाचल प्रदेश में राज्य सरकार में निहित है जबकि आन्ध्र प्रदेश में कमिश्नर मैसूर में डिप्टी कमिश्नर पंजाब में डाइरेक्टर लोकलबाडीज उत्तर प्रदेश में सब डिवीजनल मजिस्ट्रेट तथा गोवा दमन दीव में लेफ्टिनन्ट गवर्नर को यह अधिकार प्राप्त है। इस प्रकार तीन चौथाई से भी अधिक राज्यों में पंच तक को हटाने का अधिकार राज्य सरकार ने अपने हाथों में सुरक्षित रख गलत कार्य करने वाले पंचों को अपील आदि के लिए लम्बा समय और प्रक्रिया देकर मनमानी की छूट दे रखी है और उन पर स्वतन्त्र रूप से कार्य करने में भी इससे परोक्ष रूप से बाधा पहुँचाती है। सिर्फ दो ही राज्य ऐसे हैं जहां कि ग्राम पंचायत के पंच की पदच्युति का अधिकार राज्य सरकार को न होकर पंचायती राज संस्थाओं को प्राप्त है—एक तो महाराष्ट्र जहां जिला परिषदें पंचों की पदच्युति कर सकती हैं दूसरा मद्रास जहां स्वयं पंचायत अपने किसी सदस्य पंच को पदच्युत करने में समर्थ है। मद्रास की इस क्रान्तिकारी परम्परा को हम तो एक डग और आगे बढाते हुए कहना चाहेंगे कि पंच की पदच्युति का अधिकार ग्राम सभा में निहित होना चाहिए। वस्तुतः जो वरण करता है उसी को परित्याग का भी अधिकार मिले यही तर्क सम्मत और न्यायोचित दृष्टिकोण हो सकता है।

पंचायत समिति के सदस्य पंचों की पदच्युति का अधिकार केवल मद्रास में उससे ऊपर की जिला स्तरीय इकाई पंचायत यूनियन कौंसिल को दिया गया है। अन्यत्र सर्वत्र राज्य सरकारें अथवा उनके द्वारा नियुक्त कमिश्नर ही पदच्युति का आदेश दे सकता है और जिला परिषद् के स्तर की अन्तिम तृतीय सोपान की स्वायत्त शासन इकाई के सदस्य को पदच्युति का अधिकार सर्वत्र केवल राज्य सरकारों को ही है।

इस सारे प्रसंग में एक ही सिद्धान्त अपनाया जाना चाहिए कि जो चुने वही छोड़े, जो वरण करे वही परित्याग करे। इस दृष्टि से ग्राम पंचायत के सदस्य पंच की पदच्युति का अधिकार ग्राम सभा

को होना चाहिए तथा ग्राम पचायतो द्वारा पचायत समिति म भजे गये अपने सदस्यो को प्रस्ताव पारित कर वापिस बुलाने का या पदच्युत करने का अधिकार होना चाहिए और इस प्रकार पचायत समिति द्वारा जिला परिषद म भजे गये अपने प्रति निधियो के नियत्रण परावतन या पदच्युति आदि का अधिकार समिति को मिलना चाहिए। किन्तु इस विषय म एक कठिनाई यह है कि पचायत समितियो तथा जिला परिषदो का गठन सवत्र एक रूप नही है। प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि तथा राज्य सरकारो द्वारा मनोनीत महिला या परिगणित वग के प्रतिनिधि तथा सह वरित प्रतिनिधियो पर नियत्रण का प्रश्न सामने आता है। इसका उपाय यही है कि ग्राम पचायतो से पचायत समितियो के प्रतिनिधियो का और पचायत-समितियो से जिला परिषदो के प्रतिनिधियो का निर्वाचन होना चाहिए। दूसरे शब्दो मे प्रत्येक सोपान की पचायती राज सस्था अपने से अगले सोपान का स्वायत्तशासी इकाई के लिए मतदाता क्षेत्र का काय करे तथा महिला परिगणित जाति आदि के लिए स्थान भले ही निधारित कर दिए जाय किन्तु निर्वाचन इनका भी हो न कि मनोनयन अथवा सहवरण। निर्वाचको को ही प्रतिनिधियो को वापिस बुलाने हटाने या अन्य सलाह देने का अधिकार हो जिससे सारी सत्ता नीचे से ऊपर न आकर ऊपर से नीचे आती हुई ग्राम सभा तक अर्थात् ग्राम के प्रत्येक वयस्क मतदाता तक पहुँच जाए। तभी स्वराज्य की गगा नीचे से ऊपर की उल्टी दिशा को छोड कर ऊपर से नीचे की ओर को सही दिशा म बह सकती है। चुनाव करने वाला कोई और हो और रद्द करने वाला कोई और इसका साफ अर्थ है दायित्व और अधिकारो का पाथक्य और जन शक्ति, जन रुचि जन चेतना का प्रबोध। ग्राम सभा पच को चुन और कोई सरकारी कम चारी उसे हटा द यह ठीक वसा ही है जसे बेटा बहू का चुनाव तो करले किन्तु सास उसे घर से निकाल द। यह स्थिति पुरानी सामती वृत्ति की सूचक है। तीनो ही सोपानों पर इन निर्वाचित स्वायत्त सस्थाओ म राज्य की ओर से तकनीकी अथवा विशिष्ट विषयो के विशेषज्ञो की नियुक्ति की जाए तो परामर्श देने का काय करें। उन्हे मतदान का अधिकार नहीं होना चाहिए।

-- (६) निर्वाचित प्रतिनिधियो पर अनुशासन के साथ ही पचायती राज सस्थाओ के निर्णयो पर नियमन का प्रश्न भी उपस्थित होता है। इस क्षेत्र म भी व्यवहार-विभिन्नता दीख पडती है। ग्राम पचायत के निर्णयो को बदलने का अधिकार आन्ध्र, आसाम बिहार, गुजरात, मध्यप्रदेश मद्रास महाराष्ट्र मसूर, उडीसा और पजाब म कमिश्नर, डिप्टी कमीश्नर, कलक्टर सब डिविजनल मजिस्ट्रेट यहा तक कि तालुका विकास अधिकारी (गुजरात) खण्ड विकास अधिकारी (गोवा दमनदीव) और पचायत अधिकारी (राजस्थान) तक के स्तर के राज्य कमचारी को प्राप्त है। यह बहुत ही विचित्र स्थिति है। जब इन कमचारियो की अक्लमन्दी और ईमानदारी का ही इतना भरोसा था कि वे पूरे पच निर्णय को रद्द कर दें तो फिर पचायती राज के झूठे हल्ले को खडा करना एक बेकार का गोरख धधा और खर्चीला झमेला बन कर रह जाता है। सिर्फ उत्तर प्रदेश म ही पचायत के निर्णयो को रद्द करने का अधिकार जिला परिषद् को देकर जातान्त्रिक व्यवस्था की ओर कदम उठाया गया है। किन्तु हम तो चाहेंगे कि ग्राम पचायत के निर्णयों को रद्द करने का अधिकार ग्राम सभाओ को ही मिलना चाहिए क्योकि पचायत के निर्णय से वे ही प्रभावित होते हैं। अत पीडित व्यक्ति स्वयं अपना उपचार करने म समर्थ हो सके तो इससे बढ कर स्वावलम्बन क्या होगा? अधिक से अधिक यह हो सकता है कि ग्राम सभा का यह निर्णय पुष्टि के लिए जिलापरिषदो के पास भेज दिया जाया करे। पचायत समिति तथा जिला परिषद् के स्तर की सस्थाओ के निर्णयों को रद्द करने का अधिकार विभिन्न राज्यो म सरकार अथवा कलक्टरों या

कमिश्नरों में निहित है। यहां तक कि असम में जिला परिषद् के निर्णयों तक को सब डिविजनल अफसर के स्तर का अधिकारी रद्द कर सकता है। यह स्थिति अन्यायपूर्ण और अपमान जनक है और पंचायती राज की सारी बुनियाद को हिला देने वाली है। होना यह चाहिए कि किसी पंचायती राज संस्था के निर्णयों को रद्द करने का अधिकार उससे पूर्ववर्ती संस्था को होना चाहिए जिसकी पुष्टि परवर्ती संस्था करे। इस प्रकार ग्राम पंचायत के निर्णयों को ग्राम सभा पंचायत समिति की सहमति से रद्द करे पंचायत समिति के निर्णयों को ग्राम पंचायतें जिला परिषद् की सहमति से और जिला परिषद् के निर्णयों को पंचायत समितियां राज्य सरकार की सहमति से। इससे पीड़ित अधिकारी तथा कार्यकारी-तीनों पक्षों का समन्वय हो जाता है। कोई भी कड़ी अपनी अगली-पिछली कड़ियों के तालमेल में हो टूट सकेगी। आधार माध्यम शीर्ष तीनों एक ही सीधी रेखा में आ जाते हैं जिसमें स्वतः ही कार्य सही सीधी रेखा में होंगे और इस व्यवस्था से ही निर्णयों को रद्द करने की नौबत नहीं आएगी या आएगी भी तो बहुत ही कम।

(७) इसी प्रकार पंचायतों पंचायत समितियों तथा जिला परिषदों को निलम्बित अथवा भंग करने के अधिकार का भी सवाल है। ग्राम पंचायत को आन्ध्र में कमिश्नर, उड़ीसा में में डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट, दिल्ली में चीफ कमिश्नर तथा गोआ–दमन–दीव में लेफ्टिनेन्ट गवर्नर भंग कर सकता है शेष सभी राज्यों में राज्य सरकार में यह शक्ति निहित है तथा पंचायत समिति एवं जिला परिषद को भंग करने का अधिकार सभी राज्यों में राज्य सरकार में निहित है। इस विषय में एकसी सामान्य नीति अपनाई जानी चाहिये कि केवल राज्य सरकार ही किसी भी स्तर की स्वायत्त संस्था को निलम्बित या भंग कर सके यह भी विशेष परिस्थितियों में तथा उचित कारणों के आधार पर ही।

निष्कर्ष—इस सारे तुलनात्मक विश्लेषण से जो निष्कर्ष हमारे सामने आता है वह यह कि आज पंचायती राज संस्थाओं पर राजकीय नियन्त्रण क्या वित्तीय और क्या प्रशासनिक दोनों ही क्षेत्रों में आवश्यकता से कहीं अधिक है। वर्तमान स्थिति का उदार से उदार आलोचक भी इसे स्वीकार करेगा। यह ठीक ऐसा ही है जैसे एक हाथ से लड्डू किसी की हथेली पर रखना और खाये जाने से पहले ही दूसरे हाथ से उसे छीन कर अपने मुंह में रख लेना। यह भूख बुझाना नहीं किसी का मखौल उड़ाना ही कहा जायगा। यदि हम इस विराट जनसंख्या संकुल समस्या प्रधान देश को ईमानदारी से विकास के पथ पर बढ़ाना है और जनता को स्वराज्य की सच्ची अनुभूति और प्रेरणा देना है तो निश्चय ही हम जोखिम उठाकर भी पंचायत राज संस्थाओं को अधिक अधिकार देने ही होंगे। पश्चिमीय प्रणाली वाली दलबन्दी की प्रतिस्पर्द्धा पर आधारित व्यवस्थापिका सभाएँ तो वैसे ही सभी देशों में "वाक्यज्ञान-व्यायामशालाएँ" बनकर रह गयी हैं। इस देश के भूख से अकुलाते और जनसंख्या वृद्धि से सिमटते आंगन में तीतर बटेर के अखाड़े खड़े करने या तोता मैना की तू-तू मैं-मैं के छोटे बड़े पिंजड़े रखने के लिए अब तिल भर भी भूमि का अवकाश नहीं है। अब तो हमें समर्थ, निष्ठावान, जागरूक और तत्पर कार्यकारी संस्थाओं की महती आवश्यकता है। पंचायती राज संस्थाएँ ही अधिकार और अनुभव प्राप्त कर इस महान् कार्य को करने में समर्थ हो सकेंगी। यह कार्य शीघ्र से शीघ्र सम्पन्न किया जाना चाहिये जिससे कि प्रसिद्ध सर्वोदयी विचारक श्री जयप्रकाश नारायण के शब्दों में सत्ता का उल्टा पिरामिड सीधा रखा जा सके और राजस्थान में जन-चेतना के अग्रणी प्रहरी श्री कुम्भाराम आर्य के शब्दों में लोकशाही का अभ्युदय होकर नौकरशाही की रात का अन्त हो सके।



पंचायती राज में जन-प्रतिनिधि और सरकारी कर्मचारी

—श्री शीतलसहाय श्रीवास्तव

भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रम का उद्घाटन १९५२ में हुआ। उसका उद्देश्य यह था कि जन समुदाय के सक्रिय प्रयत्न और पहल से आर्थिक व सामाजिक उन्नति हो सके। इस कार्यक्रम में लोगों से अपेक्षा की गई कि वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए स्वयं अपने साधनों का उपयोग करेंगे। प्रारम्भ में इस सम्बन्ध में सरकारी मशीनरी ने प्रशासनीय प्रयत्न किया, लेकिन कुछ समय बाद अनुभव किया गया कि गांवों में सामुदायिक विकास कार्यों के लिए चेतना जागृत नहीं हुई और गांवों में इस चेतना को जागृत करने के लिए बहुत अधिक शक्ति समय सूझ-बूझ की जरूरत है। इसके अतिरिक्त विकास कार्यक्रम की इतनी अधिक समस्याएं थीं कि केवल सरकार द्वारा उनका हल होना सम्भव भी नहीं था। यह केवल तभी सम्भव हो सकता था जब विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने की जिम्मेदारी सरकारी तन्त्र से हटा कर जनता और उसके प्रतिनिधियों को सौंप जाए। यही लोकतन्त्री विकेन्द्रीकरण का आधार है और इसी कारण पंचायती राज का जन्म हुआ जिसके फलस्वरूप प्रशासन को तीन स्तरों में विकेन्द्रित किया गया।

ये तीन स्तर इस प्रकार है—जिला परिषद्, पंचायत समिति और ग्राम पंचायत। इनका एक दूसरे से परस्पर गहरा सम्बन्ध है। इन सभी संस्थाओं में जन प्रतिनिधियों और सरकारी तन्त्र के कर्म

कारियों का ऐसा मिलाजुला समागम है जिसके सफल प्रयत्नों पर ही सामुदायिक विकास की सफलता निर्भर करती है।

जिला परिषद् की स्थापना से पहले कुछ राज्यों में जिला बोर्ड काम कर रहे थे जिसका चेयरमैन जनप्रतिनिधि होता था चेयरमैन विभिन्न विकास विभागों से सम्बद्ध नहीं थे, और न उनकी उसके प्रति कोई जिम्मेदारी ही थी इसी प्रकार विकास क्षेत्रों से भी उसका कोई सम्बन्ध नहीं था परन्तु अब सभी विकास विभागों के अधिकारी अध्यक्ष के प्रति जिम्मेदार होते हैं और पंचायत समितियों के कार्यों से उसका सीधा सम्बन्ध हो गया है। अतिरिक्त जिलाधीश (नियोजन) अथवा जिला नियोजन अधिकारी ही जिला परिषद् का मुख्य कार्य अधिकारी होता है जो सभी विभागों के अधिकारियों और अध्यक्ष अथवा जिलाधीश और अध्यक्ष के बीच की कड़ी है। यह मुख्य कार्यकारी अधिकारी पर निर्भर करता है कि वह इन अधिकारियों और अध्यक्षों के सम्बन्धों को बिगाड़ दे अथवा बना दे। इन सम्बन्धों पर काफी अंश तक विकास कार्यक्रम की सफलता निर्भर करती है। परन्तु व्यवहार में कुछ ऐसी बातें देखने में आ रही हैं जिससे विकास कार्यक्रम के उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो पाती है।

अध्यक्ष का चुनाव राजनीतिक आधार पर होता है। जिससे अध्यक्षों का अधिकांश समय राजनीतिक गुटों के झगड़ों में ही बीत जाता है और वे अपना पूरा समय विकास कार्यों को नहीं दे पाते हैं। बहुत से अध्यक्ष जिले के दूरतम भाग के निवासी होते हैं। और जिले में उनके निवास की ठीक व्यवस्था नहीं होती अतः वे अपने कार्य के प्रति यथोचित न्याय नहीं कर पाते। बहुत से विकास विभाग के जिले के अधिकारी केवल जिला परिषद की बैठक में ही अध्यक्ष को अपनी प्रगति के बारे में बता पाते हैं। कार्यक्रमों की कठिनाइयों और उनके निराकरण पर अन्य समय कोई विचार विमर्श नहीं हो पाता। जहां तक समन्वय की बात है अध्यक्ष को जिलाधीश का मुंह जोहना पड़ता है जबकि कुछ राज्यों में जिलाधीश का जिला-परिषद से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है। जिला परिषद के पुराने कार्यालय और नियोजन कार्यालय अब भी अधिकांश जिलों में अलग अलग बने हुए हैं, इसलिए एक प्रकार का अलगाव बना हुआ है। सभी अधिकारियों का जो जिला परिषद के नियन्त्रण में काम करते हैं एक जगह बैठना कार्यक्रम के हित में होगा। उत्तर प्रदेश में कुछ जिलों के ऐसे भी उदाहरण हैं जहां के अध्यक्ष कतई नहीं चाहते कि उनके यहां आई० ए० एस० केडर के मुख्य कार्यकारी अधिकारी हों। राममूर्ति समिति की सिफारिश कि महाराष्ट्र की भांति उत्तर प्रदेश में भी आई० ए० एस० केडर के मुख्य कार्य अधिकारी रखा जाए कहां तक अध्यक्षों को मान्य होगा और कहां तक दोनों के सम्बन्ध सुन्दर रहेंगे सोचना होगा। कहीं-कहीं अध्यक्षों के आने ही खण्ड विकास अधिकारियों के लिपिकों और स्कूल अध्यापकों के स्थानान्तरण में दिलचस्पी ली। उन्होंने परोक्ष रूप से यह भी प्रयत्न किया कि उनके विरोधी प्रमुखों के प्रति या तो अविश्वास का प्रस्ताव पास हो अथवा उन विकास क्षेत्रों में जिला परिषद की कोई सहायता न मिलने पाए।

इन दुखपूर्ण और अप्रिय प्रसंगों के साथ साथ ऐसे भी उदाहरण मौजूद हैं जहां योग्य अधिकारियों और अध्यक्षों की आपसी प्रेम और सक्रिय सहयोग से बड़े-बड़े कार्य सम्पन्न हुए हैं। उन्हीं जिलों में जनाधिकृत के प्रयोग का कार्य सफल हुआ।

लोकतन्त्री विकेन्द्रीकरण की दूसरी कड़ी पंचायत समिति है। उत्तर प्रदेश का उदाहरण लें।

यहां भी क्षेत्र समिति के अध्यक्ष प्रमुख कहलाते हैं और ज्येष्ठ उप प्रमुख एवं कनिष्ठ उप प्रमुख उनके सहायक जन प्रतिनिधि होते हैं। यह कोई आवश्यक नहीं है कि ज्येष्ठ उप प्रमुख और कनिष्ठ उप प्रमुख, प्रमुख के मत के ही हों उनके विरोधी भी हो सकते हैं। ऐसी दशा में प्रमुख के लिए विकास खण्ड को योजनाओं को अपनी नीति या क्षेत्रीय समिति के निर्णय के अनुसार चलाने में बड़ी कठिनाई होती है। ऐसे विरोधी पदाधिकारी प्रमुख और खण्ड विकास अधिकारी के बीच खाई चौड़ी करने का प्रयत्न करते रहते हैं।

बहुत-से प्रमुख चूंकि राजनीतिक क्षेत्र से चुन कर आए होते हैं इसलिए वे प्रयत्न करते रहते हैं कि उनके ग्रुप के प्रधान या सरपंच किसी भी प्रकार असन्तुष्ट न रहने पाएं। कुछ प्रधान या बहुत से पदाधिकारी धन का गबन करते पाए गए हैं और जब विस्तार अधिकारी उनके विरुद्ध कार्यवाही करते हैं, तब उन्हें रोका जाता है अथवा उनका ही स्थानान्तरण कराने का प्रयत्न किया जाता है। ऐसी स्थिति में कभी कभी खण्ड विकास अधिकारी और प्रमुख में खींचातानी होने लगती है।

जीप भी अधिकारियों और अध्यक्ष प्रमुख में संघर्ष का कारण है। उत्तर प्रदेश में महीने भर में विकास खण्ड में केवल ३०० मील जीप चलाने की सीमा है। वास्तव में यदि खण्ड विकास अधिकारी और विस्तार अधिकारी १०० मील चला गए तो प्रमुख को गाड़ी नहीं मिल पाई। इसी प्रकार प्रमुख यदि महीने भर में २०० मील चला गए तो तब भी सरकारी अधिकारियों को जीप द्वारा यथेष्ठ दौरा करने को नहीं मिलता। इस सम्बन्ध में जो खण्ड विकास अधिकारी प्रमुख के साथ मेल नहीं बिठा पाते, उन्हें प्रमुख की ओर से असहयोग और तनाव की स्थिति सहन करनी पड़ती है। कुछ विशेष मामलों जैसे तकावी और अनुदान वितरण में गड़बड़ करने के लिए कहीं-कहीं विवश किया जाता है।

बहुत-से प्रमुख और खण्ड विकास अधिकारियों के बीच उनकी निजी अहम्मन्यता और ऊंच नीच की भावना के कारण भी संघर्ष और मनमुटाव हो जाते हैं। कुछ प्रमुख विस्तार अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों के कार्यों में सीधे हस्तक्षेप करते हैं। वे प्रशासनिक कार्यों में भी हस्तक्षेप करने का प्रयत्न करते हैं।

जहां ऐसे उदाहरण हैं वहां ऐसे भी उदाहरण हैं जहां खण्ड विकास अधिकारी अपने प्रमुख से अपना ही करैक्टर रोल अपनी इच्छानुसार लिखा लेते हैं। इनमें बहुत से प्रमुख ऐसे होते हैं जो या तो बहुत सीधे होते हैं या खण्ड विकास अधिकारी से बहुत अच्छा सम्पर्क रखते हैं। खण्ड विकास अधिकारी या विस्तार अधिकारी ऐसी बहुत-सी स्थितियों में प्रमुख को सामान्य कार्यक्रम और सरकारी आदेशों से अवगत नहीं करा पाते। ऐसे खण्ड विकास अधिकारी यही कहने में अपने कर्तव्य की इति श्री समझ लेते हैं कि उनके यहां प्रमुख से कोई संघर्ष नहीं है। जन प्रतिनिधियों से अच्छा सम्बन्ध, साधन मात्र है। अन्तिम ध्येय तो विकास कार्यक्रम के लक्ष्यों की पूर्ति है।

पुनः उत्तर प्रदेश का उदाहरण लें। यहां पंचायत मन्त्री पूर्णतः क्षेत्र समिति का कर्मचारी है और सामान्यतया सहायक विकास अधिकारी पंचायत को पंचायत मन्त्री से काम लेना होता है। बहुत से निष्क्रिय पंचायत मन्त्री प्रमुख से अच्छा सम्पर्क रख कर सहायक विकास अधिकारी पंचायत से या तो सम्बन्ध ही नहीं रखते अथवा स्टाफ मीटिंग के दिन भी छुट्टी ले कर घर बैठ जाते हैं। यद्यपि ऐसे उदाहरणों की कमी है फिर भी स्थिति में सुधार की अपेक्षा है।

ग्राम सभा स्तर पर पंचायत मन्त्री ग्राम सभा का कार्य देखना है और ग्राम सेवक और ग्राम स्तरीय कार्यकर्ताओं का कार्यक्रमो में सक्रिय योगदान रहता है। यहाँ पर दो प्रकार की स्थितियां हैं। पंचायत मन्त्री अधिकांश गांव सभाओ के रजिस्टर तथा कागजात अपने घर रखते हैं और प्रधान से अच्छे सम्बन्ध रख कर मनमाने रूप से हस्ताक्षर ले लेते हैं। ग्राम सेवक व्यक्तिगत सम्पर्क से तो अच्छा करते हैं परन्तु गांव पंचायतो की बैठको में भाग नहीं लेते। सहकारी सुपरवाइजर यद्यपि सहकारी समितियां में भाग लेता है लेकिन गांव सभा की बैठकों में वह भाग नहीं लेता है और इस प्रकार लोकतन्त्र की इस इकाई में सरकारी कर्मचारियों का सक्रिय योगदान नहीं मिल पाता। एक ओर तो ऐसी स्थिति है दूसरी ओर जो प्रधान चलते पुर्जे हैं और ऊपरी राजनीति से मिल जुले रहते हैं वे सरकारी आदेशों और नियमों व ग्रामस्तरीय कार्यकर्ताओं की अवहेलना करते है।

इन सभी कठिनाइयो को देखते हुए यह नितान्त आवश्यक है कि जन प्रतिनिधियो और सरकारी अधिकारियों में सम्बन्ध सुन्दर स्वस्थ और सुगठित हो और एक दूसरे के प्रति श्रद्धा तथा आदर पूर्ण हों जिससे समुदायिक कार्यक्रमो की पूर्ति अपेक्षित समय से हो सके और पंचायतो राज्य सफल हो। एक दूसरे का छिद्रान्वेषण व अधिकारी भावना का प्रदर्शन और थोथी अहमन्यता कभी भी श्रद्धा व आदर की भावना पैदा नहीं कर सकती। यह समझना चाहिए कि दोनों एक दूसरे के पूरक हैं और जिनके सम्मिलित प्रयत्न के बिना पंचायती राज की गाड़ी नहीं चल सकती। श्री सुरेन्द्र कुमार दे ने एक बार कहा था कि इस पंचायती राज में जन प्रतिनिधियो का स्थान घर में बिना पढ़ी लिखी और बूढ़ी सास के समान है और सरकारी कर्मचारियों का स्थान पढ़ी लिखी बहू के समान है। जब बहू अपनी सास का विश्वास अर्जन कर लेती है तो कुछ ही दिनों में सास घर की चाभियां बहू को दे देती है और घर में लक्ष्मी का पदार्पण अपने आप हो जाता है।



पंचायत राज और कानून

—श्री रामकरण जोशी

जनतन्त्र में पंचायतें नींव की जगह काम करती है। नींव की मजबूती के ऊपर सारे भवन का दारोमदार होता है। राजस्थान में प्रशासन को लोकतन्त्रीय आधार पर सुदृढ़ बनाने के लिए विकेन्द्रीकरण का मार्ग अपनाया। सत्ता का विकेन्द्रित होना राज्य के कोने-कोने में प्रशासन का जागरूक होना माना जाना चाहिए। यदि सत्ता प्रयोग के लिए किन्हीं विशेष हाथों में रूकी रह गई तो उतनी ही बाधायें विकेन्द्रीकरण के मार्ग में उठ खड़ी होगी। सत्ता के विकेन्द्रीकरण का नारा इसलिए महत्वपूर्ण माना गया था कि उसके द्वारा सभी क्षेत्र समान रूप से लाभान्वित होंगे। सत्ता-प्राप्ति की अनुभूति सम्बन्धित लोगों को उसी प्रकार होनी चाहिए जिस तरह वर्षा का सभी फसलों पर एक सा प्रभाव होता है। खेत की सूखी क्यारियां पानी चाहती हैं। किसान सभी क्यारियों को उचित मात्रा में पानी पहुंचाने की व्यवस्था करता है। राज्य सरकारों का फर्ज है कि लोकतन्त्र के पोषण के लिए सभी पंचायतों को संरक्षक के रूप में शक्ति पहुंचावे।

राज्य सरकार जनतन्त्रीय प्रशासन में मुख्य कड़ी के रूप में काम करती है। राज्य सरकारों का संचालन और संरक्षण जनतन्त्र में चुने हुए व्यक्तियों द्वारा होता है। पंचायती राज में नीचे की इकाइयां भी चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा ही संचालित होती हैं। प्रत्येक इकाई अपने आकार के रूप में अपने अधिकारों का प्रयोग करने में सक्षम होनी चाहिए। पंचायतें, पंचायत समितियां, जिला परिषद् और राज्य सरकार चारों के काम और अधिकार कानून द्वारा प्रदत्त शक्तियों के आधार पर संचालित होते हैं। सबके अधिकारों की सीमा निर्धारित है। सीमाओं का अतिक्रमण सभी जगह सभी के लिए असंगत है। नीचे की इकाइयां या ऊपर का यूनिट यदि रूकावट पैदा करने की चेष्टा करे तो पंचायत आन्दोलन कुण्ठित हो जाता है। नीचे की इकाइयां यदि मनमानी करे तो अशान्ति पैदा हो जाती है। ऊपर की इकाइयां मात्र इन संस्थाओं को सहानुभूति पूर्वक सही मार्ग दर्शन दें तो पंचायत राज को सफलता मिल जाती है।

उक्त कसौटी पर यदि राजस्थान के वर्तमान पंचायत आन्दोलन को देखें तो पता चलता है कि उक्त इकाइयों में वांछित ताल मेल नहीं बैठा हुआ है। इसके कई कारण हो सकते हैं। लेकिन मुख्य तो गुट और दलों का होता है। जनतन्त्र में चुनाव आवश्यक होते हैं। हालांकि चुनावों में कटुता उत्पन्न होने का अन्देशा रहता है। चुनावों की लड़ाई और हार जीत यदि खेल के मैदान में होने वाली लड़ाई और हार जीत के समान समझ ली जाव तो यह कटुता बढ़ने नहीं पाती है। किन्तु ऐसा नहीं हो पाता है और चुनाव गहरे घाव करते चले जाते हैं। जिनसे सम्बन्धित क्षेत्र कई दिनों तक पीड़ित रहते हैं। राज्य सरकार में बैठे लोग उक्त हार जीत में पक्ष विपक्ष ग्रहण करके काम करने लगते हैं तो और भी बुराइयां पैदा हो जाती हैं और जब नीचे की इकाइयों को सुचारू रूप से संचालित होने के लिए राज्य सरकार को प्रदत्त शक्तियों का दुरुपयोग होने लगता है तो समूचा आन्दोलन क्षुब्ध हो उठता है। राजस्थान में पंचायती राज की स्थापना सन् १९५३ में हुई। उसके ठीक एक युग बाद सरकार को पंचायती कानून में ऐसा संशोधन करने चुने हुये प्रतिनिधियों को निलम्बित करने के अधिकार ग्रहण करने की जरूरत महसूस हुई। उक्त संशोधन के पक्ष विपक्ष में दलीलें दी जा सकती हैं किन्तु इसके व्यवहार से पक्षपात की गन्ध आती हो तो इस पर अवश्य पुनर्विचार किया जाना चाहिए।

संशोधन के पक्ष में जो दलील दी जाती है कि सरपंच और प्रधानों के खिलाफ ऐसी शिकायतें हों कि जिनमें उन्होंने प्रदत्त शक्तियों का अतिक्रमण करके ऐसे काम कर डाले हों कि जिनमें आचरण हीनता भी शामिल हो तो जांच के दौरान उनको निलम्बित कर देना जनतन्त्र की साख के लिए जरूरी है। बात तो ठीक है। किन्तु इसका निर्णायक कौन हो कि वे शिकायतें सही या गलत? अगर गलत आरोप के आधार पर एक भी सरपंच या प्रधान निलम्बित कर दिया जावे तो इसका जिम्मेदार कौन और निर्दोष व्यक्ति को निलम्बित करने में प्रदत्त शक्तियों का दुरुपयोग करने वाला व्यक्ति अतिक्रमण का दोषी होने के कारण कौनसी सजा का हकदार है? क्या उस अतिक्रमण के लिए उसको भी निलम्बित करने की कोई धारा और प्रावधान है? किसी भी व्यक्ति को निलम्बित किये जाने से पहिले उस पर लगाये गये आरोपों की निष्पक्ष जांच होना जरूरी है और उसके लिए उक्त जांच ऐसे व्यक्ति द्वारा होनी चाहिए जो प्रशासन के मातहत काम न करता हो, बल्कि न्याय-व्यवस्था का अंग हो।

राजस्थान के पंचायत आन्दोलन में जो वर्तमान संकट उपस्थित हो गया है उसके पीछे यही आशंका और भय है। पंच सरपंच और प्रधानों के सिर पर हमेशा एक तलवार लटकती रहती है—न जाने कब किसी प्रभावशाली व्यक्ति का कोप भाजन हो जाने से निलम्बित हो जाना पड़े—साथ ही इसमें जो इस कारण से निलम्बित किये गये व्यक्ति हैं उनके मामलों के फैसलों की अवधि निर्धारित होनी चाहिए ताकि फैसले से प्रभावित व्यक्ति न्याय के लिए कानूनी अदालतों में जा सकें। किसी भी सरपंच या प्रधान को केवल निलम्बित करके छोड़ दिया जावे और वर्ष दो वर्ष पूरे हो जावें बल्कि चुनाव की पूरी अवधि खत्म हो जावे तो प्रशासन के ऊपर यह इल्जाम आरुढ होता है कि उसके पास इस व्यक्ति को निलम्बित करने का कोई औचित्य तो था नहीं किन्तु चुन जाने के बाद इसके प्रभाव को निरस्त करने की दृष्टि से इस बहाने को अपनाया गया है। कानून का संशोधन किसी व्यक्ति को उसके अधिकारों से वंचित करने के बहाने नहीं बनाना चाहिए। यह सावधानी राज्य सरकार को अवश्य बरतनी चाहिए।

इस संदर्भ में इतना और कहना जरूरी है कि राजस्थान में भी देश के साथ साथ जनतन्त्र विकसित हो रहा है। उसके मार्ग में सरकार या निहित स्वार्थ रुकावट डालने की चेष्टा करेंगे तो वे स्वयं ही परास्त हो जायेंगे। जन मत की रक्षा में जन आन्दोलन होने से पहिले राजस्थान में लोकतन्त्रीय परम्पराओं को बल मिलेगा।



खण्ड—७

पंचायती राज में नियोजित कार्य-क्रम



गांव की योजना



गांव की योजना अब गांव वालों को ही बनानी पड़ेगी, उन्हें ही यह सोचना विचारना और जानना पड़ेगा कि उनके गांव की क्या आवश्यकताएं हैं ? क्या ऐसे काम हैं जो गांव के लिए किए जाने चाहिए ? क्या ऐसे काम हैं जो अधूरे हैं और क्या नए सिरे से शुरू करने हैं ?

गांव की इच्छा और आवश्यकता को गांव वाले ही ज्यादा समझते हैं। पंचायत उनकी अपनी संस्था है वे पंचायत से कहें, पंचायत उनसे पूछे, ग्राम सभाएं की जाएं। वहां खुली चर्चाएं हों और फिर गांव की योजना बने वह योजना गांव की होगी और गांव ही मिलकर उसे पूरा करेगा।

गांव की योजना बनाने के पहले गांव के हालात की जांच (सर्वेक्षण) करनी पड़ेगी। पढ़ाई के बारे में, खेती के बारे में, खाद के बारे में, मजदूरी के बारे में, उद्योग धंधों के बारे में, माली हालात के बारे में गांव के घर घर की जांच करनी पड़ेगी तब सही तसवीर सामने आयेगी। तब योजना बनेगी। वह योजना गांव की योजना होगी, उसमें गांव की समस्याओं का हल निकलेगा। उसमें गांव की कमी पूरी होगी। गांव वाले ही अपनी योजना बनायें। वे ही उसे पूरा करें, और वे ही अपनी सूझबूझ, मेहनत और कोशिशों से गांव को पूरी तरह सुखी और स्वावलम्बी बनायें।

योजना का आधार गांवो का आर्थिक और सामाजिक सर्वेक्षण हो

—श्री गोविन्दप्रसाद

भारत की सर्वांगीण उन्नति भारत के गावो के समुचित विकास में निहित है। भारत की जनता गावो मे निवास करती है। इसलिये ऐसी योजना बनाने की आवश्यकता है जिसका आधार ग्राम सुधार हो, किन्तु योजना को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि ग्रामो की समस्याओं का अध्ययन निकटता से किया जाये। इन समस्याओ का अध्ययन निकटता से गावो के सामाजिक एव आर्थिक सर्वेक्षणो द्वारा किया जा सकता है। आर्थिक एव सामाजिक सर्वेक्षणो से हमारा अभिप्राय उस विधि से है जिसके द्वारा ग्रामो की विभिन्न बारीक से बारीक आर्थिक एव सामाजिक समस्याओ के कारणों एव प्रभावो के सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जा सके तथा उन समस्याओ के सम्बन्ध मे कुछ निश्चित निष्कर्ष निकाले जा सकें।

इससे पूर्व कि ग्रामीण सामाजिक एव आर्थिक सर्वेक्षणो के महत्व पर प्रकाश डाला जाए हमें यह समझ लेना आवश्यक हो जाता है कि हमारी अर्थ-व्यवस्था मे ग्रामो तथा उनके विकास का क्या महत्व है? हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गाधी ने स्वतन्त्रता आन्दोलन आरम्भ करने से पूर्व ही यह पहचान लिया था कि भारतवर्ष ग्रामो में बसता है न कि साम्राज्यवादियो द्वारा बनाये गये शहरो व कस्बो में उन्होने अपने हरिजन सेवक पत्र मे अपनी विचारधारा स्पष्ट व्यक्त की है कि शहर तो पराधीनता की देन है। ग्रामो के महत्व को स्पष्ट करते हुये गाधीजी ने लिखा है कि—

If the villages perish India will perish too It will be no more India Her own mission in the world will get lost

भारत गांवों का एक संगठन है। यहां की एक बहुत बड़ी जनसंख्या ग्रामों में निवास करती है, इसलिये यदि भारत को उन्नति के पथ पर अग्रसर होना है तो उसका विकास का कार्य गांवों से ही प्रारम्भ करना चाहिये। ग्रामों के विकास में ही भारत की उन्नति सन्निहित है। जैसा कि गोल्डस्मिथ ने कहा है कि गांव राष्ट्र की रीढ़ की हड्डी है इसलिये उनका विकास होना अत्यन्त आवश्यक है। बिना गांवों के विकास के भारत का विकास होना कठिन ही नहीं अपितु असम्भव है। गांवों की अनेक समस्यायें हैं। पिछले दो सौ वर्षों में परतन्त्र भारत के गांवों की आत्मनिर्भरता प्रायः लुप्त सी हो गई थी। पिछले कुछ वर्षों में इन समस्याओं को दूर करने के लिये देश के कर्णधारों ने काफी प्रयास किये। इसके अलावा ग्रामों की महत्वता इस बात से भी प्रकट होती है कि भारतीय सरकार ने अपनी पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामों के विकास को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। ग्रामों का सर्वतोमुखी विकास करने के लिए हमारी सरकार ने सामुदायिक विकास योजना सन् १९५२ में प्रारम्भ की। इतना सब होने पर भी ग्रामों की अनेक सामाजिक एवं आर्थिक समस्यायें रह गई हैं जिनका कि समाधान नहीं हो सका है।

इस वर्तमान आर्थिक नियोजन के युग में ग्रामीण आर्थिक एवं सामाजिक सर्वेक्षण अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गए हैं। क्योंकि विभिन्न क्षेत्रों की भौगोलिक एवं भौतिक विषमताओं के विषय में जानकारी न होने के कारण सम्पूर्ण देश के लिए आर्थिक विकास की योजना बनाना अति कठिन है। यदि यह योजना बना भी ली जाती है तो वह तब तक सफल नहीं हो सकती है जब तक कि प्रत्येक जिले, क्षेत्र एवं गांव की दशाओं तथा आवश्यकताओं का पूर्ण सर्वेक्षण अध्ययन न कर लिया जाए। आर्थिक नियोजन कमीशन ने अपनी प्रथम पंचवर्षीय योजना के ऊपर दी रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से नियोजित अर्थव्यवस्था में क्षेत्रीय अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्वपूर्णता को बताते हुए लिखा है—

'That the needs and priorities of different regions as well as their potential for short term and long term development should be taken into account in drawing up and continually reviewing their developmental programmes'

कृषि शाही कमीशन ने ग्रामीण क्षेत्रों में जांच के कार्य के लिए स्वतन्त्र और संस्थाओं के कार्यों पर जोर डाला है। इसी प्रकार से बाउले रॉबर्टसन कमेटी ने भी निदर्शन विधि के आधार पर कुछ गांवों के सर्वेक्षण द्वारा ग्रामीण आय का हिसाब लगाने के लिए सिफारिश की है।

भारत को उसकी प्रारम्भिक प्रकार की कृषि, उद्योगों का अभाव, उत्पादकता का निम्नस्तर, निम्न आयें (lower Incomes) निम्न जीवन स्तर, अधिक जनसंख्या और वह भी तीव्र गति से बढ़ती हुई असंतुलित जनसंख्या, विदेशी व्यापार द्वारा संचालित अर्थव्यवस्था (Foreign trade oriented economy) तथा बहुत बड़ी संख्या में अशिक्षा के कारण अर्द्ध विकसित देशों या पिछड़े हुये देशों की संख्या में गिना जाता है। इन सब बातों के खिलाफ हम अर्थव्यवस्था का पुनः आयोजन करना है। अशिक्षा को मूल की समाप्त करना है, उद्योगों की स्थापना करनी है तथा उनको विकसित करना है। सहयोगी व्यवसायों का ग्रामीण क्षेत्रों में विकसित करना है, सिंचाई के साधनों का विकास करना है, कृषकों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाना तथा फिर सारी जनता के जीवनस्तर को उन्नत करना है। कृषि की समस्त

समस्याओं का निवारण करना है तथा नवीन सड़को एव रेल्वे लाइनो का निर्माण करना है। यह कार्य भारत के प्रत्येक जिले, क्षेत्र तथा गावो मे करना है और यह काय बहुत महत्वपूर्ण तथा अत्यधिक व्ययशील है तथा इसमे काफी मानवीय शक्ति एव ताकत की आवश्यकता है। ये काय बिना सोच विचार तथा गहन अध्ययन के करना असम्भव है और यदि कर भी दिया जाए तो उनके असफल होने का भय रहता है। असफल होने पर काफी तादाद मे मुद्रा एव मानवीय शक्ति तथा प्रयत्नो की हानि होती है लिखने के बजाय या वर्णन करने के बजाय जिसकी कल्पना आसानी से की जा सकती है। इन सबके लिए उन दशाओ, स्थितियो का अध्ययन करना अति आवश्यक हो जाता है जो विभिन्न क्षेत्रो मे भिन्न होता हैं और यहा तक है कि प्रत्येक गाव मे भी भिन्न २ पाई जाती है। ये दशायें भौगोलिक, सामाजिक एव आर्थिक होती है। आर्थिक दशाओ एव आर्थिक विकास की दर का लगातार अध्ययन विभिन्न क्षेत्रो तथा कम विकसित क्षेत्रो मे करना अति आवश्यक है। इस अध्ययन के प्रोग्राम द्वारा सतुलित क्षेत्रीय विकास (Balanced Regional Development) प्राप्त किया जा सकता है।

सामाजिक आर्थिक ग्रामीण सर्वेक्षण किसी गाव की वास्तविक भौगोलिक स्थिति एव उसके आर्थिक वातावरण का पूरा पता लगा सकता है। इसके द्वारा गरीबो की आय, रहन सहन के तरीके तथा पूजीपतियों द्वारा उनके शोषण का पता चलता है। इसके अतिरिक्त इस प्रकार के सर्वेक्षण वहा की व्यवस्था सम्बन्धी एव रोजगार सम्बन्धी सूचनायें प्रदान करते हैं। कृषि कुटीर उद्योग पशुपालन, स्वास्थ्य एव सफाई, शिक्षा, कला एव सस्कृति रहन सहन, जीवनस्तर आदि सामाजिक एव आर्थिक गुणो के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है।

इसके अतिरिक्त जब हम पचायती राज मे विकेन्द्रीकृत अर्थव्यवस्था का जिक्र करते हैं, जिसका कि मुख्य उद्देश्य गावो को प्रशासनिक आर्थिक एव सास्कृतिक पहलुओं की दृष्टि से स्वावलम्बी बनाना है, तो इन क्षेत्रों से सम्बन्धित समस्याओं के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। इसके लिए कहा जा सकता है कि गावो में कृषि का विकास करके उत्पादन वृद्धि की जाए कुटीर एव लघु उद्योगो का विकास किया जाए ग्रामीणों की आय में वृद्धि की जाए, उनके जीवनस्तर मे वृद्धि की जाए। इन सबके लिए योजना बनाने मे पूर्व यह आवश्यक हो जाता है कि वे कौन कौन से कारण है जो इनके मार्ग मे बाधक हैं। उन कारणो के विषय में जानकारी प्राप्त करने के बाद में यह भी मालूम किया जाना है कि ये कारण किस प्रकार बाधक हैं। इन सब बातो का उत्तर सही रूप में हमें गावो के आर्थिक एव सामाजिक सर्वेक्षणो से मिलता है।

उपर्युक्त तमाम के अतिरिक्त हमारी वर्तमान प्रजातान्त्रिक सरकार के लिए जिसकी महत्वपूर्ण अभिलाषा इस देश में समाज का समाजवादी ढग (Socialist Pattern of Society) का ढाचा और कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है, ग्रामीण आर्थिक एव सामाजिक सर्वेक्षण सरकार की इस महत्वपूर्ण अभिलाषा को परिपूर्ण करने में अति सहायक होगे। इन सर्वेक्षणो द्वारा प्रत्येक क्षेत्र जिले एव गाव की समस्त आर्थिक एव सामाजिक तथा भौगोलिक आदि दशाओ के विषय मे अत्यधिक जानकारी प्राप्त हो जायेगी।

किसी क्षेत्र के विकास एव पुनर्गठन के लिए आर्थिक नियोजन को लागू करने तथा उसकी

सफलता के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि उसका आधार कुछ तथ्य एवं आंकड़े होने चाहियें। इसलिये यह स्वीकार किया जा सकता है कि किसी भी नियोजन व परिवर्तन के लिए ग्रामीण जीवन के सम्बन्धित आर्थिक एवं सामाजिक तथ्यों से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। किसी भी क्षेत्र के लिए आर्थिक नियोजन वास्तविक रूप में उस क्षेत्र के विभिन्न स्रोतों के सही अनुमान पर निर्भर रहता है। प्राकृतिक, मानवीय, कृषि व उद्योगीय एवं अन्य स्रोतों को ध्यान में रखते हुये कोई भी व्यक्ति कितनी भी विकास की योजनायें बना सकता है तथा उनके परिणाम देख सकता है। इसको इस दृष्टि से भी देखा जासकता है कि पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा सरकार ग्रामीणों के जीवन-स्तर को उठाने का प्रयास कर रही है। इन योजनाओं से वास्तविक लाभ क्या हो रहा है तथा ग्रामों की आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियों में क्या परिवर्तन हुआ है। इन परिवर्तनों एवं लाभों को देखने के लिए गावों का सर्वेक्षण आवश्यक है। इन सर्वेक्षणों के द्वारा उन कमियों को ढूंढ निकाला जा सकता है जो योजना बनाते समय रह गई थी। इन कमियों को पूरा करने के लिए आगामी योजनाओं में विचार किया जासकता है तथा उचित स्थान प्रदान किया जासकता है।

प्रायः सुना जाता है कि भूत की योजनाओं को बड़े सोच विचार के साथ बनाया गया था तथा उनका निर्माण सकुशल व्यक्तियों द्वारा किया गया था फिर भी वे अपने टारगेट पूरा करने में असफल रहीं। इसका क्या कारण है? आखिर उनके साथ क्या गड़बड़ थी जिसके कारण वे असफल हो गईं। स्पष्ट है कि उन योजनाओं का निर्माण ऊपरी स्तरों के आधार पर किया गया था तथा नीचे के स्तरों की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया गया था। यह स्थिति एक उल्टे पिरामिड की तरह ही हो गयी जिसका कि सिर ऊपर को न होकर नीचे की ओर होता है। इस प्रकार का पिरामिड जरा से भी धक्के से धराशायी हो सकता है। इसके विपरीत यदि योजनाओं का आधार ग्रामीण सर्वेक्षण बना लिया जाए तो हमारी योजनाओं के असफल होने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता क्योंकि नीचे की नींव जब मजबूत होगी तो ऊपर का हिस्सा भी स्वयं ही मजबूत होगा।

यह भी सम्भव हो सकता है कि जब ग्रामीण जनता की आवश्यकताओं को ध्यान में न रखते हुये योजनाओं का निर्माण किया जाता है तथा उन्हें लागू किया जाता है तो ग्रामीण लोग यह सोच कर भी इनसे हमें क्या फायदा है, योजनाओं के सफल निष्पादन में सहायक नहीं होते हैं। और इस प्रकार से जन असहयोग के कारण योजना सफल नहीं होती है। अतः स्वराज्य की नींव पक्की करने, लोकतन्त्र को मजबूत करने तथा विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था की सफलता के लिए ग्रामीण आर्थिक एवं सामाजिक सर्वेक्षण अत्यन्त आवश्यक हो गए हैं।

पंचायती राज में विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था की कल्पना करते समय अपने नाम 'स्वराज्य' नामक निबन्ध में सर्वोदयी नेता श्री जयप्रकाशनारायण ने भी विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था की सफलता के लिए गांवों के सर्वेक्षणों के विषय में सुझाव दिया है। लेकिन उन्होंने यह बात सूत्र के रूप में ही की थी। इसका स्पष्टीकरण के सर्वेक्षण का ढांचा, स्वरूप एवं आधार क्या होगा तथा मैंने जो ग्राम सर्वेक्षण का स्वरूप, ढांचा एवं विधि के सम्बन्ध में सोचा है, वह उनके सर्वेक्षण के ढांचे से मिलता जुलता ही है या भिन्न है तो किस प्रकार।

देश की योजनाओं का आधार ग्रामो का आर्थिक एव सामाजिक सर्वेक्षण होना चाहिये, जिसकी कल्पना मैंने अपने इस लेख मे की है उसका स्वरूप ढाचा तथा आधार एव विधि निम्न लिखित प्रकार होगो—

१—आर्थिक एव सामाजिक सर्वेक्षण के लिए विशिष्ट पद्धति की सामाजिक सर्वेक्षण पद्धति का प्रयोग किया जाना चाहिये। इस पद्धति के अनुसार सर्वेक्षित क्षेत्र को निश्चित कर दिया जाता है और सर्वेक्षणो के उद्देश्यो को पूरा करने के लिये इस पद्धति के अतगत अनेक वैज्ञानिक उपकरणो की सहायता लेनी पडती है जैसे—निदर्शन, सगठन अनुसूची, साक्षात्कार, एव व्यक्तिगत अध्ययन आदि। यहा यह ध्यान मे रखने योग्य बात है कि सामान्य पद्धति का प्रयोग भौतिक विज्ञान के अध्ययन मे किया जाता है इसलिए इसका प्रयोग सामाजिक विज्ञान के अध्ययन मे उपयुक्त नही है।

२—चू कि हमारे यहा ग्राम लघु होते हैं इसलिए निदर्शन विधि के बजाए सगणना विधि का ही प्रयोग लाभदायक रहता है। यहा सगणना विधि एवं निदर्शन विधि का स्पष्टीकरण आवश्यक है। सगणना विधि से तात्पर्य उस विधि से है जिस मे प्रत्येक इकाई का अध्ययन अलग एव विस्तृत रूप से किया जाता है। यह विधि प्रत्यक्ष व्यापक एव सही है। यह विधि सरल भी है। लेकिन कुछ लोग इस विधि के सम्बन्ध मे निम्न प्रकार आपत्ति उठा सकते हैं —(१) इसमे समय अधिक लगता है तथा श्रम भी अधिक लगता है क्योंकि इस विधि के अनुसार सर्वेक्षणकर्ता को प्रति व्यक्ति के घर जाकर सूचना प्राप्त करनी पडती है। (२) यह विधि व्ययशील है क्योंकि सगणना का कार्य काफी अरसे तक चलता है। (३) यह बडे २ गांवो के लिए असुविधाजनक है।

ये आपत्तियाँ नाममात्र की हैं क्योंकि यह पद्धति अत्यन्त सरल एव शुद्ध है। तथा इसके द्वारा व्यक्तिगत समस्याओ के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त हो जाती है।

इसके विपरीत इस निदर्शन विधि से अभिप्राय उस विधि से है जिसके अन्तर्गत प्रतिनिधि इकाइयो का अध्ययन करते हैं। इस विधि के अनुसार एक प्रतिनिधि इकाई प्रति दस या बीस इकाईयो के बाद चुन ली जाती है। उदाहरण के लिए मान लीजिए एक गाव मे १००० परिवार हैं उनका सर्वेक्षण करना है। यदि हम प्रति १० इकाइयों के बाद १ इकाई का अध्ययन करते हैं तो हमे केवल १०० इकाइयों का अध्ययन ही करना पडेगा तथा परिणाम के अनुकलन द्वारा प्राप्त किये जायेंगे। इस विधि का प्रयोग जब किया जाता है जबकि अध्ययन का क्षेत्र बहुत बडा हो क्योकि इस विस्तृत क्षेत्र की प्रत्येक इकाई का अध्ययन करना कठिन ही नहा बल्कि असम्भव भी है। यह विधिपूर्ण विस्तृत है सही नही है। इस प्रकार से दोनो की तुलना करने पर सगणना प्रणाली खरी उतरती है।

३—अनुसूची विषय सम्बन्धी तथ्य करने के लिए बनाया जाना चाहिये। इसमें सगणना के सम्बन्ध में समस्त प्रश्नो का समावेश होना चाहिये।

४—साक्षात्कार के लिए प्रश्न सूची में दिये गये प्रश्नो को परिवार के मुखिया से पूछ करके उत्तर लिखते जाना चाहिये तथा प्रश्न पूछने में जल्दी नही करनी चाहिये जिससे गलती रहने की सम्भावना न रहे।

५—प्रश्न सूची में समस्त तथ्य एकत्र करने के बाद उनका टेबुलेशन करना चाहिये जिससे

सम्बन्धित तथ्यों का सम्बन्धित समस्याओं के अनुसार वर्गीकरण किया जा सके।

६ तथ्यों के एकत्रित हो जाने पर समस्त देश की योजना बनाने के लिए विभिन्न गावों की सामूहिक समस्याओं का चयन एवं तरह करके एक सामूहिक योजना का निर्माण करना चाहिए जो सामूहिक समस्याओं के लिए समस्त गांवों को लाभप्रद हो सके। इसके पश्चात् भिन्न २ समस्याओं पर भिन्न २ प्रकार से लघु ग्राम योजनायें बनाई जानी चाहिये। इससे प्रत्येक गाव की विशेष समस्या का समाधान सम्भव होगा।

समस्याओं सम्बन्धी तथ्य एकत्रित करने के लिए प्रश्न
सूची का मैं निम्न स्वरूप प्रस्तुत करता हूँ —

— प्रश्न सूची —

१—सामान्य —

(अ) परिवार के मुखिया का नाम
(ब) लिंग
(स) आयु
(द) जाति
(ई) धर्म
(उ) मकान न०
(ऊ) मौहल्ला
(ए) धन्धा
१—मुख्य धन्धा
२—सहायक धन्धा
३—अन्य धन्धा

२—पारिवारिक स्थिति —

(अ) पारिवारिक सदस्य संख्या
(ब) पुरुष संख्या (१) बालिग (२) नाबालिग
(स) स्त्री (१) बालिग (२) नाबालिग

(द) सदस्यो के सम्बन्ध म महत्वपूर्ण सूचनायें —

सदस्य का नाम	लिंग	ग्रायु	विवाहित ग्रविवाहित	शिक्षित ग्रशिक्षित	कमाने वालो की सख्या	कमाने वाले एव ग्राश्रित	कुल ग्राश्रित
१	२	३	४	५	६	७	८
१—							
२—							
३—							
४—							
५—							
योग							

३—निवास सम्बन्धी सूचनायें

क्रम सख्या	मकान का प्रकार	सख्या	क्षेत्र	फर्श	दीवार	छत	कमरे	दरवाजा रोशन दान एव खिड़किया	प्रयोग
१	२	३	४	५	६	७	८	६	१०
१—	पक्का								
२—	ग्राधा पक्का								
३—	कच्चा								
४—	झोपड़ी								
५—	बाड़ा								
६—	ग्रन्य								
	(१)								
	(२)								

४—जन्म मरणसमक —

(क) परिवार में कुल कितने बच्चो का जन्म हुग्रा

(ख) परिवार मे वतमान मे कितने बच्चे हैं

(ग) परिवार मे मृतक बच्चो की सख्या

(घ) मृत्यु के समय ग्रायु

(इ) यदि मृत्यु का कारण बीमारी है तो इलाज सम्बन्धी बाते —

(अ) किससे इलाज करवाया डाक्टर / सयाने ?

(ब) किस जगह इलाज करवाया ?

(स) क्या बीमारी बतलाई गई ?

(द) अन्य बाते ?

५—पुनर्निवास —

(१) गाव म कब आये ?

(२) कहा से आये ?

(३) क्या परिवार का कोई सदस्य घर से बाहर रहता है ? यदि हा तो कहा और क्यो ?

(४) क्या करता है ?

(५) कितना कमाता है ?

(६) विवाहित है या अविवाहित ?

(७) घर के लिए क्या भेजता है ?

(६) पारिवारिक ऋण सम्बन्धी स्थिति

ऋण का स्रोत	मूलधन	समय	ब्याज दर	गिरवी का प्रकार	अमानत	ऋण लेने का उद्देश्य
१	२	३	४	५	६	७
१—बैंक						
२—सहकारी समिति						
३—साहूकार						
४—व्यापारी एव महाजन						
५—मित्र एव सम्बन्धी						
६— अन्य						
योग—						

७—परिवार की कुल वार्षिक आय

(क) भूमि पर कृषि से आय

फसलें	वास्तविक जोती गई भूमि का क्षेत्रफल	उपज मनो मे	बाजार मूल्य	उपज किस काम में लाई जाती है	अन्य बातें
१	२	३	४	५	६
बाजरा					
ज्वार					
मोंठ					
मूंग					
ग्वार					
चौला/चोली					
उड़द					
मूंगफली					
चना					
जौ					
गेहूं					
सरसों					
अरहर					
मक्का					
प्याज					
पटसन					
तिल					
कपास					
बगीचों से आय					
अन्य					
योग—					

कृषि सम्बन्धी व्यय

(१) खाद

(२) जुताई
(३) बुवाई
(४) नराई
(५) बीज
(६) सिचाई
(७) कृषि क्रियायें
(८) कृषि औजार
(९) भूमि का लगान
(१०) अन्य
योग

कुल कृषि आय
कुल कृषि व्यय
शुद्ध आय कृषि से
(ख) कृषि श्रम से आय
(ग) कृषि के अतिरिक्त अन्य श्रम से आय
(घ) सरकारी नौकरी से आय
(ङ) गैर सरकारी नौकरी से आय
(च) व्यवसाय या व्यापार से आय
(छ) ब्याज की आय
(ज) विविध
योग
कुल योग

८—कुल भूमि

(१) खेती योग्य भूमि
(२) बंजर भूमि
(३) भूमि जिसमें पिछले वर्ष खेती की गई हो लेकिन इस वर्ष नहीं की गई है
(४) भूमि जिस पर इस वर्ष खेती की गई है
(५) भूमि जिस पर पिछले वर्ष खेती नहीं की गई वरन् इस वर्ष की गई

(६) स्वय की भूमि या कब्जे में है ?
(७) क्या काश्तकार स्वय काश्त करता है ?
(८) भूमि पर फसलें—
(अ) रबी—
(ब) खरीफ—
(स) जायद—
(९) अन्य बातें

९—परिवार का वार्षिक उपभोग व्यय

(क) भोज्य पदार्थ

(अ) अनाज	मात्रा	मूल्य
१	२	३
१—		
२—		
३—		
४—		

(ब) दालें
(स) शाक तरकारी
(द) चीनी
(ई) गुड
(उ) मास
(ऊ) अण्डे
(ए) दूध
(ऐ) फल
(ओ) घी इत्यादि देशी-डालडा
(औ) ममाले
अ) अन्य
कुल भोज्य पदार्थो पर व्यय

(ख) कपडे	गज—गिरह	मूल्य— सूती/ऊनी/व अन्य
पुरुष		

स्त्री
बच्चे
दैत का सामान
अन्य
योग

(ग) जूती एव जूता | संख्या जोड़ी | किस्म | मूल्य

पुरुष
स्त्री
बच्चे
योग

(घ) ईंधन एव मिट्टी का तेल

लकड़ी | उपले | मिट्टी का तेल | माचिस
अन्य | | योग |

(ङ) मकान किराया एव अन्य मकान सम्बन्धी व्यय

१ मकान किराया
२ नया मकान बनाने पर
३ मरम्मत करवाने पर
योग

(च) स्वास्थ्य एव शिक्षा

(छ) नशीली वस्तुयें
१—शराब देशी / विदेशी
२—भाग
३—तम्बाकू
४—अन्य

(ज) त्योहार एव संस्कार

(झ) सेवायें

(ञ) विविध—

यात्रा | मुकदमा | अन्य

कुल योग—

१०)—यदि परिवार में बचत होती है तो उसका किस प्रकार प्रयोग किया जाता है—

(अ) पैतृक ऋण का भुगतान करने में—

(ब) स्वय द्वारा लिये गये ऋण का भुगतान करने मे-

(स) ऋण देने में—

(द) नई सम्पत्ति का क्रय करने म—

(इ) अन्य ब्याज आदि

११—यदि आय से व्यय अधिक रहता है ता परिवार का बजट पूरा कैसे किया जाता है—

(क) ऋण लेकर

(ख) पूजी सम्पत्ति या स्थायी सम्पत्ति का विक्रय करके

भूमि मकान पशु गहने अन्य

(ग) अन्य साधन

१२—कुल पशु

(अ) दूध देने वाले

(१) गाये दूध देने वाली गाय जो दूध नही देती बछडे/बछडिया

गायो से प्रतिदिन दूध की मात्रा एव उसका उपयोग

(अ) मात्रा (ब) उपयोग

(२) भैंसें —दूध देने वाली भैंसे जो दूध नही देती आवारा पाडे/पाडिया

भैंसें के प्रतिदिन की दूध की मात्रा उपयोग

(३) बकरिया बकरिया दूध देने वाली

बकरिया जो दूध नही देती बकरा/बकरी/बच्चे

बकरियो से प्रतिदिन दूध की मात्रा उपयोग

(ब) ऊन प्रदान करने वाल

भेडे मेमने

(स) बोझा ढोने वाले

ऊट ऊटनी गधे खच्चर

(द) कृषि के प्रयोग में आने वाले

बैल

भैंसे

ऊट

(ई) अन्य

१३—अन्य उपयोगी बातें

पंचायतें ग्राम योजनायें कैसे बनायें

—श्री विष्णुदत्त शर्मा

हमें यह मानकर चलना पड़ेगा कि कोई गांव विकास की व्यापक योजना के बिना स्वावलम्बी एवं स्वाश्रयी नहीं बन सकता। इसलिए हमें गांवों के बारे में ऐसी योजना के संबंध में पहिले बात कर लेनी चाहिए। हमारे गांवों की योजना का मुख्य उद्देश्य यह होना चाहिए कि जिससे गांवों में उपलब्ध सभी साधनों का अधिकाधिक उपयोग हो सके और इस योजना को पूर्णरूपेण सफल बनाने के लिए जहां तक सम्भव हो बाहरी सहायता प्राप्त कर सकें। ग्राम विकास की योजना तैयार करते समय तीन मोटी बातों का ख्याल रखना पड़ेगा—

(१) सर्वेक्षण (२) गांव की आवश्यकता, और (३) कार्य करने की योजना।

(१) सर्वेक्षण—

ग्राम की योजना तैयार करते समय यह जरूरी है कि उस गांव के सब साधनों का (व्यक्ति व सामान) पूरी तरह तखमीना कर लिया जाय। गांव की स्थिति का ज्ञान जब तक पूर्णरूप से न हो योजना को आधार बनाने में कमजोरी रहने की आशंका है।

(२) गांव की आवश्यकता—

किसी भी गांव की योजना बनाने से पहले वहां के निवासियों की प्रमुख आवश्यकताओं को जानना जरूरी है। यह कार्य गांव वालों से बातचीत और पूछताछ करने पर ही सम्पादित किया जा सकता है।

गाव वालों की मूलभूत जरूरता को जान लेने क बा", उनको आवश्यकता के आधार पर आगे पीछे किया जावे ताकि उनको एक एक करके काम में लिया जा सके।

(३) योजना कार्य की रूपरेखा—

यह अत्यन्त आवश्यक है कि गाव की योजना गाव वाले स्वय तयार करें। क्योंकि गाव क विकास की योजना किसी बाहरी एजेंसी द्वारा तयार किए जाने पर यह भय है कि गाव वालों की समस्त स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करने में सफल न हो। इसके अतिरिक्त गाव वालों को यह भी विश्वास नहा होगा कि यह उनकी अपनी योजना है और इसलिए उसे करने में वे उतनी दिलचस्पी नहीं लेंगे। अत यह परमावश्यक है कि गाव वाले अपने गाव की योजना अपनी ग्राम पचायत के जरिये तैयार करें, *प्रसन्नता ग्राम स्तर के कार्यकर्ता से इसमें मदद ली जा सकता है। यह हो सकता है कि प चायत को* योजना तैयार करने म कुछ दिक्कत हो लेकिन ग्राम सेवक उनमें गावा के लिए उचित योजना बनाने में *उत्साह जगा सकता है। इस काम में सही ढग से मदद करने के लिए ग्रामसेवक को ब्लाक के* टेक्निकल स्टाफ द्वारा उचित मार्गदर्शन किया जाना चाहिए।

गावों की योजना में नीचे बताई गई बाता का समावेश किया जाना चाहिये —

(१) प्रोग्राम को कार्यान्वित करने और प्रशासन चलाने का योजना,

(२) कृषि को उन्नत बनाने की योजना,

(३) पशु-पालन के विकास की योजना,

(४) स्वास्थ्य-सफाई और चिकित्सा की सुविधा की योजना,

(५) शिक्षा की योजना

(६) सहकारिता और देहातों में कर्ज देने की व्यवस्था क विकास की योजना

(७) ग्रामोद्योग के विकास की योजना,

(८) गाव के मकानो म सुधार की योजना,

(९) यातायात के साधनो क विकास की योजना, तथा

(१०) *गावों की संस्कृति के विकास की योजना।*

(१) गाव का प्रशासन—

यह एक माना हुई बात है कि गाव क सब लोग विकास के सभी कार्यों में सीधे अपना पार्ट अदा नहीं कर सकते परन्तु उनको किसी एक लोकतान्त्रिक सस्था के माध्यम से विकास के कार्यों में लाया जा सकता है। गाँवा म प चायत से अधिक अच्छी और कोई लोकतान्त्रिक सस्था नहा हो सकती और ग्राम प चायत कोई नई सस्था नहा। सदियों से इस देश में गाव वाले अपनी प चायत को आदर की दृष्टि से देखते आये हैं। ग्राम-सगठन व जन-पद व उल्लेख प्राप्त हैं हो। यदि हमें अपने देश म लोकतन्त्र को

व्यापक और सुदृढ बनाना है और देश के दूर दूर के क्षेत्र के साधारण ग्रामीण के लिए भी उसे मूर्तरूप देना है तो इस संस्था का हमें ग्राम विकास के सभी कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने का केन्द्र बनना पड़ेगा।

गाव के विकास के सब कार्यों को पूरा करने की जिम्मेदारी पचायत को सौंपी जानी चाहिये क्योंकि किसी बाहरी एजेंसी की अपेक्षा पचायत उन्हें अधिक दिलचस्पी से कार्यान्वित करेगी। और पचायतों को भी चाहिये कि वे ग्रामीणों की भलाई व बहबूदी के लिये सब विकास कार्यक्रमों को स्वय हाथ में लें।

(२) कृषि—

गावो के निवासियो का मुख्य धन्धा कृषि है और सब्बा ग्रामीण समाज एक हद तक खेती बाडी पर ही आश्रित होता है परन्तु देश के अधिकाश गांवों में अपनी आवश्यकता के अनुसार खाद्यान्नों का उत्पादन नहीं होता और हमें उनकी कमी को दूर करने के लिये बाहर से अनाज मगाना पड़ता है। इसलिए प्रत्येक गाव का यह लक्ष्य होना चाहिये कि वहां अपनी जरूरत के अनुसार खाद्यान्न तो पैदा करें ही, साथ ही कमी के लिए अतिरिक्त अनाज पैदा करने के प्रयत्न करें।

(३) पशु पालन—

ग्रामीण अर्थ व्यवस्था में पशुपालन का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। अतः स्वस्थ और मजबूत मवेशियों को पैदा करने और पालने की अत्यन्त आवश्यकता है साथ ही बकरियों और मुर्गे मुर्गियों का भी उचित विकास किया जाना चाहिये। हमारा लक्ष्य दूध का उत्पादन बढाने की ओर होना चाहिये ताकि गाव के प्रत्येक परिवार के हर व्यक्ति को प्रति दिन आध सेर दूध पीने के लिये मिल सके इसके अलावा उन्नत किस्म के बैलों की तादाद बढायी जानी चाहिये और उन्हें अच्छी खुराक दी जानी चाहिये। पशु चिकित्सा की व्यवस्था द्वारा मवेशियों का छूत की बीमारियों से बचाने की व्यवस्था भी की जानी चाहिये। मवेशियों के लिए चरागाहों की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

(४) स्वास्थ्य एवं सफाई—

गांवों में स्वास्थ्य एवं सफाई के लिए योजना तैयार करते वक्त इन बातों का ध्यान में रखना आवश्यक है—योजना में गावों के सभी वर्गों के लोगों के इस्तेमाल के लिए पीने के पानी के कुओं की व्यवस्था की जानी चाहिए, स्वच्छ आदतों को अपना कर गावों को साफ सुथरा रखने की कोशिश की जानी चाहिए

गांवों में बीमारों की चिकित्सा की व्यवस्था के लिए छोटे छोटे गावों के समूहों के लिए एक औषधालय या डिस्पेन्सरी भी कायम की जानी चाहिये। जच्चा माताओं की देखभाल के लिए दाइयों की व्यवस्था भी आवश्यक है। चेचक और हैजे के टीके भी सभी को लगाए जा सकें, ऐसा प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

(५) शिक्षा—

हमारी आधुनिक शिक्षा प्रणाली देश की सब जरूरतों को पूरा नहीं कर पाती। शिक्षा का महत्व इस बात से नहीं कि कितने विषय में शिक्षा प्राप्त की जाती है बल्कि इस बात से आंका जाना चाहिए कि जिन विषयों में शिक्षा प्राप्त की गई है उनमे से दैनिक जीवन के कार्यों में उसका किस हद तक इस्तेमाल किया जाता है।

(६) सहकारिता—

गाँव मे सहकारी संस्थायें न केवल कृषि एवं ग्रामोद्योग को प्रोत्साहन देने बल्कि गाव वालों के सामूहिक प्रयत्नों को संगठित करने के लिए भी आवश्यक होती हैं। अतः गाँवों के विकास की योजना में सहकारी संस्थाओं का विशेष महत्वपूर्ण स्थान है। गाव में सहकारी समितियों को उचित ढंग से संगठित करने से, गाव के विकास के बहुत से कार्यक्रमों में सफलता प्राप्त की जा सकती है।

प्रत्येक गाव मे एक बहुउद्देशीय सहकारी समिति की स्थापना की जाय और प्रत्येक परिवार को उसका सदस्य बनाया जाय। यह समिति गावों की अतिरिक्त उपज की बिक्री और लोगों की जरूरत की चीजों के बटवारे का काम भी कर सकती है। खाद, बीज उन्नत कृषि औजारों की सप्लाई एवं बटवार का काम भी इस समिति के द्वारा किया जाना चाहिए। ग्रामोद्योगों के लिए आवश्यक कच्चे माल का स्टाक भी यह समिति अपने पास रख सकती है। गावों में उपयोग के लिए सहकारी समिति अच्छी नस्ल का साड भी रख सकती है।

(७) ग्रामोद्योग—

हमारे देश में बेकारी और कम रोजगार की समस्या इसलिए भी बनी हुई है कि हमारे ग्रामोद्योगों की उपेक्षा होती रही है। हालांकि हमारा देश कृषि प्रधान है। फिर भी पहले से ही हम लोग ग्रामोद्योग को उचित स्थान देते आये हैं। और यही कारण है कि ग्रामोद्योग द्वारा तयार की गयी कलात्मक वस्तुएं हम देखने को मिलती हैं।

(८) मकान—

गावों में मकानों का सुधार दो तरीकों से हो सकता है—एक तो मौजूदा मकानों मे सुधार करके और दूसरे नये मकानों का निर्माण करके।

गावों के जो लोग पुराने मकानों का सुधार करना चाहते हो या नये मकानों का निर्माण करना चाहते हों वे एक सहकारी समिति बना सकते हैं। नये मकानों के निर्माण के लिए सहकारी समिति द्वारा ऋण की व्यवस्था भी की जा सकती है।

(९) यातायात—

जब तक गांव का बाहर के इलाको से सड़क यातायात का संबंध नहीं होता तब गाव अपना

भरपूर विकास नही कर सकता। इसके लिये आवश्यक है कि गाव को शहर या विकास खण्ड के केन्द्र से जोड़ने के लिए सड़क का निर्माण किया जाय। ये सड़कें बारह महिनों उपयोग में लाई जा सकें ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये।

(१०) सांस्कृतिक विकास—

गाव के विकास कार्यक्रम में सांस्कृतिक पहलू को अक्सर नजरन्दाज कर दिया जाता है। लेकिन ग्राम विकास के जरिये जो आत्मनिर्भरता होगी वह पक्की और टिकाऊ नही होगी यदि उसको गाँव का सांस्कृतिक आधार पूर्ण रूप से प्राप्त न हो।

वैसे देखा जाय तो ग्रामीण जीवन आमोद प्रमोद और खेल-कूद के अभाव मे सुखी नही हो सकता। एक बात और है—मनोरंजन के जरिये नये विचारों को ग्रामवासियों तक आसानी से पहुँचाया जा सकता है। अत यह आवश्यक है कि गावों में प्रचलित लोक नृत्यों एव लोकगीतों का प्रोत्साहित किया जाय।

उपरोक्त बातों को ध्यान मे रख कर ग्रामीणों द्वारा बनाई जाने वाली ग्राम विकास की योजना को कार्यान्वित करने से गाव को आत्मनिर्भर बनने और अपने आप में भरा पूरा बनने में बहुत सफलता मिल सकती है।



ग्राम औद्योगीकरण कार्यक्रम का निर्धारण

—श्री जयप्रकाश नारायण

हमारे देश का प्रत्येक राज्य मुख्य रूप से ग्रामीण है—कुछ अधिक और कुछ कम। इसलिये भारतीय अर्थ व्यवस्था को सर्वविदित समस्याओं का सामना करना पड़ता है। फिर भी जो बातें बहुत कम महत्व की है वे अधिक उत्सुकता पैदा करती हैं और मंत्रियों व अधिकारियों का अधिक समय लेती है। गावों में जो लोग रहते हैं उनकी संख्या सारे देश की जनसंख्या का ८२ प्रतिशत है उसके लिये खेती के अलावा अन्य काम ढूंढ़ने पर ध्यान नहीं दिया जाता है। यह कार्य महत्वपूर्ण और आवश्यक है। १९५७ में लोकसभा में भाषण देते हुये पं० नेहरू ने कहा था कि भारत का विकास गावों के विकास पर निर्भर है। यह बात पहली बार नहीं कही गई थी और न आखिरी बार और न पंडित नेहरू ने अकेले कहा थी। हरेक नेता ने यही बात कही थी। बात भी सही है—इसके विपरीत हो भी कैसे सकता है। इसलिये यह बड़े खेद की बात है कि राज्य सरकारों ने इस कार्यक्रम को प्राथमिकता नहीं दी।

मैं इस बात पर बल देना चाहता हूं कि राज्यों की जो हालत है उसमें यदि मुख्यमंत्री निजी

तौर पर दिलचस्पी नहीं लेते हैं और इस कार्यक्रम को उचित महत्व नहीं देते हैं और अपनी सत्ता और मोह में नौकरशाही के मानस्य को नियंत्रित नहीं करते हैं तो यह कार्यक्रम आगे नहीं चल सकता है। यह ठीक है कि कई राज्यों में मुख्यमंत्री राज्यस्तर की कमेटी का अध्यक्ष है लेकिन इससे कमेटी को आवश्यक दर्जा नहीं मिला और न वह सत्ता व शक्ति मिली जिससे ग्राम उद्योग योजना कमेटी गांव वालों का भला कर सकती। इसलिये मैं आशा करता हूं कि राज्यों में कृषि विकास के बाद ग्राम उद्योगों को महत्व दिया जायगा। निस्सन्देह कृषि विकास को प्रथम दर्जा मिलना चाहिये।

प्रशासनिक समस्यायें

प्रशासन के मुख्य उद्देश्य दो थे (१) उद्योगों के विकास में सम्बन्धित सभी एजेंसियों के साधनों, प्रयत्नों और योजनाओं को एक सूत्र में बांधना (२) प्रशासनिक कार्यविधि को साधारण बना कर कार्यक्रम के कार्यान्वयन में शीघ्रता लाना।

जहां तक पहले उद्देश्य का सम्बन्ध है राज्य स्तर पर विभिन्न एजेंसियों के प्रतिनिधियों की कमेटी बनाकर एकीकरण के उद्देश्य को कुछ सीमा तक प्राप्त किया गया है। लेकिन यह प्रारम्भ मात्र है। प्रोजेक्ट स्तर पर अधिकांश एजेंसियों के पास संगठनात्मक इकाई नहीं है। अब देखना यह है कि उस स्तर पर एकीकरण कैसे होता है।

इस क्षेत्र में मुख्य समस्या यह है कि भिन्न उद्योगों के बीच सजीव व कल्पनापूर्ण संतुलन कैसे लाया जाय ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में औद्योगिक काम बढ़ता रहे। इस समस्या का अध्ययन ग्रामीण उद्योग व योजना कमेटी की स्थायी समिति द्वारा किया जाता है। इस प्रकार सारे जटिल प्रश्न जिनमें उत्पादन कार्यक्रम, कच्चे माल का निर्धारण, कीमत निश्चित करना, बेचना आदि हैं सभी हल किये जाते हैं।

जहां तक दूसरे उद्देश्य का सम्बन्ध है आपको ध्यान होगा कि ग्रामीण उद्योग योजना कमेटी की राय थी कि कार्यक्रम को प्रशासनिक जाल से बचाना चाहिये। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह आवश्यक है कि पत्र-व्यवहार इस प्रकार हो—स्थायी कमेटी, राज्य स्तर कमेटी, प्रोजेक्ट कार्यालय कमेटी। वास्तव में मैं अपने थोड़े अनुभव के आधार पर यह बताना चाहूंगा कि राज्य स्तर कमेटी को सलाहकारी कमेटी के रूप में बना दिया गया है और विभाग इतने हावी हो गये हैं कि शीघ्र कार्यान्वय का उद्देश्य पूरा नहीं हो सका है। कोई काम पूरा किया जाय इस पर उतना जोर नहीं दिया जाता है। इसे यदि और अधिक स्पष्ट किया जाय तो आरम्भ में सोचा गया था कि प्रोजेक्ट कार्यालय कमेटी वित्तीय साधनों के अनुकूल एक विशेष कार्यक्रम बनायगी। उस कार्यक्रम पर विभागीय जांच होगी। विभागों के सुझावों की दृष्टि से योजना में फिर हेरफेर किया जायगा। फिर वह राज्य स्तर कमेटी के पास जायगा। उसका जो निर्णय होगा वह राज्य सरकार के निर्णय के समान होगा। फिर वह योजना प्रोजेक्ट स्तर पर जायगी जहां उसे कार्यान्वित किया जायगा। लेकिन हुआ क्या है। राज्य स्तर कमेटी के निर्णय पर विभाग विचार करते हैं। इससे राज्य स्तर कमेटी का अस्तित्व बेकार हो जाता है और कार्यक्रम की गति अवरुद्ध हो जाती है।

उपर्युक्त प्रशासनिक प्रश्नो से अधिक मौलिक प्रश्न उद्योगो को प्रोत्साहन देने वाली एजेंसिया क्या है। आपको ध्यान है कि मैंने एक प्रस्ताव रखा था कि एक ग्रामीण औद्योगीकरण आयोग की स्थापना की जाए जिसमे वर्तमान में तमाम एजेंसिया शामिल का जायें जो ग्रामीण धन्धो से सम्बन्ध रखती हैं। उस प्रस्ताव को अव्यवहारिक समझा गया। एक दूसरा प्रस्ताव योजना आयोग ने स्वीकार कर लिया लेकिन उसे भी अस्वीकार कर दिया गया और अन्त में निम्न एजेन्सिया बनाई गई (१) ग्राम उद्योग योजना कमेटी (२) राज्यस्तर कमेटी, (३) प्रोजेक्ट कमेटी। यह निर्णय प्रयोग के रूप में किया गया था। इसका अर्थ यह हुआ कि हम इसमें परिवर्तन कर सकते हैं।

इस समय केन्द्र मे ग्रामीण उद्योग योजना कमेटी व स्थायी समिति सन्तोष जनक एजेंसियां समझी जाती हैं। फिर भी दो बातें स्पष्ट हैं (१) जैसे जैसे कार्यक्रम और क्षेत्रों मे फैलता जाता है ये कमेटियां उस कार्य का सम्पादन नहीं कर पायेंगी। यही बात राज्य कमेटियों के बारे में होगी। (२) इन दोनो कमेटियों में ऐसे कर्मचारियो की संख्या बढ़ाना चाहिये जो तकनीकी और व्यवसाय की शिक्षा जानते हों।

राज्य स्तर कमेटी के सम्बन्ध मे मैंने ऊपर काफी कहा है। अब नीचे प्रोजेक्ट कमेटी के बारे में मुझे स देह है कि क्या यह संस्था अपने वर्तमान रूप में कार्य को आगे बढ़ा सकती है? बिहार की दो प्रोजेक्ट कमेटियों को छोड़ कर बाकी ४४ कमेटियां विभागो की तरह काम करती हैं।

प्रशासन व उद्योग के बीच अन्तर निकालना तो साधारण बात होगी। यह तो हर कोई बताता रहा है। हाल ही में श्री मुखर्जनियम ने कहा था, "औद्योगिक प्रशासन को लेखा जोखा के नियन्त्रण से मुक्त किया जाय।" उन्होने आगे कहा कि औद्योगिक कार्यों का "अनुशासन राजनैतिक अनुशासन से विभिन्न होता है। यदि आप उद्योग को विभाग की भांति चलाना चाहें तो वह असफल हो जायगा।" अब महत्वपूर्ण बात यह है कि जब इतनी बात हो रही है लेकिन इसके बारे में इतना कम किया जा रहा है।

प्रोजेक्ट क्षेत्र के बारे में सोचते हुए हमे आगे बढ़ाने वाली एजेंसी के सबसे अच्छे रूप को बनाने पर गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिये। जब तक ऐसी एजेन्सी नहीं होगी ग्रामीण उद्योग अपने आप विकास नहीं कर सकते हैं। बड़े और छोटे उद्योगो के क्षेत्र में सरकारी सहायता से निजी उद्योग इन सेवाओं का प्रदान कर सकता है। ग्रामीण उद्योगों के क्षेत्र में ये सेवायें सामाजिक प्रेरणा से ही मिल सकती हैं। इस सम्बन्ध में श्री शूमाकर का सुझाव जो उन्होंने योजना आयोग को दिया है कि जिला विकास निगमों की स्थापना की जाय विचारणीय है।

ग्रामीण उद्योगो का सारा भविष्य अन्धकारमय लगता है क्योंकि कम मिलने वाला और नियन्त्रित कच्चा माल उपलब्ध नहीं है। शहरो के उद्योगो को यह माल मिल सकता है लेकिन गांवों के उद्योगों को नहीं। इस कारण से ग्रामीण उद्योगो का क्षेत्र सीमित हो गया है। यह क्षेत्र खादी ग्रामोद्योग कमीशन के अन्तर्गत आजाता है। फिर प्रोजेक्ट कमेटियों व अन्य दो कमेटियो के बनाने की आवश्यकता कहां रह जाती है।

मैं तो कहूंगा कि हम सब को महात्मा गांधी की बुद्धिमत्ता व दूरदर्शिता की प्रशंसा करनी

चाहिए। मैंने देखा कि खादी ग्रामोद्योग के अन्तर्गत जो उद्योग आते हैं उन पर शहरी लोग हंसते हैं लेकिन जब यह बात स्पष्ट कर दी जाती है कि आज की हालत में गावों में इनके अलावा और कोई उद्योग नही चलाये जा सकते हैं तो क्या मजाक बन्द नही होगा और क्या इन उद्योगों का समर्थन नही होने लगेगा? जापान में शिल्प उद्योग व कुटीर उद्योग लोगों के उपयोग के लिए बहुत सा सामान तैयार करते हैं और शहरों के कारखानों में तैयार किया हुआ माल निर्यात किया जाता है ताकि विदेशी मुद्रा पैदा की जा सके। क्या हम आशा करें कि समाज के समझदार लोग इसी देशभक्ति की भावना से प्रेरित होंगे?

यदि ग्रामीण उद्योगों का विकास स्थानीय कच्चे माल के आधार पर ही करना है तो तीन बातें करनी चाहिये। (१) योजना आयोग को अध्ययन करना चाहिये कि कौनसे उद्योग गावों में चल सकते हैं और उनकी रूपरेखा गांव वालों को देनी चाहिए। (२) ग्रामीण उद्योगों की टेकनॉलोजी को उन्नत बनाने के लिये शोध किया जाना चाहिये। श्री शुमाकर ने कहा कि ऐसी टेकनॉलोजी बनानी चाहिये ताकि उद्योगों से अधिक उत्पादन व अधिक लाभ हो। (३) बिजली की कमी का ध्यान में रखते हुए, अन्य शक्ति स्रोत खोजने की कोशिश करना चाहिए। प्रयोग शालाओं में बहुत सा तथ्य मौजूद है लेकिन उसका प्रयोग नही किया गया है।

नीति व इच्छा का अभाव

मैंने ऊपर कहा है कि अच्छे और कम अच्छे उद्योगों में बीच सहयोग होना चाहिए। इस प्रश्न पर विचार करना है लेकिन जिन उद्योगों के बारे में अध्ययन हो चुका है जैसे तेल निकालना, धान कूटना आदि उनके बारे में राज्य सरकारों की कोई स्पष्ट नीति नही है और यदि कोई नीति है भी तो उसे अच्छी तरह बर्ता नही जा रहा है। यह प्रश्न इसलिये भी महत्वपूर्ण बन गया है कि ग्रामीण उद्योगों का क्षेत्र सीमित है। यह खेद की बात है कि उद्योग गांवों से हट कर शहरों की ओर जा रहा है। गावों में उद्योगों के बारे में होशियार लोग नही रह गये है। उनके दृ निग की व्यवस्था होनी चाहिये।



ग्राम औद्योगीकरण पर एक दृष्टि

—प्रो डी. आर. गाडगील

मैं समझता हूं कि आर्थिक विकास की योजना का मुख्य आर्थिक व सामाजिक उद्देश्य गावों का औद्योगीकरण है । इसलिए इसे तभी प्राप्त किया जा सकता है यदि सारी विकास योजना विशेषकर उद्योगीकरण की योजना इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए बनाई जाये । आज ग्रामीण उद्योगीकरण के लिए जो प्रयत्न किये जा रहे हैं या जो दृष्टिकोण अपनाया जा रहा है उससे कोई ठोस परिणाम नही निकलेगा । और आगे चलकर बडे उद्योगो से सम्बन्धित जो नीति व सुझाव है वह निश्चितरूप से उद्योग को शहरी व पूंजी आधारित बना देगा और देहात को गरीब व उद्योग विहीन कर देगा मैं समझता हूं कि ग्राम उद्योगीकरण का उद्देश्य कारोबार मिलने कि शक्ति से पूर्ण है और विकास की आवश्यकताओ को पूरी करता है । योजना की रचना के बारे में जो वर्तमान ज्ञान है वह इस समस्या का शीघ्र व सरल हल नही बताता है । इसलिए इस पर थोड़ा थोड़ा करके प्रयास करना चाहिए ।

बड़े बड़े उद्योगों के लिए स्थान निश्चित करने के लिये जो निर्णय किये जाते हैं और जो लायसेंस दिये जाते हैं वे देश के उद्योगीकरण का भावी रूप बताते हैं। विकास क्षेत्र में जो काम किया जाता है वह आवश्यक तत्व है जो भावी व्यवस्था को निश्चित करेगा। इस सम्बन्ध में निर्यात बढ़ाने में जो प्रयत्न किया गया और विदेशी सहयोग के बारे में नीति निर्धारित की गई वह भी महत्वपूर्ण बन गई है। इस समय ऐसा नहीं लगता है कि उपर्युक्त बातों का ग्राम उद्योगीकरण से कोई सम्बन्ध है। इन परिस्थितियों में उन बातों का परिणाम यह होता है कि ऐसे ऐसे उद्योग खुल जाते हैं जिनकी तुलना बड़े बड़े उद्योगशील देशों से की जा सकती है। इन उद्योगों के लिए बड़े बड़े शहरों को उपयुक्त समझा जाता है। निश्चित है कि इन कार्यों के विकास का भावी रूप भी उसी प्रकार बनेगा जिस प्रकार तकनीक, दर्जा व स्थान बनेगा।

इस समय जो व्यवस्थायें व रीतियां चल रही हैं उनके प्रभाव के अलावा आगे चलकर उनके महत्वपूर्ण परिणाम भी होंगे। सामग्री के प्राप्त होने के बारे में भी कुछ कहना है। ग्रामीण औद्योगीकरण के लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण आधार वह कच्चा माल है जो गांवों में प्राप्य है। यदि उस कच्चे माल को शहरों के आधुनिक व बड़े बड़े उद्योगों में प्रयोग कर लिया जायगा तो गांवों का उद्योगीकरण असम्भव है। आज यही हो रहा है और जहां तक मुझे पता है जो कदम उठाये जा रहे हैं उनके परिणामों पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। उदाहरण के लिये चीनी के उद्योग से जो शीरा निकलता है उसे बड़े बड़े उद्योगों में काम में लाने की योजना है मैंने सुना है कि ध्यान के पानी निकालने के लिए विदेशी सहायता से एक बड़ी फैक्टरी लगाई जाने वाली है। जब तक नीति स्पष्ट रूप से नहीं बनाई जायगी तब तक यही होगा। टक्नोलाजी के विद्वान यही बताएंगे कि आधुनिकतम तकनीक की इकाई स्थापित की जाय जिसका क्षेत्र अधिक से अधिक हो। वे विकल्पों पर तभी विचार करेंगे जबकि नीति निर्धारण उन्हें विचार करने के लिए बाध्य करेगा।

एक ऐसा मामला है जिसमें नीति के निर्णय ने औद्योगिक विकास पर प्रभाव डाला है। यह है वस्त्र उद्योग। उसमें निर्यात के लिए प्रोत्साहन के नाम पर कमजोरियां पैदा की गई हैं। वस्त्र उद्योग में प्रभाव नकारात्मक है। इसका कारण यह है कि ग्राम उत्पादन कार्यक्रम जो पहली योजना में स्वीकार किया जा चुका है उसे पूरा तौर पर नहीं चलाया गया है। उत्पादन के कार्यक्रम को सीमित रक्खा गया है यह उन तक ही सीमित है जहां साथ ही साथ पुराने व आधुनिक तकनीक मौजूद हैं। भविष्य में नई नई वस्तुओं का उत्पादन अधिक क्षेत्र में होगा इसलिए आधुनिक उद्योग की स्थापना की व्यवस्था करनी चाहिये। इन व्यवस्थाओं को उद्योगीकरण की योजना में शामिल करना होगा।

ग्राम उद्योगों की आवश्यकताओं पर भी ध्यान देना चाहिए। सुविधाओं को फैलाना चाहिये। बड़े बड़े कस्बों व शहरों का आकर्षण सब जगह पाई जाने वाली बात है। प्रादेशिक विकास की हरेक योजना में इस बात का ध्यान रखना होगा और यातायात, जल, बिजली आदि की सुविधाओं को फैलाना पड़ेगा। इसलिये इस सम्बन्ध में योजनाओं को दुबारा बनाना पड़ेगा। लेकिन इसमें एक पेचीदा समस्या खड़ी हो जाती है। स्पष्ट है कि हमारे मामूली साधन-सुविधायें को सीमित ही रखने को बाध्य करेंगे। इसलिये ग्राम उद्योगों को केन्द्रों में कस्बों के आस पास ही आरम्भ किया जाना चाहिये। कितने बड़े या छोटे, कि कितने निकट व फैले हुये ये केन्द्र हों—इस पर विचार करना है लेकिन अन्तिम लक्ष्य व

व्याहावरिकता को ध्यान मे रखकर। इसका अर्थ हुआ कि कार्यक्रम थोड़े किन्तु बड़े केन्द्रो में प्रारम्भ किया जाय और बाद मे उसे बढ़ा दिया जाय।

ग्राम उद्योगो की योजना में एक सबसे बड़ी आवश्यकता शोध कार्य की है। जो देश औद्योगिक उन्नति कर चुके हैं वहाँ भी शोध कार्य जारी रहते है। बहुत क्षेत्रों म विकास म कारोबार के बारे में कठिनाइयाँ पैदा हो गई हैं। यदि उनके तकनीकी ढांचे को हम स्वीकार कर लें तो बड़ी मुसीबत खड़ी हो जायगी। यह किसी विशेष उद्योग की समस्या नहीं है बल्कि इस पर सबका प्रभाव पड़ता है। आवश्यकताओं को शोध कार्य में आधुनिकता लाने से पूरा किया जा सकता है। उद्योगो के बारे में अपनी विकास नीति को भी अब एक नया रूप देना चाहिये।

शोध कार्य का एक पहलू है जिसकी ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। ग्राम उद्योगों के आधार के लिए वन भूमि, बंजर भूमि व झाड़ियों से ढकी भूमि को विकसित किया जाना चाहिये। वहाँ पर तरह तरह का कच्चा माल पैदा किया जा सकता है। ग्राम उद्योगों को स्थानीय कच्चे माल पर ही निर्भर रहना पड़ेगा और आज जो क्षेत्र खेती के योग्य नहीं हैं वे ऐसे माल की आपूर्ति के लिये बढ़ते जा रहे हैं।

अपने देश की स्थिति को देखते हुये यह न केवल वांछनीय है बल्कि बहुत आवश्यक है कि पूरे पूरे प्रयत्न किये जाने चाहियें ताकि देश म छोटे पैमाने पर उद्योगों का फैलाव हो। यह लक्ष्य जिसे मैं ग्राम उद्योगीकरण मानता हूँ आसानी से प्राप्त नहीं किया जा सकता है। इसके प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि प्रतिरोध का मार्ग छोड़ दिया जाय जो आजकल हमारे देश में अपनाया जा रहा है और पूरा पूरा प्रयत्न औद्योगिक व आर्थिक विकास के मार्गदर्शन के लिये करना चाहिये। यह मार्गदर्शन और कहीं नहीं मिलेगा। इसलिये अपने प्रयोग के लिये तैयार होना चाहिये। इस प्रयत्न से सफलता प्राप्त हो सकती है यदि हमारा प्रयोग ईमानदारी के साथ हो और विस्तृत हो। इसकी प्रथम आवश्यकता सारे उद्योगीकरण के बारे में अपनी विचारधारा को नया रूप देना है। ग्राम उद्योगीकरण को ध्यान मे रखते हुये बिजली सड़क। यातायात और अन्य आर्थिक विकास कार्यक्रमों व शोध कार्यों पर फिर से विचार करना है।

ग्राम उद्योगीकरण की परिभाषा को कुछ विस्तृत बनाना है। और ग्राम उद्योगीकरण कमेटी के प्रथम कार्यक्रमों के अन्तर्गत मौजूदा से अधिक कार्य होने चाहियें। कार्य की क्या योजना हो, क्षेत्र किस प्रकार विस्तृत हो—इसकी दिशा निम्न सुझावों से मिल सकती है —

(१) परम्परागत ग्राम व नगर के हस्तकला उद्योग। इनको पुन चलाने व इनकी रक्षा करने की कोशिश तकनीकी व दृढ़ आर्थिक आधार पर करनी चाहिये। उसके साथ साथ भावी उन्नति के कार्य क्रम भी हों।

(२) कृषि की उपज को अच्छा बनाना उसे बदलना बंजर भूमि व झाड़ियों में पैदा होने वाली चीजों को उपयोग के अनुकूल बनाना आदि। प्रयत्न यह होना चाहिये कि एक योग सहकारी संगठन हो जिसमें ये तमाम कार्य किये जायें। साथ से इन कार्यों के क्षेत्र को बढ़ाया जाता रहे।

(३) गांवों में इमारती कार्य भी बढ़ाये जायें। ग्राम उद्योगों के लिए इसमें महत्वपूर्ण क्षेत्र

प्राप्त होगा जब काम क्षेत्रों में लोगों को अधिक काम मिलेगा तो तरह तरह के कल, पुर्जों व अन्य चीजों के लिए बाजार बनेंगे। इन बाजारों में ग्राम उद्योगों के छोटे पैमाने पर बनाए गए माल को बेचा जा सकता है। इसी प्रकार इस सम्बन्ध में इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए कि गांवों के नक्शों में सुधार किया, जाय अच्छे अच्छे मकान बनवाये जायें और स्थानीय बाजार तैयार किए जायें।

(४) गांवों के क्षेत्रों में उपभोक्ताओं के लिये नया माल भेजा जा रहा है और भी बहुत सी दिशाएं हैं। खास उद्योगों की वस्तुओं में भी उन्नति की जा सकती है। आज राज्य व जिलों के बीच होड़ लगी हुई है कि बड़े उद्योगों के केन्द्र कहां स्थापित किए जायें। ये बड़े बड़े उद्योग पड़ोस के लोगों को तभी लाभ पहुंचा सकते हैं जब कुछ अन्य उपायों में छोटे पैमाने पर उद्योगों का लगाना, तैयार की गई वस्तुओं का बेचना आदि हैं। ये उपाय भी तभी किए जा सकते हैं जब ग्राम उद्योगों पर ध्यान दिया जाये।



बेकारी और बेरोजगारी से जिहाद

कोई बेकार न रहे
कोई बे रोजगार न रहे

गाव मे कोई बेकार न रहे, कोई बेरोजगार न रहे गाव में सब महनत करें सब कमाए, सब खाए पीए और अपने ही घर मे खुश रहें।

ऐसा हो सकता है पंचायत सर्वेक्षण करे, सर्वेक्षण अर्थात् जाच पडताल करे पता लगाए कि अपने गाव में कितने बेकार हैं कितने आधे बेकार हैं कितने खाली हैं कितने लोगो को काम चाहिए कैसा काम चाहिए, पता लगाए कि कौन कैसा रोजगार कर सकता है पता लगाये कि गाव में कैसे उद्योग धन्धे चल सकते हैं, और फिर लोगो की जरूरतो के अनुसार तथा लोगो की योग्यता और काम करने की शक्ति और क्षमता के अनुसार गाव में नए नए उद्योग धन्धे शुरू कर दे कि जिससे फिर सब को काम मिल सके।

गाव में काम धंधे चलाने के लिए धन भी मिलता है मशीनें भी मिलती हैं औजार भी मिलते हैं, पंचायत यह सब तजवीज कर सकती है।

गाव में नए नए उद्योग धंधे शुरू करने के लिए पंचायत तो सर्वेक्षण भी करेगी और नए उद्योग शुरू भी करवाएगी, लेकिन गाव के लोगों को भी अपनी इच्छा से आगे आकर अपनी सहकारी समितियें बनानी चाहिए और गाव मे सहकारिता के आधार पर नए नए रोजगार शुरू करने चाहिये।

जब गाव में धंधे होंगे तब सब को काम मिलेगा तब गाव छोडकर कोई शहर नही जाएगा न कोई मिल में मजदूर बनेगा, न कुली बनेगा और न रिक्शा चलाने जाएगा, तब गाव मे कोई बेकार नही रहेगा, कोई बेरोजगार नही रहेगा।

खण्ड–८

विविधा



उदयपुर गोष्ठी और उसके बाद

•

"पंचायती राज संस्थाओं को जिला विकास क्षेत्र और ग्राम स्तर पर स्वशासन की इकाई के रूप में काम करना है। हालांकि ये संस्थायें विकेन्द्रित राज्य के एक स्वरूप का निर्माण अवश्य करेंगी पर राज्य की शाखा नहीं होंगी। अपनी आवश्यकता और साधनों की सीमा में ही इन्हें स्वशासन की इकाई के रूप में दायित्वों को निभाना होगा। इसका सीधा अर्थ है कि जहां पंचायत अक्षम होगी वहां समिति और जहां समिति अक्षम होगी वहां उससे ऊंचे स्तर की इकाई को वह दायित्व निभाना होगा। इस हेतु ठीक उसी प्रकार जैसे भारत के संविधान में केन्द्र और राज्यों के मध्य स्पष्ट कार्य विभाजित हैं इनके कार्यों को भी स्पष्ट निर्देश देने वाला विधान हो। साथ ही यह भी स्पष्ट कर दिया जाय कि एक (अमुक) निश्चित समय के बाद इन्हीं संस्थाओं को प्रशासन के पूर्ण दायित्व वहन होंगे। भारतीय संविधान के नीति निर्देशक सिद्धान्त इसी धारणा को बल प्रदान करते हैं इसे शीघ्रातिशीघ्र क्रियान्वित भी करना है पर पंचायती राज की धारणा को पूर्ण रूपेण क्रियात्मक रूप देने का सबसे बड़ी जिम्मेदारी उनकी है, जो 'पंचायतराज' के हामी हैं।

यह वह विचारधारा है जो 'पंचायतीराज की मूल भूत-समस्याओं' पर उदयपुर में जनवरी सन् १९६४ में आयोजित सेमिनार ने पंचायती राज्य पर व्यक्त की। इस विचार धारा की सर्व प्रथम प्रतिक्रिया समाचार पत्रों ने जाहिर की। पर इनमें से कुछ ही समाचार पत्र पंचायती राज की धारणा को छू सके गए तो सेमिनार में व्यक्त विचारों और निर्णयों की आत्मा तक पैठ भी नहीं पाए। तथापि कुछ प्रमुख समाचार पत्रों की टिप्पणियों का सार निम्नलिखित है—

दी टाइम्स आफ इण्डिया (दिल्ली २७/१)—की दृष्टि में ग्राम सभा के स्तर को उन्नत करने के लिए उदयपुर सेमीनार की सिफारिशें किसी सीमा तक पंचायत राज कार्यों के विकास में

मदद करने वाली है। उदयपुर सेमिनार ने सिफारिश की है कि ग्राम सभा का उत्थान पचायत राज कार्यों में सुधार लाएगा। पर पूर्ण आस्था और सहानुभूति रखते हुए भी इस पत्र का विचार है कि स्थानीय नेतृत्व के अभाव में ग्राम सभा को नए अधिकार देने से ही ग्राम-जीवन में कोई परिवर्तन होना मुश्किल है। फिर पचायत राज पर संविधान में नया अनुच्छेद जोड़ने का श्री जयप्रकाश नारायण का प्रस्ताव तो अत्यन्त चयजनक है। पत्र की राय में नया अनुच्छेद जोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं। ग्रामीण क्षेत्रों में मानसिक परिवर्तन की जरूरत को दृष्टि में रखते हुए पत्र का मत है कि सत्तारूढ़ ग्रामस्तर पर व्यवस्थित सगठन कायम कर स्वस्थ नेतृत्व द्वारा काफी कुछ कर सकता है। इसके पूर्व (२३/१) पत्र में पत्र ने टिप्पणी की थी कि पचायत राज का सम्पूर्ण अस्तित्व सरपचों की अनुभवहीनता की कच्ची नींव पर खड़ा है।

दी स्टेटसमैन (दिल्ली २०/१) का कथन है कि सरकार के उदार अनुदानों से पचायत राज अपने ध्येय से भटक गया है। वह आत्मनिर्भर होने की बजाय सरकार का मुखापेक्षी ही अधिक बन गया है। पत्र को शक है कि पचायत राज को और अधिकार देने से उसकी खामियां दूर हो जायेंगी। बल्कि इसमें भी शक है कि सत्ता और सरकार की मुखापेक्षी यह संस्था जनतन्त्र का आधार बन सकेगी।

दी इण्डियन एक्सप्रेस (दिल्ली २३।१) महसूस करता है कि पचायत राज के कार्यों ने प्रारम्भिक आशा ही ध्वस्त नहीं की वरन् शकायें भी उत्पन्न कर दी हैं। पत्र का मत है कि पचायत राज की खामियों को शीघ्र ही दूर नहीं किया गया तो यह बदनाम होकर रह जायगा। फिर विधान सभाओं द्वारा पचायतों का निर्माण ही काफी नहीं है पोषण भी अनिवार्य है।

दी ट्रीब्यून (अम्बाला २४।१) की राय है पचायत राज की संस्थाओं को अपनी समस्या पर विचार करने व उनका हल खोजने के लिए सभी राजनैतिक दलों को उन्हें मुक्त छोड़ देना चाहिए। यह प्रारम्भिक असफलता कहीं पचायती राज के प्रति विश्वास को नष्ट न कर दे। सदर्भ इसके कार्यों में बाधक तत्वों की खोज निकालना और उन्हें दूर करना है। गिन चुन लोगों द्वारा पचायत राज के अधिकारों का दुरुपयोग इसलिए घातक है। पचायतों को उनके वास्तविक अधिकार दिये जाने चाहिए।

दी एक्सप्रेस जनरल (बम्बई २२।१) ने सकेत किया है कि योजनाओं से भी अधिक घातक निराशापूर्ण पचायती राज को पूर्ण असफलता होगी। पचायत राज की समस्या का मूल निर्वाचक जनता के मत का महत्वहीन होकर रह जाना है। मतदाता का इस संस्था पर कोई नियन्त्रण नहीं है। आवश्यकता तो यह है कि गाव की लोकसभा का निर्माण करने वाली ग्राम-सभा को विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था के अधिकार प्राप्त हो।

दी डकन हेराल्ड (बगलोर २१।१) ने लिखा है कि पचायतों पर हुई पहली सेमिनार से लेकर अब तक पचायतों को कोई स्पष्ट निर्देश नहीं दिया गया। माना कि मुक्त विचार विमर्श हेतु अवसर दिये जाने की दृष्टि से सेमिनार का अत्यधिक महत्व है। पर सेमिनार ने पचायत राज्य को दायित्व प्रदान करने में बाधाओं पर अवश्य प्रकाश डाला है पर उसके दूसरे (अन्दरूनी) पक्ष को तो अनुभव तक नहीं किया है।

दी इकोनोमिक टाइम्स (बम्बई २८।१) ने श्री जयप्रकाश नारायण के इस विचार पर कि

पचायत राज सिर्फ नारा बनकर रह गया है टिप्पणी करते हुए लिखा है कि कई क्षेत्रो मे पचायतो ने सफलता भी प्राप्त की है। स विधान में पचायत राज पर अनुच्छेद जोडने पर बल देने की बजाय, अपनी आवश्यकताओ के प्रति गावो को सजग करके ग्राम सभा को अधिक समर्थ बनाया जाना पत्र की दृष्टि मे अधिक महत्वपूर्ण है।

दी हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड (कलकत्ता २५।११) ने अपना को बहार मे पचायत राज तक ही सीमित रखते हुए कहा है कि पचायत समिति और जिला परिषद् के बिना पचायत राज योजना अपूर्ण है। गावो म बढी गन्दी राजनीतिक का जिक्र करते हुए और उसे दुर्भाग्यपूर्ण बताते हुए पत्र ने लिखा है कि पचायत राज की सफलता के लिए अधिकारियो को पूर्ण सावधानी बरतनी चाहिए।

नव भारत टाइम्स (हिन्दी, दिल्ली) का विचार है कि जातीयता और स्वार्थपरता के दावा से पचायतो को बचाना अनिवार्य है। ग्राम विकास कार्यों म लगे अधिकारिओ को पचायतो के साथ पूर्ण सहयोग स अपना काय करना चाहिए।

दी सर्चलाइट (पटना २८।११) की शिकायत है कि बिहार मे पचायत राज नकाओ पर खडा है। सरकार द्वारा पचायत चुनावो का स्थगन आदि इस बात के सबूत हैं और यह भी दुर्भाग्यपूर्ण है कि पचायत राज की एसी ही शकाओ को अधिक बढाया जा रहा है।

हिन्दुस्तान (हिन्दी, दिल्ली) उदयपुर सेमिनार म श्री ढेबर का कथन था कि प० जवाहरलाल नेहरू के उत्तराधिकार का सम्भालन के लिए पचायतो क हजारों नेता समर्थ हो जाएगे, पर इस पत्र का विचार है कि यह तभी सम्भव होगा जब सत्ता का पूर्ण विकेन्द्रीयकरण कर दिया जाय और पचायतो को वास्तव म प्रशासनिक काय सौंप दिए जाए पर नौकरशाही के रहते ऐसा होना असम्भव है।

उधर सहकारी और सामुदायिक विकास के केन्द्रीय मन्त्रालय द्वारा पचायत राज पर गवेषणा परिषद' की नियुक्ति के रूप मे सरकार की प्रतिक्रिया सामने आई। ६ जुलाई ६४ को दिल्ली मे हुई अपनी मीटिंग म इस परिषद ने उदयपुर समिनार की उन सिफारिशो पर विचार किया जिनम पचायत को स्वशासन की पूर्ण इकाई के रूप म उसके कार्यों, आर्थिक साधनो आदि की चर्चा है। पचायत क कार्यों और अधिकारों, साथ ही यदि उसकी एकता और सामर्थ्य क लिए जरूरी हो तो सविधान म सशोधन, परिवर्तन के हेतु भी इस दिशा मे पूर्ण अध्ययन करने के लिए परिषद न निम्नाकित सदस्यो की एक समिति का गठन किया —

१ श्री बलवन्तराय जी० मेहता	अध्यक्ष
२ ,, श्रीमन्नारायण	सदस्य
३ ,, के० सन्थानम्	,,
४ ,, हरिश्चन्द्र भार्गव	,,
५ ,, अटल बिहारी वाजपेयी	,,
६ ,, राजेश्वर पाटिल	,,
७ ,, एम० आई० घोरपडे	,,
८ डा० के० एन० सोसवा	,,

९ श्री के० राजाराम — सदस्य
१० „ एन० शिवरामन
११ एम० वाई० गोडबोले — सचिव (संयोजक)

उदयपुर सेमिनार की सिफारिशों के सन्दर्भ में इस समिति ने जो अन्तरिम रिपोर्ट दी, वह सार रूप में यों थी —

१ हम उदयपुर सेमिनार और गवेषणा परिषद की इस राय से सहमत हैं कि पंचायत राज की ग्राम विकास क्षेत्र और जिलास्तर पर त्रिवृत्तात्मक संस्थायें सरकार की शाखा नहीं वरन् अपके वास्तविक रूप में स्वशासन की पूर्ण इकाई हों। हम महसूस करते हैं कि संविधान के संशोधन में फंसने की बजाय इसी धारणा को क्रियान्वित करना श्रेष्ठ है।

२ संविधान की धारा ४० है —
"राज्य ग्राम पंचायतों के गठन हेतु ऐसे कदम उठायेंगे और उन्हें वे सब अधिकार और शक्तियाँ सौंपेंगे जिनकी उन्हें स्वशासन की इकाई के रूप में कार्य करते वक्त आवश्यकता पड़ेगी।
इसी धारा में पंचायत समिति और जिला परिषद् को सम्मिलित करते हुए संशोधन करने का प्रस्ताव परिषद के समक्ष आया था।

३ हालांकि इस धारा में ग्राम पंचायतों की ही चर्चा है पर हमारी दृष्टि में इसमें त्रिवृत्तात्मक पंचायत राज की उच्च संस्थायें भी सम्मिलित हैं। वास्तव में यही व्याख्या केन्द्रीय सरकार ने अपनी रिपोर्टों और उद्देश्यों में तथा राज्यों की विधान सभाओं ने भी व्यक्त की है।

४ तो भी क्योंकि कई राज्यों में इस त्रिस्तर की दो संस्थाएं ही कार्यरत हैं और पूरे देश में उन्हें एक ही स्वरूप देना भी है इस दृष्टि से हम जिला परिषद और पंचायत समिति के साथ ग्राम पंचायत की परम्परागत व्याख्या करने की सिफारिश करते हैं।

५ हम आश्वस्त हैं कि इस परम्परा के बाद संविधान में संशोधन जो कि सदैव ही एक कठिन और विरोधजनक कार्य होता है करने की जरूरत नहीं रहेगी।

६ हम उदयपुर सेमिनार के इस मत से सहमत हैं कि संतोषप्रद एवं प्रभावशाली ढंग से काम करने देने के लिए पंचायत राज के तीनों स्तरों को पूर्ण अधिकार और शक्ति दी जानी चाहिये। इसका सीधा सा मतलब है कि ग्रामस्तर पर पूर्ण संतोषप्रद और प्रभावशाली ढंग से जो कार्य वे पंचायतें कर सकती हैं वे सभी कार्य इन्हें सौंप दिए जाने चाहिये। जो कार्य पंचायतें न कर सकें वे पंचायत समिति को और जो समिति न कर सके वे जिला परिषदों को सौंपे जाने चाहिये।

७ पंचायत राज की संस्थाओं के कार्य सुनिश्चित सूचीबद्ध एवं स्पष्ट रूपेण विभाजित हों ऐसा होना अनिवार्य एवं अपेक्षित है। तदर्थ पांच विस्तृत सूचियां संलग्न हैं —

१ पंचायत (अलग सूची)
२ पंचायत समिति (अलग सूची)

३ जिला परिषद (अनन्य सूची)
४ पचायत और पचायत समिति (सम्मिलित सूची)
५ पचायत समिति और जिला परिषद (सम्मिलित सूची)

किसी भी सम्मिलित दायित्व पर यदि निचली सस्था का भिन्न निर्णय हो तो उच्च सस्था का निर्णय लागू होगा। इसी स एसे कार्यों की सूची का पूर्णत सुस्पष्ट होना जरूरी है।

श्री नगर म जुलाई ६५ मे राज्यो के सामुदायिक विकास और पचायत राज के मन्त्रियो के वार्षिक अधिवेशन म गवषणा परिषद की सिफारिश पर विचार किया गया और निम्न लिखित निर्णय लिए गए –

गवेषणा परिषद की इस सिफारिश पर कि सविधान की धारा ४० म व्यक्त ग्राम पचायत के साथ पचायत समिति और जिला परिषद को परम्परागत व्याख्या द्वारा सयुक्त किया जाय, इसकी विधि सम्मत क्रियान्विति पर और गौर कर लिया जाय। यदि इसम कोई कानूनी अड़चन न हो तो अमल के लिए इस सिफारिश को राज्यो को प्रेषित कर दिया जाय।

११ और १२ अगस्त ६६ को सामुदायिक विकास और पचायत राज के दिल्ली म हुए वार्षिक अधिवेशन मे अजेण्डा और नोट्स में कहा गया है —

विधि मत्रालय से राय मागी गई। मत्रालय की विधि-सम्मत राय मे सविधान की धारा ४० मे प्रयुक्त शब्द 'ग्राम पचायत मे पचायत समिति और जिला परिषद संयुक्त हैं। राज्यो को इस बारे मे सूचित कर दिया गया है।'

अखिल भारतीय पचायत परिषद ने अपने चतुर्थ अधिवेशन म इसी कारण विचार करने बाद निम्नलिखित प्रस्ताव पारित हुआ—

"अखिल भारतीय पचायत परिषद अपने चतुर्थ अधिवेशन म सन् १९६१ मे जयपुर में आयोजित अधिवेशन मे स्वीकृत उन्हीं मागो को दोहराती है जिनमे पचायत राज सस्थाओ को अपने स्तर पर शासन की पूर्ण इकाई के रूप म कार्य करने देने की दृष्टि से शक्ति, सम्बल और अधिकार दिए जाने को कहा है। परिषद माग करती है कि आवश्यक परिवर्तन लाने हेतु सविधान मे सशोधन के लिए अति शीघ्र कार्यवाही की जाए। जिसस इन सस्थाओ को अपना स्थान ठीक उसी प्रकार प्राप्त हो जसे केन्द्र व राज्यो को है। फिर अब तो सरकार को ग्राम समिति जिला राज्य व केन्द्रीय स्तर पर पचकुलात्मक सस्था के रूप म कार्य करना है। इसी सदर्भ म यह परिषद पूर्ण आस्था के साथ उदयपुर सेमिनार की सिफारिशों को एक मत स स्वीकार करती है।"

"यह परिषद् बलवन्तराय मेहता समिति का स्वागत करती है। समिति न सविधान की वर्तमान धारा म ऐसे सशोधन की सिफारिश की है जिसस कि गांव, समिति और जिला स्तर पर पचायत राज सस्थायें वास्तविक एव प्रभावशाली रूप से कार्य कर सकें।

"पचायत राज पर काय करने के लिए गवेषणा समिति का तुरत गठन करने हेतु केन्द्रीय

सामुदायिक विकास मन्त्रालय को भी यह परिषद धन्यवाद देती है और आशा करती है कि उदयपुर समिनार की सिफारिशों की क्रियान्विति हेतु भी ऐसी त्वरित गति से कदम उठाएगी।

सन् १९६५ में, अखिल भारतीय पंचायत परिषद् ने दिल्ली में अखिल भारतीय स्तर पर अध्ययन कम्प' का आयोजन किया। कम्प में उदयपुर समिनार के निर्णयों से श्री जयप्रकाशनारायण ने एक कदम और आगे सुझाया। उन्होंने पंचायती राज की सच्ची धारणा के लिए समुदाय और उसकी अविच्छेदनीय मूल भूत महत्ता को नई मान्यता प्रदान की। उनके विचारों का सार यों है —

'यदि पंचायत राज की धारणा को बल प्रदान करना है तो इसे उदार दृष्टि से देखना होगा। पंचायत राज को अस्तित्व प्रदान करने का अर्थ समुदाय के रूप में नई समाज व्यवस्था का सृजन करना है। विश्व में आज दो प्रकार के समाज हैं एक पश्चिम का बहुल समाज और दूसरा साम्यवादी समाज। बहुल समाज में कोई समुदाय और वयक्तिकता नहीं तो साम्यवादी समाज में बद्ध वयक्तिकता है। पर सच्चे लोकतन्त्र में समुदाय में वयक्तिकता सहयोग की भावना एक दूसरे का ध्यान की भावना और समुदाय के प्रति उत्तरदायित्व की भावना होनी है। समुदाय व सामुदायिक जीवन पद्धति से उपस्थित दायित्व की भावना आती है। अतः पंचायत राज का महान ध्येय समाज के अंग के रूप में समुदाय की स्थापना करना हो।

पंचायत राज की धारणा में निहित इस विस्तृत समाज सिद्धान्त पर उदयपुर समिनार में या केन्द्रीय सरकार ने विचार नहीं किया था। अब समय आ गया है कि हम आशिक धारणाओं से मुक्त रह दूर तक सोचें और नए प्रकार की समाज रचना के साथ इसे सम्बद्ध करें।

ग्राम समाज का वर्तमान सामाजिक और आर्थिक ढांचा सामुदाय की इस भावना के विकास मे बाधक है। उधर पंचायत राज सिर्फ राजनैतिक निर्णय लेता है। पर अब यह माना जाने लगा है कि आर्थिक विकेन्द्रीकरण के बिना सत्ता का विकेन्द्रीकरण आगे नहीं चल सकेगा। गांवों को औद्योगिक और आर्थिक विकास प्रदान करना होगा। आज अर्थ तन्त्र कुछ ही लोगों के हाथों में है। इसमें औद्योगिकरण उनके द्वारा हुआ तो सत्ता का विकेन्द्रीकरण प्राण हीन खोखला शरीर भर रह जाएगा।

यदि समुदाय के विभिन्न हितों और अपेक्षाओं को निभायें तो पंचायत राज्य संस्थायें सामुदायिक समाज का निर्माण कर सकती हैं। इन संस्थाओं को किसानों मजदूरों और कारीगरों के हितों का संरक्षण करना चाहिए। इस दिशा में हमें अधिकारियों रहित स्वयं सेवी संगठनों को प्रोत्साहित करना चाहिए; साथ ही समुदाय के प्रति सच्ची लगन से कार्य भी करते रहना चाहिए।

परिशिष्ट

पंचायत राज संस्थाओं के कार्य

१—पंचायतों के कार्य (प्रयुक्त)

(अ) सफाई और स्वास्थ्य

(१) कई गांवों के सम्मिलित दायित्वों वालों को छोड़कर पशुओं और घरेलू कार्यों के लिए जल-व्यवस्था हेतु सार्वजनिक कुओं, पोखरों और तालाबों (सिंचाई के तालाबों के अतिरिक्त) का निर्माण व मरम्मत कराना और उनकी देखभाल रखना।

(२) सार्वजनिक सड़कों, नालियों, बंधों, तालाबों, कुओं (सिंचाई के कुओं और तालाबों के अतिरिक्त) स्थानों और कार्यों की सफाई के साथ-साथ घातक कार्यों या बोझों की थमी रोकथाम और नाली आदि की व्यवस्था करना।

(३) सार्वजनिक शौचालयों का निर्माण व उनकी मरम्मत।

(४) लावारिस मुर्दों, हड्डियों तथा पशुओं का विक्रय करना।

(५) नियमित इकट्ठा करते हुए गांव के कूड़े करकट और खाद को हटाना व विक्रय करना।

(६) श्मशानों व कब्रस्तानों को व्यवस्थित व उनकी सम्भाल रखना।

(७) मकानों व दुकानों को व्यवस्थित रखना।

(८) खाद्य व मनोरंजन कक्षा में प्रदर्शनों को व्यवस्थित रखना।

(९) आवारा कुत्तों व चूहों का नाश करना।

(ब) सार्वजनिक कार्य (संयुक्त दायित्व)

(१) गांव की सीमा में पड़ने वाली, पर दूसरी किसी संस्था को न सौंपी गई गांव की सड़कों खोदने

वाली सड़कों, नालियों, बांधों और भूमिगत नालियों का निर्माण व मरम्मत करवाना तथा सम्भाल रखना।

(२) सार्वजनिक रास्तों, स्थानों व पंचायत के अहाता में पड़ने वाली बाधाओं, छज्जों और छावणों को हटाना।

(३) चरागाह, पंचायत के नियन्त्रण में दिए गए या स्थानान्तरित सरकारी भवनों की साज सम्भाल व व्यवस्था रखना।

(४) रास्तों की रोशनियां।

(५) जिला परिषद व पंचायत समिति द्वारा प्रदत्त तथा स्थानीय महत्व के पशु मेलों सहित अन्य मेलों का प्रबन्ध करना।

(६) सार्वजनिक स्थानों के सूखे पेड़ों की बिक्री, पेड़ों की कटाई तथा वन संरक्षण का कार्य करना।

(७) नित्य के बाजारों की व्यवस्था व प्रबन्ध।

(८) सार्वजनिक कार्यों, विशेषकर अपने कर्मचारियों के लिए भवनों का निर्माण व उनकी साज सम्भाल।

(स) कृषि

(१) क्षेत्र में लागू भू संरक्षण कार्यों की क्रियान्विति में सहयोग।

(२) खाद के गड्ढे खोदना।

(३) बाग वाटिका लगवाना।

(४) जो एक से अधिक गांवों की भागीदारी में न हो ऐसे, ग्राम वन, ग्राम-चरागाह तथा ग्राम नर्सरी का कार्य।

(५) मुर्गी तथा सूअर पालन।

द अन्य कार्य

(१) पंचायत क्षेत्र के विकास की योजना बनाना।

(२) ग्राम पुस्तकालय व वाचनालय।

( ) प्राकृतिक प्रकोपों से गाँव की रक्षा।

(४) नहाने धोने के घाट

(५) ग्राम सेवक दल।

(६) गाँव और फसलों की देखभाल।

(७) पशु पालन।

(८) अल्प बचत योजना तथा बीमा के एजण्ट के रूप में व्यापार करना।

(९) चाय या काफी गृहों के, भोजनालयों व दूकानों को लाइसेंस देना।

पंचायत समिति के कार्य (प्रयुक्त)

१ सामुदायिक विकास कार्य

पंचायतों, सहकारी संघटनों तथा स्वेच्छानिर्मित अन्य निकायों तथा जनता के सहयोग से सामुदायिक विकास के अन्तर्गत आने वाले सभी कार्यक्रमों का संपादन।

२ कृषि और पशुपालन

(१) खण्डों में कृषि सुधार की योजना का पालन।
(२) कृषि के सुधरे हुए तरीकों और प्रणालियों का प्रचार तथा आदर्श कृषि फार्मों की स्थापना।
(३) पौधों की रक्षा के तरीकों का प्रचार और उनकी रक्षा में सहायता देना।
(४) कुओं के पुनरुद्धार और उन्हें गहरा उतारना तालाबों की मरम्मत और खुदाई तथा सरकारी लघु सिंचाई साधना (२५० एकड़ तक जमीन की सिंचाई जिनसे की जा सके) तथा आपूरक कुल्याओं या नहरों को बनाये रखना।
(५) प्रदर्शन के स्थानों की व्यवस्था और फार्म प्रबन्ध के उत्तम तरीके निकालना।
(६) पशु चिकित्सा सम्बन्धी औषध वितरण केन्द्रों को चलाना।

३ स्वास्थ्य और ग्रामीण स्वच्छता

(१) विद्यालय स्वास्थ्य सेवाएँ।
(२) टीका मातृ सेवा और शिशु-कल्याण।
(३) जिलास्तर की मंडियों को छोड़ मंडियों की स्थापना और उनका नियंत्रण।
(४) पशु मेला समेत ऐसे मेलों त्यौहारों का नियन्त्रण जो जिला परिषद् द्वारा इन्हें सौंपे जाय।

४ संचार व्यवस्था

(१) ग्रामान्तरों को जाने वाली सड़कों का निर्माण और उन्हें बनाये रखना।
(२) सम्पर्ककारी सड़कों के निर्माण और बनाये रखने में पंचायतों को सहायता देना।
(३) एम सार्वजनिक घाटों आदि का प्रबन्ध जो दूसरे किन्हीं निकायों या वर्गों को न सौंपे गये हों।

५ सामाजिक प्रशिक्षण सहित शिक्षा

(१) प्राक् प्राथमिक शिक्षण
(२) प्राथमिक शिक्षा
(३) प्रौढ़ शिक्षण समेत सामाजिक शिक्षण।

फ लघु सिंचाई

छोट सिचाई कार्यों का निर्माण पुनरुद्धार और उ हें बनाये रखना ,

ज मत्स्य पालन

ह ग्रामीण जल प्रदाय

एक पचायत से अधिक की आवश्यकता पूर्ति करने वाले सावजनिक कुओ तालावो तथा जल प्रदाय कार्यों का निर्माण और मरम्मत।

जिला परिषदो के काय (अयुक्त)

(क) विकास कार्य

गावा के लिए योजना बनाना और उनम समन्वय स्थापित करना।

(ख) कृषि

माध्यमिक और दूसरी सीमाओ म ही कृषि सस्थाना को आर्थिक मदद देना उनकी देख भाल, साज सम्भाल और प्रबन्ध करना किन्तु निम्नांकित विषयो के अतिरिक्त –

१ पाठ्यक्रम का निर्धारण करना।
२ पाठ्य पुस्तकों का चयन करना।
३ वार्षिक परीक्षाओ का सचालन करना।

(ग) पशु-पालन

(१) पशु-अस्पतालो की स्थापना और व्यवस्था।
(२) महामारियों पर नियन्त्रण करना।

(घ) भवन तथा आवागमन

(१) जिल की सड़का व पुलो आदि का निर्माण, मरम्मत और व्यवस्था करना।
(२) जिला-परिषद की आवश्यकतानुसार प्रशासकीय भवनो तथा अन्य भवनो का निर्माण।

(च) लघु सिंचाई

अन्तर्जिला योजनाओ के अतिरिक्त सिंचाई के ऐसे साधनो का निर्माण मरम्मत तथा प्रबन्ध करना जो २५० एकड से अधिक भूमि की सिंचाई करते हो।

(छ) कुटीर तथा अन्य उद्योग

(१) कुटीर व ग्रामोद्योगो द्वारा निर्मित वस्तुओं की बिक्री के लिए बाजारो की व्यवस्था करना।

(२) ग्राम-उद्योग क्षेत्र कायम करना।
(३) प्रशिक्षण-उत्पादन केन्द्रों का संचालन करना।

(ज) शिक्षा

(१) निर्धारित यांत्रिक व दूसरी प्रशासनिक सीमाओं में ही माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना, व्यवस्था, प्रबंध और निरीक्षण करना। जिनमें निम्नांकित कार्य सम्मिलित न किए जाए।

[क] पाठ्यक्रम का निर्धारण
[ख] पाठ्य पुस्तकों का निर्धारण,
[ग] अनुदान की दर व शर्तों की व्यवस्था
[घ] माध्यमिक को उच्चतर माध्यमिक विद्यालय बनाये जाने की स्वीकृति।
[च] शुल्क दर।
[छ] मान्यता के लिए साधारण शर्तों का निर्धारण।
[ज] प्राथमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों में छात्रवृत्ति हेतु परीक्षा संचालन।
[झ] राज्य सरकार द्वारा 'ग्राण्ट इन एड कोड' के तहत आरक्षित अथवा शिक्षा संचालक को प्रदत्त अधिकार के कार्य।

(२) माध्यमिक शिक्षा में विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्ति व भत्ते (Stipends) की स्वीकृति।
(३) तकनीकी या विशिष्ट विद्यालय

(झ) अन्य कार्य—

पशु मेला सहित जिले के मेलों व त्योहारों का संचालन व व्यवस्था।

पंचायत व पंचायत समिति के संयुक्त दायित्व वाले कार्य

(क) स्वास्थ्य और सफाई—

(१) छूत की बिमारियों की रोकथाम व इलाज
(२) मांस, मछली आदि शीघ्र सड़ने वाले खाद्यों का आरक्षण व नियमन
(३) कसाई घरों का संचालन और व्यवस्था
(४) चमड़े की पकाई रंगाई आदि की व्यवस्था
(५) अवमानिक एवं घातक कार्यों का कमी के लिए रोकथाम व जांच पड़ताल
(६) विद्यार्थियों के लिए दुपहर में भोजन की व्यवस्था

(ख) सार्वजनिक काम

(१) धर्मशाला विश्रामगृह तथा ऐसे ही अन्य संस्थानों का निर्माण व प्रबंध।

(२) बिक्री केन्द्रो, दूकानो के लिये भवनो का निर्माण व सभाल ।
(३) सार्वजनिक उद्यान तथा बालोद्यानो की सरचना और सभाल ।
(४) गाव की जमीन का विस्तार व विकास ।

(ग) कृषि और पशुपालन

(१) कृषि कार्यों की ओर विशेष ध्यान देकर गाव वासियो के आर्थिक स्तर का उत्थान और विकास
(२) फल व सब्जी उत्पादन के लिए प्रोत्साहन ।
(३) कम्पोस्ट और हरे खाद म आत्म निर्भरता की प्राप्ति ।
(४) सिचाई के लिए समय पर तथा समान रूप स पानी का वितरण ।
(५) कृषि व सिचाई साधनो के विकास के लिए ऋण तथा सुविधायें देना ।
(६) पशु धन की सुरक्षा उनकी नस्ल म सुधार तथा वृद्धि के कार्य ।
(७) चरागाहो का विकास ।

(घ) वन

वन रोपण तथा ग्राम वन क लिए विकास काय ।

(च) शिक्षा

पचायत समिति के नियन्त्रण म विद्यालयो के लिए भवन साज सामान खेल का मदान तथा बाग आदि के लिए धन जुटाना ।

(छ) अन्य कार्य

(१) ग्रामोद्योगो का विकास ।
(२) सहकारिता ।
(३) सार्वजनिक व व्यक्तिगत सम्पत्ति तथा ग्राम-भूमि क्षेत्र के आकडा तथा सर्वे रेकार्ड की सुरक्षा ।
(४) आग बाढ संक्रामक रोग अथवा अन्य दुर्भिक्षो द्वारा विनाश की सकटकालीन घडी के लिये सुरक्षित धन ।

पचायत समिति और जिला परिषद के सयुक्त दायित्वपूर्ण कार्य

(क) पशु-पालन व कृषि

(१) सूचीबद्ध उन्नत बीज उठाकर तथा वितरण करके उत्पादन बढाने ।

(२) भूमिगत पानी का उपयोग,

(३) उन्नत कृषि साधना का प्रयोग,

(४) बीज तथा आदर्श कृषि-क्षेत्र

(५) गोदाम और रक्षा गृह

(६) फसल की सुरक्षा

(७) फलों व सब्जियों का उत्पादन

(८) साड की नस्ल म सुधार,

(९) पशु महामारियों का रोकथाम,

(१०) अच्छी नस्ल की गायों मुर्गियो, सूअरो व भेडो का वितरण

(११) दुग्धशाला

(ख) सार्वजनिक स्वास्थ्य व सफाई

(१) आयुर्वेदिक व यूनानी दवाखानों प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रों व विशिष्ट बीमारी होने पर चिकित्सा कम्पों का सचालन

(२) गाव की नई बस्ती की सरचना

(३) सार्वजनिक तथा धार्मिक सम्पत्ति और गाव की जमीन का सर्वे सचालन।

(ग) सार्वजनिक कार्य—

(१) यात्रियो के लिए मकान व विश्राम गृह

(२) केन्द्रीय या राज्य सरकार द्वारा अपने हाथ में लिए गए ऐतिहासिक स्थलो तथा अभिलेखों की सुरक्षा

(घ) शिक्षा

माध्यमिक विद्यालयो के लिए भवन, साज सामान खेल के मदान तथा बाग आदि के लिए धन का प्रबन्ध।

(च) सहकारिता

सहकारी कृषि सहित अन्य कार्यों म सहकारिता।

(छ) कुटीर एव लघु उद्योग

(१) कुटीर एव लघु उद्योगो की स्थापना-सचालन।

(२) बिक्री केन्द्रों व एम्पोरियमों का संचालन।

(ज) अनुसूचित तथा पिछड़ी जातियों के लिए कल्याण कार्य

(१) अनुसूचित तथा अन्य पिछड़ी जातियों के हित में सांस्कृतिक, सामाजिक और शैक्षणिक उत्थान-कार्यों का संचालन।

(२) ऐसे वर्गों व जातियों का शोषण तथा अन्याय की रोकथाम तथा उन्हें मदद।

(३) कमजोर तबकों के लिए होस्टल का संचालन और दूसरे कल्याण कार्य।

(४) रिहायशी तथा आश्रम विद्यालयों का संचालन।

(५) पिछड़े क्षेत्रों में आवागमन के लिए मार्गों आदि का विकास।

(झ) समाज का कल्याण कार्य

(१) बीमार व अपंगों की मदद।

(२) परिवार नियोजन।

(३) पुस्तकालय, वाचनालय, सूचना केन्द्र तथा अन्य सांस्कृतिक कार्य।

(४) युवक समिति, महिला समिति और कृषक समिति, सामाजिक व सांस्कृतिक कार्यक्रम तथा बच्चों के सिलाई केन्द्र जैसे ही अन्य कार्यों का संचालन और प्रोत्साहन।

(५) महिला उत्थान व बाल विकास के कार्यक्रमों का क्रियान्वयन, उनके लिए कल्याण केन्द्रों का संचालन जैसे कि शिक्षण केन्द्र, उद्योग केन्द्र, सिलाई केन्द्र आदि।

(६) गांव के लिए गृह योजना।

(७) कारीगरों को प्रशिक्षण के लिए विद्यालय या कक्षा का संचालन।



पंचायती राज के कुछ पहलुओं पर अखिल भारतीय पंचायत परिषद् के विचारों का संक्षिप्त विवरण

ग्राम समुदाय

अखिल भारतीय पंचायत परिषद इस बात को समझती है कि पंचायती राज की योजना जो आजकल चलाई जा रही है केवल पहला कदम है। यदि इसके द्वारा लोकतन्त्र एव विकास के कार्यक्रम प्रभावशाली ढग से आगे बढ़ाना है तो अभी बहुत कुछ करना शेष है। वर्तमान पंचायती राज एक कमजोर ढाचा है जिसके पास न सत्ता है और न साधन। इसलिए सबसे पहला कार्य गाव के प्राथमिक समुदायो को पुनर्जीवित व सशक्त बनाना है। अखिल भारतीय पंचायत परिषद अनुभव करती है कि आज गाव म आपसी विरोध अधिक है। हम इस गाव के हैं, हम सब को आपस मे गाव के लाभो को बाट कर उपभोग करना चाहिए, ऐसी भावनाये जो समुदाय को सायक बनाती ह आज गावों से लुप्त होती जा रही है।[*]

---

१ अखिल भारतीय पंचायत परिषद एक गैर सरकारी, निर्दलीय पंचायती राज की सस्थाओ का अखिल भारतीय स्वच्छा सेवी सस्था है जो पंचायती राज के स्वरूप के प्रसार करने में और पंचायती राज की सस्थाओं के अधिकार क्षेत्र एव साधनो को दृढ बनान म लगी हुई है।

२ यह लघु पत्र अखिल भारतीय पंचायत परिषद का कोई औपचारिक लेख पत्र नही है लेकिन इसके अन्तगत वे मौलिक विचार समाविष्ट हैं जो अखिल भारतीय पंचायत परिषद द्वारा आयोजित विभिन्न विचार गोष्ठियो व सम्मेलनो म प्रगट व स्वीकार किए गये हैं।

* आज का गाँव एक छिन्न भिन्न परिवार जैसा है। उसमें जाति व वर्ग के मतभेद पाये जाते हैं और भी दलबन्दियां हैं। गाँव म सामूहिक इच्छा का अभाव पाया जाता है। दूसरी ओर आज गांव के सामने जो महत्वपूर्ण काय हैं उन्हें एकता और सामूहिक प्रयत्न के बिना पूरा नही किया जा सकता है। उचित सामुदायिक विकास के पूर्व सामूहिक भावना पैदा करनी चाहिये।

—श्री जयप्रकाश नारायण, सोशलिज्म सर्वोदय एण्ड डेमोक्रेसी पृष्ठ २३२

"आप आज गांव को हो लीजिए जैसा कि वह आज है और वहा पचायती राज लागू कर दीजिए तो मेरी समझ में वह सफल नही हो पायगा। गाव में फूट के तत्व विद्यमान है। ग्राम पचायतों को प्रभावपूर्ण कार्य करने के लिए उन तत्वो को हटाना पडेगा।"

श्री जयप्रकाश नारायण, सेमिनार आन फण्डामेण्टल प्रोब्लम्स आफ पचायती राज पृष्ठ ३६

अखिल भारतीय पचायत परिषद के इस सम्मेलन की सम्मति म वास्तविक पचायती राज के विकास के पूर्व हरेक गाव म सरकारी व एकीकृत समाज की स्थापना अत्यन्त आवश्यक शर्त है। प्रस्ताव ७ जयपुर म होने वाले अखिल भारतीय पचायत परिषद के तृतीय अधिवेशन।

अखिल भारतीय पचायत परिषद के अध्यक्ष श्री जयप्रकाशनारायण ने लोक स्वराज्य में लिखा है कि पचायती राज को प्रभावपूर्ण होने के लिए कुछ मुख्य शर्तें हैं।[४]

इसके अतिरिक्त अखिल भारतीय पचायत परिषद के चौथे अधिवेशन के अध्यक्ष पद से बोलते हुए श्री जयप्रकाशनारायण ने स्पष्ट शब्दो मे कहा कि वे पचायती राज के सामाजिक व राजनीतिक दर्शन को महात्मा गाधी के सामाजिक व राजनीतिक दर्शन के सदृश मानते हैं जिसम एक ओर तो समुदाय पर जोर दिया गया है और दूसरी ओर कम से कम शासन पर। पचायती राज पर्सपेक्टिव एण्ड प्रोग्राम पृष्ठ २६।

अखिल भारतीय पचायत परिषद का विश्वास है कि समुदाय का पुनरुजीवन प्रथम महत्व की बात है, क्योंकि गांव को विकास कार्यक्रम की इकाईया मानना चाहिए।

पचायती राज नीचे से प्राथमिक समुदाय से आरम्भ होता है। प्राथमिक समुदाय साथ-साथ रहने वाले परिवारो के समूह को कहते है जिनकी आपस मे साझेदारी होती है जो साथ-साथ प्रयत्न करते है, मिलजुल कर अपने काम निबटाते हैं और जो काम स्वय नही कर सकते हैं, उनमें दूसरे समुदायो का सहयोग लेते है। इस प्रकार समुदायो के एक बडे सघ एव पचायती राज की सस्थाओ की रचना करते हैं। श्री जयप्रकाशनारायण सेमिनार आन फण्डामेण्टल प्रोबलम्स आफ पचायती राज पृष्ठ ३७-३८।

---

४ सक्षिप्त में शर्तें इस प्रकार हैं —

पहले लोक शिक्षा जैसी कि आमतौर पर समझी जाती है इस प्रयोग की सफलता के लिये आवश्यक शर्त हैं। जो निष्पक्ष और निःस्वार्थ सस्थायें ग्राम विकास के काय में लगी हुई है वे इस शिक्षा को भली भांति प्रसार कर सकती है। यह भी विचार करना चाहिये कि क्या निर्दली और विशुद्ध मतदाताओं की एक प्रशिक्षणीय सस्था नहीं बनाई जा सकती जिसका नाम अखिल भारतीय मतदाता सघ हो सकता है ताकि मतदाताओ को शिक्षित बनाया जाय।

दूसरे इस बात पर जोर देना उचित होगा कि पचायती राज की सफलता इस बात पर निर्भर होगी कि किस सीमा तक राजनीतिक दल उसम हस्तक्षेप करने से दूर रहते हैं और उसे अपने हाथ की कठपुतली नहीं बनाते हैं या सत्ता प्राप्त करने के लिये उसका प्रयोग नहीं करते हैं। इन

अखिल भारतीय पचायत परिषद का मत है कि भारत को जनसभाओ के राजनीतिक स्वरूप को नही अपनाना चाहिये क्योकि वे बालू के ढेर के सामान होते है। उसके कणो म कोई आगिक सम्बन्ध नहीं होता है। भारत मे ससदीय लोकतन्त्र का अनुभव जिसम व्यक्ति कुछ वर्षो म एक बार विधान मण्डलो के लिये प्रतिनिधि चुनते हे-अधिक उत्साहवर्धक नही रहा है। इस देश को अन्य क्षेत्रो की भांति राजनीतिक पुर्ननिमाण के क्षेत्र म भी अपना मार्ग खोजना पडेगा। अखिल भारतीय पचायत परिषद सरकार की पाच स्तरीय व्यवस्था की स्थापना के लिये प्रयत्न कर रही है। उसमे ग्राम पचायते, पचायत समितिया, जिला परिषदे राज्य सरकारें व केन्द्रीय सरकार होगी। इन सबमे आगिक सम्बन्ध होगा।

इस समय सविधान केवल दो प्रादेशिक सरकारी सगठनो को स्वीकार करता है-केन्द्रीय सरकार व राज्य सरकारे। ग्राम पचायतो पचायत समितियो, और जिला परिषदो को भी सविधान म उचित स्थान मिलना चाहिए। सविधान म उनके अधिकारो और उत्तरदायित्वो का स्पष्ट वर्णन होना चाहिए।

श्री जयप्रकाश नारायण, पचायत राज पर्स पैक्टिव एण्ड प्रोग्राम पृष्ठ-४०

सस्थाओ को शक्ति और क्रियाशीलता के लिए लोकतन्त्र में जनता को भागीदार बनाना चाहिये। इसलिये इन सस्थाओ को जनता के प्रत्यक्ष नियन्त्रण म छोड देना चाहिये। दलो को हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नही।

तीसरे, सत्ता वास्तविक अर्थ म दी जानी चाहिये दिखावा नही होना चाहिये। कोई भी व्यक्ति जिम्मेदारी का निभाना तब तक नही सीख सकता है, जब तक कि उसे जिम्मेदारी सौंपी न जाये। यदि पचायती राज को सच्चे अर्थ म सत्ता सौंप दी जाय तो जिला मजिस्ट्रेट की आवश्यकता नही होगी या फिर वह राज्य सरकार के प्रतिनिधि के रूप म रहेगा जिस प्रकार राज्यो मे राज्यपाल केन्द्रीय सरकार के प्रतिनिधि के रूप म रहता है।

चौथे, यह अत्यन्त आवश्यक है कि प्रत्येक स्तर पर स्थानीय अधिकारियो का न्यूनतम साधन देना चाहिये। मेरा सुझाव है कि भूमिकर जो बहुत अधिक नही होता है, पचायत समिति और ग्राम पचायत को दे दिया जाना चाहिये। राज्य सरकार का यह अधिकार नही होना चाहिये कि भूमिकर म से कुछ अनुदान इन सस्थाओ को प्रदान करे। अन्य साधन स्रोत भी खोजकर इन सस्थाओ को दिये जाने चाहिये। इसका यह अर्थ नही कि विकास कार्यो के लिये पंचायती राज को राज्य या केन्द्रीय सरकार से और धन नही मिलना चाहिये।

पाचवे, जहां तक सम्भव हो शीघ्रातिशीघ्र पचायती राज को अमलिक अधिकारी वर्ग पर वास्तविक सत्ता का प्रयोग करने के योग्य बनाना चाहिये। अधिकारी वर्ग उन सस्थाओ के प्रति पूर्ण रूप मे उत्तरदायी हो। नियुक्तियो के सम्बन्ध म भी स्थानीय अधिकारियो की सलाह लेनी चाहिये।

जाये या पचायत समिति को केवल जिला परिषद का एक कार्यपालिका अंग बनाकर रक्खा जाये।

। श्री जयप्रकाश नारायण, सेमिनार ओन फण्डामेण्टल प्रोब्लम्स आफ पचायती राज—पृष्ठ-४२

ग्राम-सभा

अखिल भारतीय पचायत परिषद ग्राम सभा की शक्ति को बडा महत्व देती है। यह प्राथमिक समुदाय और मौलिक संस्था है। ग्राम सभा के योगदान पर जोर देते हुये श्री जयप्रकाश नारायणजी कहते हैं —

मुझे शका है कि अभी तक ग्राम सभा के योगदान को पूरी तौर पर नहीं समझा गया है या शायद हमारे मन में जनता की पहल करने की शक्ति के बारे मे काफी अटकाव है। मेरे विचार से यदि ग्राम सभा को शक्तिशाली नही बनाया जाना है तो पचायती राज अवास्तविक ही रहेगा और विकास कार्यक्रमो मे भी जनता का उत्साह व भागीदारी नही होगी। इसलिए मै आशा करता हू कि इस मन के अटकाव को दूर कर दिया जायेगा और सभा को उचित स्थान दिया जायेगा।

अखिल भारतीय पचायत परिषद् के चौथे अधिवेशन मे बोलते हुये स्वर्गीय श्री मेहताजी ने कहा —

ग्राम सभा के योगदान पर जितना जोर दिया जाये वह कम है। लोकतांत्रिक विकेन्द्री का पूर्ण महत्व तभी अनुभव किया जा सकेगा जब ग्राम सभा पूरी तौर पर सक्रिय व जिम्मेदार सस्था बन जाती हैं।

पचायती राज पर्सपक्टिव एण्ड प्रोग्राम—पृष्ठ-३१

इस बीच ग्राम सभा को बजट पर बहस करने का और पचायत की उन्नति की रिपोर्ट पर विचार करने का अवसर दिया जाना चाहिए, और वह जो सिफारिशे करे उस पर पचायत पूरा तौर पर विचार करे।

जब कि ग्राम सभा का अंतिम लक्ष्य यह होना चाहिए कि वह अपना वार्षिक बजट बनाये और स्वीकार करे। पचायते अपने बजट तैयार करती हैं। उन्हें सबसे पहले बजट को ग्राम सभाओ के सामने पेश करना चाहिए, जहा उन पर विचार किया जाए, यद्यपि अंतिम स्वीकृति का प्रश्न उन पर नही छोडा जा सकता है।

सेमिनार ओन फण्डामेण्टल प्रोब्लम्स आफ पचायती राज,—पृष्ठ-८४

पचायतो को ग्राम सभा मे पूर्ण विश्वास रखना चाहिये और कर, विकास व निर्माण सम्बन्धी कार्यक्रमो को उसके सामने उसके विचार जानने के लिए पेश किया जाना चाहिए। ग्राम सभा मे कार्य समितिया होनी चाहिए। पच उनके सयोजक हो, और ग्रामसभा के चुने हुये सदस्य उनके सदस्य हो। गाव का चौकीदार ग्रामसभा के अधीन हो।

सेमिनार ओन फण्डामेण्टल प्रोब्लम्स ऑफ पचायती राज पृष्ठ-८४

अखिल भारतीय पचायत परिषद का मत है कि भारत को जनसभाओं के राजनीतिक स्वरूप को नही अपनाना चाहिये क्योकि वे बालू के ढेर के सामान होते है। उसके कणो मे कोई आंगिक सम्बन्ध नही होता है। भारत मे ससदीय लोकतन्त्र का अनुभव जिसमे व्यक्ति कुछ वर्षो मे एक बार विधान मण्डलो के लिये प्रतिनिधि चुनते है-अधिक उत्साहवर्धक नही रहा है। इस देश को अन्य क्षेत्रो की भाति राजनीतिक पुनर्निमाण के क्षेत्र मे भी अपना मार्ग खोजना पड़ेगा। अखिल भारतीय पचायत परिषद सरकार की पाच स्तरीय व्यवस्था की स्थापना के लिये प्रयत्न कर रही है। उसमें ग्राम पचायते, पचायत समितियां, जिला परिषदे राज्य सरकारे व केन्द्रीय सरकार होगी। इन सबमे आंगिक सम्बन्ध होगा।

इस समय सविधान केवल दो प्रादेशिक सरकारी सगठनो को स्वीकार करता है-केन्द्रीय सरकार व राज्य सरकारे। ग्राम पचायतो, पचायत समितियो, और जिला परिषदो को भी सविधान मे उचित स्थान मिलना चाहिए। सविधान मे उनके अधिकारो और उत्तरदायित्वों का स्पष्ट वर्णन होना चाहिए।

श्री जयप्रकाश नारायण, पचायत राज पर्स पैक्टिव एण्ड प्रोग्राम पृष्ठ-४०

सस्थाओ की शक्ति और क्रियाशीलता के लिए लोकतन्त्र मे जनता को भागीदार बनाना चाहिये। इसलिये इन सस्थाओं को जनता के प्रत्यक्ष नियन्त्रण मे छोड़ देना चाहिये। दलो को हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नही।

तीसरे, सत्ता वास्तविक रूप मे दी जानी चाहिये, दिखावा नही होना चाहिये। कोई भी व्यक्ति जिम्मेदारी का निभाना तब तक नही सीख सकता है जब तक कि उसे जिम्मेदारी सौंपी न जाय। यदि पचायती राज को सच्चे अर्थ मे सत्ता सौंप दी जाय तो जिला मजिस्ट्रेट की आवश्यकता नही होगी या फिर वह राज्य सरकार के प्रतिनिधि के रूप मे रहेगा, जिस प्रकार राज्यो मे राज्यपाल केन्द्रीय सरकार के प्रतिनिधि के रूप मे रहता है।

चौथे, यह अत्यन्त आवश्यक है कि प्रत्येक स्तर पर स्थानीय अधिकारियों को न्यूनतम साधन देना चाहिये। मेरा सुझाव है कि भूमिकर जो बहुत अधिक नही होता है पचायत समिति और ग्राम पचायत को दे दिया जाना चाहिये। राज्य सरकार का यह अधिकार नही होना चाहिये कि भूमिकर मे से कुछ अनुदान इन सस्थाओ को प्रदान करे। अन्य साधन स्रोत भी खोजकर इन सस्थाओ को दिये जाने चाहिये। इसका यह अर्थ नही कि विकास कार्यों के लिय पंचायती राज को राज्य या केन्द्रीय सरकार से और धन नही मिलना चाहिये।

पांचवे, जहा तक सम्भव हो विकेन्द्रीकृत पचायती राज को सम्बद्ध अधिकारी वर्ग पर वास्तविक सत्ता का प्रयोग करने के योग्य बनाना चाहिये। अधिकारी वर्ग उन सस्थाओ के प्रति पूर्ण रूप से उत्तरदायी हो। नियुक्तियो के सम्बन्ध मे भी स्थानीय अधिकारियो की सलाह लेनी चाहिये।

अन्तिम विश्लेषण मे इस दृष्टि का यह अर्थ होता है कि प्रत्येक स्तर अप्रत्यक्ष चुनाव होने चाहिए। [४] इस बात को विस्तार पूर्वक बताते हुये श्री जयप्रकाश नारायण ने विभिन्न स्तरो पर चुनावो की एक प्रणाली के बारे मे सुभाव दिया है। इस दृष्टिकोण का समर्थन गाधीजी के कुछ लेखो द्वारा होता है।

भारत मे साथ लाख गाव है। उनमे प्रत्येक का सगठन नागरिको की इच्छानुसार होगा। वे सभी मत देगे। फिर साथ लाख मत बन जायेगे। दूसरे शब्दो मे प्रत्येक गाव का एक मत होगा। ग्रामीण जिले के प्रशासन को चुनेगे। जिलो के प्रशासनो द्वारा प्रातो के प्रशासन चुने जायेगे। बाद मे वे ही राष्ट्रपति को चुनगे जो कार्यपालिका का अध्यक्ष होगा।

—महात्मा गाधी

छठे पचायती राज के त्रस्तराय ढाचे म नीचे का स्तर ग्राम पचायत निश्चित रूप स नीव है। इसलिये मारे ढाचे को शक्ति और सजीवता के लिय ग्राम पचायत की शक्ति सजीवता और उसका लोकतान्त्रिक रूप आवश्यक है। ग्राम पचायत की शक्ति और प्रभावपूर्णता इस बात पर निभर है कि उसके कार्यो म ग्रामीण समुदाय सहयोग करें और बुद्धि एव उत्साह के साथ उनमे रुचि ले। प चायत से नीचे जनता तक जाना आवश्यक है और गाव के सभी वयस्क लोगो की ग्राम सभा बनानी चाहिये। प चायत ग्राम सभा की कार्यकारणी के रूप म काम करे। ग्राम सभा की बैठक कभी कभी यानी तीन माह म होगी और उसम सभी महत्वपूर्ण बातें और बजट पेश किया जायेगा जिस पर न केवल वह विचार करेगी बल्कि उसे स्वीकार करगी। ग्राम प चायतो के चुनाव सर्व सम्मति से होने चाहिये। वहा चुनाव सघष शुरू करने स बडी छीना झपटी होगी।

सातवें प चायती राज के दैनिक कार्यों को राज्य सरकार के काय क्षेत्र स बाहर रखना चाहिये। जब आवश्यक कानून पारित कर दिये जाये तो उनके क्रियान्वियन को एक ऐसी स्वतत्र सस्था के नियन्त्रण मे कर देना चाहिये जसी लोक सेवा आयोग या विश्वविद्यालय अनुदान आयोग होती है। यह वाछनीय होगा कि उनकी सहायता पथप्रदर्शन और देखभाल का काय एक गर सरकारी स्वतत्र सस्था को साप देना चाहिये जिसका अध्ययन प्रशासनिक अधिकारी वर्ग मे से न हो।

—श्री जयप्रकाश नारायण, सोशलिज्म सर्वोदय डेमोक्रेसी का सार पृष्ठ २४८ ५७

५, मन यह बताने की कोशिश की है कि सत्ता न तो समर्पित की जा सकती है और न प्रशासन को विकेन्द्रित किया जा सकता है यदि वतमान राज्य स्तर के नीचे स्वायत्त शासन केन्द्र व सस्थायें न हो और विभिन्न स्तर का सरकारें एक साथ आगिक रूप से न जोड दी जायें ताकि उच्च स्तर की सस्थायें निम्न स्तर से समथन और सत्ता प्राप्त करें और सम्पूर्ण ढांचा देश के वयस्कों का ग्राम सभाओं पर आधारित हों।

हर प्रणाली म बुराइया व दोष होगें। प चायती राज अथवा भागीदारी के लोकतन्त्र म बुराइया होंगी, लेकिन वह प्रणाली अधिक लोकतान्त्रिक होगी और उसके दोषों को ठीक करने मे काफी गुजाइश होगी, क्योंकि वह अधिक लोकतान्त्रिक होगी। बहुत सी बुराइयों को आरम्भ में ही दूर किया जा सकता है यदि चुनाव निर्विरोध हो जायें।

पंचायती राज

अखिल भारतीय पचायत परिषद समझती है कि वर्तमान पचायती राज एक कार्यक्रम है जिसे पाच स्तरीय सरकार के निर्माण की दिशा में प्रथम कदम बनाया जा सकता है। अखिल भारतीय पचायत परिषद इस बात पर जोर देती है कि लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के परिणाम स्वरूप जो सस्थाये बनाई जायेगी उन्हें स्वायत्त सरकार की इकाईयो के रूप में समझना चाहिये और उनके कर्तव्यों व अधिकारो का उसी के अनुसार निश्चय होना चाहिए।

ग्राम ब्लाक व जिला स्तर पर पचायती राज की सस्थाओ को स्वायत्त सरकार की इकाईयो के रूप मे काम करना चाहिए इन सस्थाओ को राज्य सरकार का अ ग नही बनाया जा सकता है यद्यपि वे विकेन्द्रित राज के भाग होते हैं।

फन्डामेन्ट प्रोब्लमस आफ पचायती राज—पृष्ठ—८२

पचायती राज और राज्य सरकार

अखिल भारतीय पचायत परिषद इस विचार के विरुद्ध है कि पचायत राज की सस्थाओ को राज्य सरकार की ऐजेंसियो के रूप म काम करना चाहिए। परिषद का मत है कि चू कि इन सस्थाओ की स्थापना लोकतान्त्रिक ढग से हुई है, उनके भी उसी प्रकार निश्चित कार्य और क्षेत्र

अब जिस प्रश्न पर विचार है वह है कि पचायती राज को किस प्रकार उच्च स्तर पर बढाया जाय।

यह उचित होगा कि नीचे की स्तर की सस्थायें ऊचे स्तर की सस्थाओ को चुनें। इसका अर्थ यह हुआ कि ग्राम सभा पचायत समितियां, पचायत समिति जिला परिषदों, जिला परिषदें राज्य विधान सभा को और राज्य विधान सभायें लोक सभा को चुने, लेकिन बाद म सोचने पर यह प्रक्रिया अवाछनीय लगेगी। इसके विरुद्ध मुख्य आपत्तियां ये होगी—(१) इससे सकीर्णता को प्रोत्साहन मिलेगा और नागरिक और नीचे की सस्थायें अनुभव करेगा कि राज्य व केन्द्र के स्तर पर सस्थाओं के बनाने मे इसका कोई हाथ नही है। (२) चू कि निर्वाचकों की सख्या थोडी होगी, धनी लोगों को उन्हें भ्रष्ट करना आसान होगा।

वर्तमान प्रणाली के बारे में भी ऐसी ही आपत्तियां उठाई जा सकती हैं। लेकिन इसका यह अर्थ नही कि प्रस्तावित प्रणाली के दोषो को दूर करने के उपायो का न ढूढा जाये। इसका हल यह नही कि वर्तमान प्रणाली से चिपका रहा जाये जिसम और भी भारी दोष है।

विधान सभा व लोक सभा के चुनावों के लिये यह एक सुझाव प्रयोग के रूप में रख रहा हूँ।

प्रत्येक ग्राम सभा को ग्राम सभा म दो प्रतिनिधियो को चुनना चाहिये। जिन्होंने निर्वाचक परिषद कहा जा सकता है। उनका चुनाव इस प्रकार किया जाये। ग्राम सभा म नामांकित पत्रो का

होना चाहिए जैसे कि समघ व राज्य रकारो के कार्य सविधान मे दिये गये हैं। जबतक इस लक्ष्य को पूर्णरूप से प्राप्त नही किया जाता है ताकि पचायती राज व राज्य सरकार के बीच के सम्बध के बारे मे दुविधा कम की जासके तब तक प्रत्येक राज्य मे एक स्वतत्र पचायती राज आयोग होना चाहिए जो पचायती राज के मामलो की देख भाल करेगा, और उन्हे स्वायत्त शासन की इकाईयो के रूप मे बनायेगी।

राज्य स्तर पर एक स्वतत्र राज्य पचायत बोर्ड होना चाहिए और एक जिला पचायत बोर्ड जो नीचे की सस्थाओ को सलाह दे और उसका मार्ग दर्शन करे। प्रस्ताव अखिल भारतीय पचायत परिषद के द्वितीय अधिवेशन म पारित।

श्री जयप्रकाश नारायण ने इस सुझाव को अधिक अच्छी तरह स्पष्ट किया है। उन्होने बताया है कि यह बोर्ड राजनीतिक दलो के हस्तक्षेप से दूर होना चाहिए और इसका अध्यक्ष एक अधिकारी हो जो असैनिक सेवा का सदस्य न हो।

मागा जाये और जिन नामो के प्रस्तावक व समथक हो उन्हे एक बोर्ड पर लिख दिया जाये। यदि केवल दो नाम आते हैं तो वे अपने आप प्रतिनिधि चुन समझे जाने चाहिये। इसके बाद बार बार मतदान हो ताकि केवल दो नाम ही रह जायें। प्रत्येक बार कम से कम प्राप्त करने वाले का नाम हटा देना चाहिये। यह साधारण व कम खच की प्रणाली होगी और चू कि ग्राम सभायें बठको का सचालन करती है बजट पास करती हैं, अय निणय करती हैं इसलिये यह प्रक्रिया उनके लिये एक आसान काम हो जायेगी।

पचायत के अध्यक्ष के नेतृत्व मे पूवाभ्यास करने म उन कठिनाइयो को दूर किया जा सकेगा जो पहले उनके सामने आ सकती है।

इसके बाद निर्वाचक परिषद की बठक बुलानी चाहिये और प्रत्येक प्रस्तावित व समथक के नाम पर मत लिये जायें। जो लोग निश्चित मतदान उदाहरण के लिये ६० प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त करें उन्हे उस क्षेत्र से विधान या लोक सभा के लिये उम्मीदवार घोषित कर देना चाहिये।

म लोकतत्र को पूर्ण बनाने के लिये यह आवश्यक समझता हू कि इसकी प्रक्रिया जहा तक सम्भव हो सके मल-जोल पैदा करने वाली हो। इसलिये मैं जोरदार शब्दो म अनुरोध करता हू हर वधानिक व सक्षणिक उपाय द्वारा प्रयत्न किया जाये कि निर्वाचक परिषद प्रत्येक स्थान के लिये एक ही उम्मीदवार खड़ा करे। आखिरकार सख्या कुछ भी हो अन्त में उस निर्वाचन क्षेत्र से एक व्यक्ति ही चुना जायेगा। लोकतात्रिक सिद्धात तक के विरुद्ध कुछ ऐसा कहता है कि जब एक प्रतिनिधि बन जाता है और उसे अपने विरोधियो की भी सेवा करनी चाहिये। यदि निर्वाचक परिषद को समझाया जा सके कि वह एक उम्मीदवार ही खड़ा करे तो अनावश्यक आवेश और धन व शक्ति की बर्बादी को रोका जा सकता है। यदि यह व्यवहारिक न हो तो कुछ मामलो म इस प्रकार चुने गये नामों को निम्न ढग स रखना चाहिये।

पचायती राज के विभिन्न स्तर

पचायती राज के विभिन्न स्तरो के बीच के सम्बन्ध वैसे ही होने चाहिये जैसाकि सरकार की दो इकाईयो के होते हैं। बडे और छोटे का कोई प्रश्न नही होना चाहिये। इन सस्थाओ के बीच निस्सदेह आगिक सम्बन्ध होगा। ऊचे स्तर की सस्थाये नीचे स्तर की सस्थाओ द्वारा ही बनाई जायेगी। ऊचे स्तर की योजनाये मुख्य रूप से निम्न स्तर की योजनाओ का ठोस रूप होगा। निम्न स्तर की योजनाये भी उच्च स्तर की सीमाओ से क्षेत्र का ध्यान रख कर बनाई जायगी।

मेरी समझ से इस प्रश्न पर अस्पष्टता की कोई गुजाइश नही है। यदि तीनो म से हरेक सस्था अपने स्तर पर एक सरकार हो, तो वह एक जैसी महत्वपूर्ण होगी और अपने अपने साधनो से वह सब कुछ कर सकेगी जो उसका उत्तरदायित्व होगा। ग्राम पचायत व अन्य दो सस्थाओ को प्रशासन के सारे अधिकार होने चाहिये जिनके कार्यान्वयन म व योग्य हो। ऐसा कोई कारण नहीं कि जिला परिषद् को केवल सम्पर्क या परामर्शदातृ सस्था बना कर रक्खा

निर्वाचक परिषद द्वारा चुने हुए नामो को सम्बन्धित क्षेत्र की ग्राम सभाओ को भेज दिया जाये। प्रत्येक ग्राम सभा अपनी आम बैठक बुलाये जहा प्रत्येक उम्मीदवार का मत लिया जाना चाहिये। उसके बाद नीचे लिखे दो तरीको म कोई एक अपनाना चाहिए।

जो उम्मीदवार सबसे अधिक मत प्राप्त करे उसे ऐसा व्यक्ति घोषित किया जाये जिसे विशेष ग्राम सभा उच्चतर सभा मे प्रतिनिधि के रूप म भेजना चाहती है। ऐसे सभी व्यक्तियो म उस व्यक्ति को ग्राम सभा का सदस्य घोषित कर देना चाहिए।

दूसरा विकल्प यह है कि ग्राम सभा की आम बैठक मे प्रत्येक उम्मीदवार को जो मत मिले उन्हे लिख लेना चाहिए। इसी प्रकार उसे अन्य ग्राम सभाओ मे भी जो वोट मिले हो उन्हें जोड़ लेना चाहिए। इस प्रकार जिसे सबसे अधिक वोट मिलें उसे उस क्षेत्र का प्रतिनिधि घोषित कर देना चाहिये।

स्पष्ट है कि इस चुनाव प्रणाली म कई वाछित परिणाम निकलते हैं। पहला इससे लोकतन्त्र की इमारत का ऊपरी भाग नीचे के भाग से जुड जाता है। ग्राम सभा को प्रतिष्ठा, शक्ति और महत्व प्राप्त हो जाता है। वह स्थानीय सकीर्णता के दलदल से ऊपर उठ जाती है। दूसरे प्रत्येक वयस्क नागरिक को एक सीधा अवसर प्राप्त होता है कि वह लोकतन्त्र के सबसे ऊचे सगठन के चुनाव मे भागीदार बने। ग्राम सभाओ व निर्वाचक मण्डलो द्वारा ऐसा सम्भव हो जाता है ताकि वह अपने प्रतिनिधियो पर प्रभाव डाल सके। इस प्रकार वोटर के कण पृथक लघु और असहाय कण नहीं रहते हैं बल्कि पत्थर की ठोस ईंटें बन जाते हैं। इस प्रकार जो मकान पत्थर की ईंटो पर बनता है वह बालू के ऊपर बने मकान से भिन्न होता है।

—श्री जयप्रकाशनारायण, गोधालिज्म, डेमाक्रसी पृष्ठ २६७-७०

जाये या पचायत समिति को केवल जिला परिषद का एक कार्यपालिका अ ग बनाकर रक्खा जाये ।

[1] श्री जयप्रकाश नारायण, सेमिनार ओन फ डामेन्टल प्रोब्लम्स आफ पचायती राज—पृष्ठ-४२

ग्राम-सभा

अखिल भारतीय पचायत परिषद ग्राम सभा की शक्ति को बडा महत्व देनी है। यह प्राथमिक समुदाय और मौलिक सस्था है । ग्राम सभा के योगदान पर जोर देते हुये श्री जयप्रकाश नारायणजी कहते हैं —

मुझे शका है कि अभी तक ग्राम सभा के योगदान को पूरी तौर पर नही समझा गया है या शायद हमारे मन में जनता की पहल करने की शक्ति के बारे मे काफी अटकाव है । मेरे विचार से यदि ग्राम सभा को शक्तिशाली नही बनाया जाता है तो पचायती राज अवास्तविक ही रहेगा और विकास कार्यक्रमो मे भी जनता का उत्साह व भागीदारी नही होगी । इसलिए मै आशा करता हू कि इस मन के अटकाव को दूर कर दिया जायेगा और सभा को उचित स्थान दिया जायेगा ।

अखिल भारतीय पचायत परिषद के चौथे अधिवशन मे बोलते हुये स्वर्गीय श्री महताजी ने कहा —

ग्राम सभा के योगदान पर जितना जोर दिया जाये वह कम है । लोकतान्त्रिक विकेन्द्री का पूर्ण महत्व तभी अनुभव किया जा सकेगा जब ग्राम सभा पूरी तौर पर सक्रिय व जिम्मेदार सस्था बन जाती है ।

पचायती राज परसपक्टिव एण्ड प्रोग्राम—पृष्ठ-३१

इस बीच ग्राम सभा को बजट पर बहस करने का और पचायत की उन्नति की रिपोर्ट पर विचार करने का अवसर दिया जाना चाहिए, और वह जो सिफारिशे करे उस पर पचायत पूर्ण तौर पर विचार करे ।

जब कि ग्राम सभा का अ तिम लक्ष्य यह होना चाहिए कि वह अपना वार्षिक बजट बनाये और स्वीकार करे । पचायते अपने बजट तैयार करती हैं । उन्हें सबसे पहले बजट को ग्राम सभाओ के सामने पेश करना चाहिए, जहा उन पर विचार किया जाए, यद्यपि अन्तिम स्वीकृति का प्रश्न उन पर नही छोडा जा सकता है ।

सेमिनार ओन फ डामेन्टल प्रोब्लम्स आफ पचायती राज—पृष्ठ-८४

पचायतो को ग्राम सभा मे पूर्ण विश्वास रखना चाहिये और कर, विकास व निर्माण सम्बन्धी कार्यक्रमो को उसके सामने उसके विचार जानने के लिए पेश किया जाना चाहिए । ग्राम सभा मे कार्य समितिया होनी चाहिए । पच उनके संयोजक हो, और ग्रामसभा के चुने हुये सदस्य उनके सदस्य हो । गाव का चौकीदार ग्रामसभा के अधीन हो ।

[1] सेमिनार ओन फ डामेन्टल प्रोब्लम्स ऑफ पचायती राज पृष्ठ-८४

पंचायतों को ग्रामसभा की कार्यकारिणी के रूप में काम करना चाहिए। इसका चुनाव अप्रत्यक्ष रूप में बिना संघर्ष के होना चाहिए।

यह सम्मेलन पंचायतों, ग्रामीण जनता व सभी रचनात्मक संस्थाओं से अनुरोध करता है कि वह पंचायती राज की संस्थाओं के चुनावों में एकमत प्राप्त करने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए। यह केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारों से भी अनुरोध करता है कि वे ऐसे उचित कदम उठायें ताकि पंचायती राज की संस्थाओं में एकमत से निर्वाचन हो सके। राजनीतिक दलों को पंचायतों के चुनावों से दूर रहना चाहिए। पंचायतों को दलबन्दी व राजनीति से बचाने के लिए यह आवश्यक है कि राजनीतिक दल अपने दल के आधार पर पंचायतों के कोई चुनाव न लड़ें। यह सम्मेलन प्रत्येक राजनीतिक दल से अपील करता है कि वह इस प्रकार का निर्णय करे और उसे कार्यान्वित करे। प्रस्ताव नं०—१ अखिल भारतीय पंचायत परिषद् का तीसरा अधिवेशन।

पंचायतों को आर्थिक प्रशासन के रूप में दृढ़ बनाने के लिए और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें सारा प्रशासन एवं भूमिकर सौंप दिया जाय। इस प्रस्ताव द्वारा अन्य राज्य सरकारों से सिफारिश की जाती है कि वे भी गुजरात की भांति पंचायतों को भूमिकर सौंप दें। प्रस्ताव नं० ५, अखिल भारतीय पंचायत परिषद् का तीसरा अधिवेशन।

अखिल भारतीय पंचायत परिषद पंचायतों के लिये और अधिक अधिकार देने का अनुरोध करता है, और अन्तिम लक्ष्य यह होगा कि वे पटवारी और अन्य ग्राम अधिकारियों के ऊपर पूरा नियंत्रण करें।

पटवारी या ग्राम का हिसाब किताब रखने वाले को सभी दाखिल-खारिज की एक प्रति पंचायत प्रधान के सामने पेश करनी चाहिये। पंचायत को उस दाखिल खारिज के बारे में ग्राम सभा को रिपोर्ट देनी चाहिये, और उचित अधिकारी को उन परिवर्तनों के बारे में सूचित करना चाहिये।

सेमिनार प्राब्लम्स ऑन फंडामेन्टल आफ पंचायती राज पृष्ठ-८४

यह आवश्यक है कि ऐसे सभी अधिकार व कर्तव्य ग्राम पंचायतों को सौंपे जायें जिनसे व गाँव के वास्तविक और एकमात्र केन्द्र बन जायें।

प्रथम अखिल भारतीय पंचायत परिषद सम्मेलन पृष्ठ-३

इस सम्मेलन की राय में एक पंचायत सेवा संगठन बनाया जाये जिसमें अनुभवी और प्रशिक्षित व्यक्ति हों—प्रथम अखिल भारतीय पंचायत परिषद् सम्मेलन-२

गाँव में स्वायत्त शासन का क्या रूप हो, इसके बारे में अखिल भारतीय पंचायत परिषद् के विचारों का और उन्हें स्पष्ट शब्दों में प्रगट करने का जहां तक सम्बन्ध है परिषद् को अभी अपने विचारों को सूत्रबद्ध करना है। हाल ही में आर० के० पाटिल ने विचार करने के लिये इसी

जाये या पचायत समिति को केवल जिला परिषद का एक कार्यपालिका अग बनाकर रक्खा जाये।

' श्री जयप्रकाश नारायण, सेमिनार ओन फडामेटल प्रोब्लम्स श्राफ पचायती राज—पृष्ठ-४२

ग्राम-सभा

अखिल भारतीय पचायत परिषद ग्राम सभा की शक्ति को बडा महत्व देती है। यह प्राथमिक समुदाय और मौलिक सस्था है। ग्राम सभा के योगदान पर जोर देते हुये श्री जयप्रकाश नारायणजी कहते हैं —

मुझे शका है कि अभी तक ग्राम सभा के योगदान को पूरी तौर पर नही समझा गया है या शायद हमारे मन में जनता की पहल करने की शक्ति के बारे मे काफी अटकाव है। मेरे विचार से यदि ग्राम सभा को शक्तिशाली नही बनाया जाता है तो पचायती राज अवास्तविक ही रहेगा और विकास कार्यक्रमो मे भी जनता का उत्साह व भागीदारी नही होगी। इसलिए मै आशा करता हू कि इस मन के अटकाव को दूर कर दिया जायेगा और सभा को उचित स्थान दिया जायेगा।

अखिल भारतीय पचायत परिषद् के चौथे अधिवेशन मे बोलते हुये स्वर्गीय श्री मेहताजी ने कहा —

ग्राम सभा के योगदान पर जितना जोर दिया जाये वह कम है। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का पूर्ण महत्व तभी अनुभव किया जा सकेगा जब ग्राम सभा पूरी तौर पर सक्रिय व जिम्मेदार सस्था बन जाती है।

पचायती राज पर्सपेक्टिव एण्ड प्रोग्राम—पृष्ठ-३१

इस बीच ग्राम सभा को बजट पर बहस करने का और पचायत की उन्नति की रिपोर्ट पर विचार करने का अवसर दिया जाना चाहिए और वह जो सिफारिशें करे उस पर पचायत पूरी तौर पर विचार करे।

जब कि ग्राम सभा का अन्तिम लक्ष्य यह होना चाहिए कि वह अपना वार्षिक बजट बनाये और स्वीकार करे। पचायते अपने बजट तैयार करती हैं। उन्हें सबसे पहले बजट को ग्राम सभाओं के सामने पेश करना चाहिए, जहा उन पर विचार किया जाए, यद्यपि अन्तिम स्वीकृति का प्रश्न उन पर नहीं छोडा जा सकता है।

सेमिनार ओन फडामेटल प्रोब्लम्स श्राफ पचायती राज—पृष्ठ-८४

पचायतो को ग्राम सभा मे पूर्ण विश्वास रखना चाहिये और कर, विकास व निर्माण सम्बन्धी कार्यक्रमो को उसके सामने उसके विचार जानने के लिए पेश किया जाना चाहिए। ग्राम सभा मे कार्य समितिया होनी चाहिए। पच उनके सयोजक हो, और ग्रामसभा के चुने हुये सदस्य उनके सदस्य हो। गाव का चौकीदार ग्रामसभा के अधीन हो।

सेमिनार ओन फडामेटल प्रोब्लम्स ऑफ पचायती राज पृष्ठ-८४

पचायतो को ग्रामसभा की कार्यकारिणी के रूप मे काम करना चाहिए। इसका चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से बिना सघर्ष के होना चाहिए।

यह सम्मेलन पचायतो, ग्रामीण जनता व सभी रचनात्मक सस्थाओ से अनुरोध करता है कि उन्हे पचायती राज की सस्थाओ के चुनावो मे एकमत प्राप्त करने का पूरा प्रयत्न करना चाहिए। । यह केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारो से भी अनुरोध करता है कि वे ऐसे उचित कदम उठाये ताकि पचायती राज की सस्थाओ मे एकमत से निर्वाचन हो सके। राजनीतिक दलो को पचायतो के चुनावो से दूर रहना चाहिए। पचायतो को दलबन्दी व राजनीति से बचाने के लिए यह आवश्यक है कि राजनीतिक दल अपने दल के आधार पर पचायतो के कोई चुनाव न लडे। यह सम्मेलन प्रत्येक राजनीतिक दल से अपील करता है कि वह इस प्रकार का निर्णय करे और उसे कार्यान्वित करे। प्रस्ताव न०—१ अखिल भारतीय पचायत परिषद् का तीसरा अधिवेशन।

पचायतो को आर्थिक प्रशासन के रूप मे दृढ बनाने के लिए और उन्हे आत्मनिर्भर बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हे सारा प्रशासन एव भूमिकर सौप दिया जाय। इस प्रस्ताव द्वारा अन्य राज्य सरकारो से सिफारिश की जाती है कि वे भी गुजरात की भाति पचायतो को भूमिकर सौंप दे। प्रस्ताव न० ५, अखिल भारतीय पचायत परिषद् का तीसरा अधिवेशन।

अखिल भारतीय पचायत परिषद पचायतो के लिये और अधिक अधिकार देने का अनुरोध करता है, और अन्तिम लक्ष्य यह होगा कि वे पटवारी और अन्य ग्राम अधिकारियो के ऊपर पूरा नियन्त्रण करें।

पटवारी या ग्राम का हिसाब किताब रखने वाले को सभी दाखिल-खारिज की एक प्रति पचायत प्रधान के सामने पेश करनी चाहिये। पचायत को उन दाखिल खारिज के बारे मे ग्राम सभा को रिपोर्ट देनी चाहिये, और उचित अधिकारी को उन परिवर्तनो के बारे में सूचित करना चाहिये।

'सेमिनार प्राब्लम्स ओन फन्डामेन्टल आफ पचायती राज पृष्ठ-८४

यह आवश्यक है कि ऐसे सभी अधिकार व कर्तव्य ग्राम पचायतो को सौपे जाये जिनसे व गांव के वास्तविक और एकमात्र केन्द्र बन जाये।

प्रथम अखिल भारतीय पचायत परिषद सम्मेलन पृष्ठ-३

इस सम्मेलन की राय म एक पचायत सेवा सगठन बनाया जाये जिसमें अनुभवी और प्रशिक्षित व्यक्ति हो—प्रथम अखिल भारतीय पचायत परिषद् सम्मेलन-३

गाव में स्वायत शासन का क्या रूप हो, इसके बारे में अखिल भारतीय पचायत परिषद् के विचारो का और उन्हें स्पष्ट शब्दो में प्रगट करने का जहा तक सम्बन्ध है परिषद् को अभी अपने विचारो को सूत्रबद्ध करना है। हाल ही में आर० के० पाटिल ने विचार करने के लिये इसी

विषय पर एक लेख लिखा है। अखिल भारतीय पचायत परिषद् जल्दी ही उस पर विस्तारपूर्वक विचार करने वाली है।

आर्थिक विकेन्द्रीकरण

राजनीतिक विकेन्द्रीकरण के साथ-साथ अखिल भारतीय पचायत परिषद् आर्थिक विकेन्द्रीकरण का भी समर्थन करती है। इसका मत है कि पचायतों को भी अपने कृषि सम्बन्धी उद्योगों को आरम्भ करना चाहिये। इनसे गांव की वित्तीय स्थिति में सुधार होगा और पचायतों के भी आर्थिक साधन दृढ़ बनेंगे। आगे का दृष्टिकोण यह है कि सहकारी समितियां और ग्राम संस्थायें पचायत के नियन्त्रण में लाई जायें ताकि गांव का समाज आत्म निर्भर बने। अखिल भारतीय पचायत परिषद् द्वारा की गई आर्थिक विकेन्द्रीकरण की मांग से यह सुझाव अवश्य भावी बन जाता है। अन्तरिम काल के लिये राय यह है कि सहकारी समितियां व अन्य ग्रामीण संस्थायें ग्राम पचायतों को उचित महत्व दें और सबको मिल जुलकर काम करना चाहिये। भूमि जैसे उत्पादन के साधनों को ग्राम समाज के स्वामित्व में लाना चाहिये।

अखिल भारतीय पचायत परिषद की राय है कि आर्थिक विकेन्द्रीकरण राजनीतिक विकेन्द्रीकरण के साथ साथ चलना चाहिए। आज की परिस्थितियां विकेन्द्रित आर्थिक व्यवस्था की कुछ आवश्यक बातों व शर्तों के बारे में श्री जयप्रकाशनारायण ने बताया है। उनके विचार से केवल खादी और ग्राम उद्योग पर ही अधिक बल देने से हम बहुत आगे नहीं जा सकते। हमें इस विषय पर स्पष्ट चिन्तन का विकास करना चाहिये। ६

६—प्रथम, यह स्पष्ट है कि ऐसी आर्थिक व्यवस्थायें छोटी मशीनों व श्रम प्रधानता के आधार पर होनी चाहियें। साथ ही साथ यह भी स्पष्ट है कि छोटी मशीन को उन्नत बनाने के लिये लगातार व सुनियोजित प्रयास होते रहने चाहिये ताकि उसकी कीमत को अधिक बढ़ाये बिना उसकी निपुणता और उत्पादन शक्ति में वृद्धि होती रहे। इसके लिये आवश्यक खोज की योजना बनाई जाय और उसे प्रोत्साहन दिया जाय। जहां कहीं आवश्यक हो और प्राप्त हो सके वहां बिजली का प्रयोग करना चाहिये। लेकिन आर्थिक व्यवस्था की तसवीर हमेशा सामने रहनी चाहिये ताकि जहां तक सम्भव हो कीमत व उत्पादन रोजगार और पदार्थों के उपयोग के बीच असतुलन पैदा न हो जाय।

द्वितीय, एक विकेन्द्रित आर्थिक व्यवस्था का उद्देश्य यह होना चाहिये कि स्थानीय व प्रादेशिक आवश्यकताओं के अनुकूल स्थानीय व प्रादेशिक साधनों का मानव या पदार्थ के रूप में ही पूरा-पूरा प्रयोग किया जाय। इस वास्ते प्रादेशिक सर्वेक्षण और नियोजन आवश्यक होगा। इसके आगे यह भी मानना पड़ेगा कि विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन और उपयोग के विभिन्न क्षेत्रों को आर्थिक इकाइयां के रूप में बनाना होगा ताकि ब्लाक व क्षेत्रीय उद्योग हों, दूसरे जिला, राज्य व सघीय उद्योग हों। राज्य के कुछ और सघ के सभी उद्योग बड़े पैमाने पर हों। इसका यह अर्थ नहीं कि एक क्षेत्र की बचत दूसरे क्षेत्र की बचत से परिवर्तित नहीं की जायेगी। लेकिन इसका यह अर्थ अवश्य है कि आमतौर पर हर प्रकार के उद्योगों के लिये सम्बन्धित क्षेत्र भौगोलिक क्षेत्र होंगे जिनके अन्तर्गत वह

मै अनुभव करता हूँ कि आर्थिक विकेन्द्रीकरण के बिना राजनीतिक विकेन्द्रीकरण सभव नहीं है। मेरे विचार से यह स्पष्ट रूप से अनुभव नहो किया जा सकता। यह बताना चाहिये कि राजनीतिक रूप से अनुभव नहीं किया जा सकता। यह बताना चाहिये कि राजनीतिक रूप से स्वायत शासित इकाईया किस प्रकार आर्थिक रूप से स्वायत सरकार का रूप धारण कर लेगी। यह पूर्ण रूप से करना सम्भव है। यदि नहो तो किस सीमा तक और कैसे यह किया जा सकता है? यदि इन प्रश्नो के हल मे विलम्ब किया जायेगा तो इसका अर्थ पचायती राज को प्रभावहीन करना होगा।

श्री जयप्रकाश नारायण, सेमिनार फडामेन्टल आफ पचायती राज—२६

उद्योग होगा। यह स्पष्ट है कि उपयुक्त आर्थिक तरीके निकालने पड़ेंगे ताकि लघु स्तर से औद्योगीकरण के लिये सुविधा हो और जो अधिक महत्वपूर्ण बात है वह यह है कि आर्थिक व्यवस्था के इस भाग की बड़े पमाने के केन्द्रित उद्योगो मे रक्षा करनी होगी ताकि यह आर्थिक व्यवस्था अच्छी तरह विकास कर सके और अपने परो पर खड़ा होने वाला बने।

तीसरे जन शक्ति और भूमि के अनुपात की दृष्टि से और जन सख्या की वृद्धि का ध्यान में रखने से गाव की आबादी को कृषि के विकास के बावजूद धीरे धीरे दरिद्रता का सामना करना पड़ेगा यदि वह पूरी तौर पर भूमि पर ही निभर रहती है। इसलिये उद्योगीकरण जिसका वर्णन ऊपर किया गया है कृषि के साथ मिला जुला होना चाहिये ताकि प्रत्येक गाव या ग्राम समूह को कृषि औद्योगिक समाज के रूप मे विकसित किया जा सके। यहा पर भूमि उद्योग का अर्थ केवल उन उद्योगो से नहीं है जिनमे कृषि से पैदावार की गई वस्तुओ को सवारा जाता है। इसका अर्थ है कि कृषि और उद्योगो में वास्तविक मेल-जोल बनाया जाय। उदाहरण के लिये कृषि उद्योगिक समाज मे केवल फल सब्जिया, गल्ला रूई ही पैदा करेगा बल्कि रेडियो, साइकिल के पुर्जे, छोटी छोटी मशीनें बिजली का सामान भी पैदा करेगा ऐसे विकास से नगर और गाव के बीच का अतर भी कम हो सकेगा और नगरीकरण की बुराइयों को दूर किया जा सकेगा।

चौथे यह स्पष्ट है कि विकेन्द्रित उद्योगो व व्यवसाय का सगठनात्मक रूप भी केन्द्रीय खण्ड से भिन्न होना चाहिये। वह निजी उद्योगो मे हो या सरकारी उद्योगो में, विकेन्द्रित रूप अधिकतर रूप से सहकारी ऐसा होगा इसमे केन्द्रीय खण्ड या आर्थिक समानता होगी—चाहे निजी हो या सरकारी।

पाचवा, पचायती राज की राजनीतिक सस्थाओं को इस आर्थिक विकास मे महत्वपूर्ण योगदान करना पड़ेगा। समस्या यह है कि यह सब कैसे होगा।

मै कुछ अन्य विचारों को पेश करके समाप्त करना चाहूगा। मै पहले यह स्पष्ट करना चाहूँगा कि उत्पादन प्राचीन तरीकों की रक्षा करना मेरा मतलब नहीं है। मेरे उद्देश्य से आधुनिक और प्राचीन के बीच बहस अप्रासगिक है। वास्तव मे मैं जो सुझाव रख रहा हूँ, वह सबसे अधिक

पंचायती राज का भविष्य

पचायतीराज के विकास मे अखिल भारतीय पचायत परिषद को पूर्ण विश्वास है। भारत की राज-व्यवस्था का आधार निश्चित रूप से पचायती राज ही होगा। लेकिन परिषद यह भी जानती है कि हमारे मार्ग मे कौन सी कठिनाइया हैं। पचायती राज के स्वरूप के बारे म जनता को अच्छी तरह प्रशिक्षित बनाना है। उसे यह भी सिखाना है कि पचायती राज की सस्थाओ को उचित रूप से किस प्रकार चलाया जाता है। एक दूसरा महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि भूमि सुधारो को किस प्रकार कार्यान्वित किया जाय और ग्राम की आर्थिक-प्रशासनिक व्यवस्था मे परिवतन कैसे किया जाये। इसके अतिरिक्त देश के राजनीतिक नेताओ एव प्रमुख लोगो का पचायती राज के प्रति जो उदासीनता का दृष्टिकोण है उसे बदलने का भी प्रश्न है। दूसरी बडी कठिनाई इन सस्थाओ के प्रति सरकारो के दृष्टिकोण की है।

आधुनिक अर्थ व्यवस्था है। वसी अर्थ व्यवस्था न कहीं रही और न कहीं है। जिसकी रचना म विज्ञान व समाज विज्ञान की सबसे अधिक आवश्यकता होगी। दूसरे शब्दो म एक नवीन नवीन टक्नोलौजी और साथ-साथ मे एक नवीन सामाजिक आर्थिक टक्नोलौजी पदा करनी होगी। यह वह विकेन्द्रीकरण नहीं है जो पश्चिम या जापान की सबसे अधिक केन्द्रित अर्थ व्यवस्था म पाया जाता है। मेरे विचार से अर्थ व्यवस्था का प्रभावपूर्ण रूप एक ऐसा विकेन्द्रीकरण है जिसमे केवल उतना विकेन्द्रकरण हो जिसे अलग नहीं किया जा सकता है। दोनो के बीच म कुछ सतुलन आवश्यक है, लकिन निस्सन्देह विकेन्द्रित खण्ड केन्द्रित खण्ड का पूरक मात्र नहीं होगा।

दूसरे, यह याद रखना आवश्यक है कि विकेन्द्रित आर्थिक व्यवस्था जिसका प्रतिपादन मैं कर रहा हू केवल इसलिये वाञ्छनीय नहीं है कि वह लोकतांत्रिक होगी बल्कि इसलिये कि इसके द्वारा जनता को तुरन्त लाभ मिलगा। ऐसा इसलिये होगा क्योंकि एक बडे पमाने पर लोगो को रोजगार मिलेगा। और जो सामान पदा होगा वह बडे पमाने पर बाटा जा सकगा और साधारण उपभोक्ता को तुरन्त ही उसकी आवश्यकता की सामग्री मिलगी। केन्द्रित खण्ड म याद रखना चाहिये उद्योगीकरण का लाभ धीरे धीरे ऊपर स नीचे की दिशा में आयगा। पश्चिम मे लगभग सौ बरस म लाभ साधारण व्यक्ति तक पहुँचा स्पष्ट है कि भारत जस गरीब देश म जहां कम स कम आवश्यकता की वस्तुओ का मिलना कठिन है और जहां बेरोजगारी या कम रोजगारी इतनी व्यापक मात्रा म फली हुई है।' एक विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था केन्द्रित अर्थ व्यवस्था नहीं एक सबसे बडी आवश्यकता है बशर्ते आर्थिक विकास का उद्देश्य लोक-कल्याण हो।

तीसरे, ऊपर बताई गई आर्थिक व्यवस्था पदा करने के लिये ग्रामवासियों की शिक्षा म आमूल चूल परिवतन करना होगा। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये ग्रामवासियो की शिक्षा अधिकाश रूप से पुस्तक स पृथक होनी चाहिये। यह व्यवहारिक व तकनीकी हो जिसमे कृषि तकनीकियों की शिक्षा पर विशेष जोर दिया गया हो।

शिक्षा प्रणाली मे इस सुधार को शोध और नियोजन का एक अग होना चाहिये। इसके

यह छिपी हुई बात नही है कि देश मे एक प्रभावशाली जनमत है जिससे सिद्धान्त की दृष्टि से दक्षिणी या मध्य वर्ग में नही बाटा जा सकता है। वह विकेन्द्रीकरण म विश्वास नही करता है। मुख्य कारण दो बताये जाते हैं (१) जनता स्वायत्त शासन के लिये योग्य नही है (२) सत्ता और सरकार के विकेन्द्रीकरण मे राष्ट्र छिन भिन्न हो जायेगा।

श्री जयप्रकाशनारायण, पचायती राज एक दर्शन पृष्ठ–२८

अतिरिक्त ग्रामीणो की शिक्षा के अन्तगत बड पैमाने पर वयस्को को व्यावहारिक शिक्षा दी जाय। इस प्रकार की शिक्षा एक दूसर कठिन प्रश्न का उत्तर देगी कि विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था के विकास के लिये व्यक्ति कहा स लाये जायें ?

अन्त म आज देश की साधारण परिस्थिति म जब बडी बडी योजनायें फैशन बन गई है जो विदेशो की भारी सहायता पर निभर होती हैं यह स्वाभाविक है कि केन्द्र उन तमाम साधनो पर एक मात्र अधिकार रख जिन्हे राज्यो मे बाटा जा सकता है। यह स्पष्ट है कि इस स्थिति मे केन्द्र बहुत शक्तिशाली हो जायेगा और सब नीचे की सस्थायें भिखारी के स्तर पर आ जायेंगी। लोकतन्त्र के विकास के लिय यह भयकर बात होगी लेकिन यहा विदेशी सहायता के हमार आर्थिक विकास पर ही नही बल्कि राष्ट्रीय जीवन पर पडन वाल प्रभाव पर बहस नही करना है। इतना कहना पर्याप्त होगा कि विकेन्द्रित आर्थिक विकास को विदेशी सहायता पर केन्द्रित खण्ड की अपेक्षा कम निभर रहना होगा। इसके तीन मुख्य कारण हैं। (१) स्वेच्छिक श्रम का तत्व अधिक होगा। (२) छोटी छोटी बचत की रकमो का अधिक स अधिक प्रयोग किया जायेगा। (३) यातायात ऊपरी खर्च और अन्य सामाजिक खर्च भी बहुत कम हो तो। इसलिये इस अथ मे विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था अधिक लोकतान्त्रिक होगी। (श्री जयप्रकाश नारायण सोशलिज्म सर्वोदय एण्ड डमोक्रेसी।)

